प्रकाशकीय........

'अहिसा परमो धर्म' 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' अहिसा और क्षमा जैन धर्म की एक बुनियादी नींव है । हम कह सकते है कि मैत्री इन दोनो की माता है । मैत्रीभावना से हिसा, क्रोध, वैर इत्यादि दोषो का नाश होकर अहिसा–क्षमा की प्राप्ति होती है। क्षमा से मैत्रीभाव और सपुष्ट होता है । मैत्रीभावना पनपने से प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्यभावना सहज बनने से आत्मरथ साधनापथ पर गतिशील बनता है ।

हमारी आत्मा को मैत्रीभावना से भावित करने के लिये आवश्यक विचार-धाराओं एव व्यवहार पद्धतिओं का पूज्य मुनिराज श्री **अभयशेखर विजयजी** महाराज ने अनेक प्राचीन–अर्वाचीन दृष्टान्त–उपमा–तर्कों से विशद विवेचन किया है इस पुस्तक में । अहोभाग्य है हमारे श्री सागली सघ का, कि अत्यत जीवनोपयोगी तथा साधना–उपयोगी इस प्रकाशन का लाभ मिल रहा है ।

हलदी के पीले रग से रगीन सागली शहर में न ही मात्र सुवर्ण की चमक है, अपितु गुड का माधुर्य भी है । व्यापार और राजकीय क्षेत्र में तो वह आगे है ही, धार्मिकक्षेत्र में भी उसकी प्रगति सराहनीय है ।

विक्रम सवत् २०४३ में वर्धमानतपोनिधि सकलसघहितैषी पूज्यपाद आचार्यदेवेश श्रीमद्विजय **भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराजा** एव पूज्य आचार्य **श्री वि जयघोष सू महाराज** आदि पू महात्माओं की पावन निश्रा में समस्त महाराष्ट्र के युवकों के लिये ग्रीष्मकालीन धार्मिक शिविर हुई, जो सघ के अग्रणी तथा अन्य भाईयोके भगीरथ प्रयास से भव्यतया सपन्न हुई । मान लो कि इसकी फलश्रुति न हो, हमें सहजानदी पूज्यपाद **आ. श्री वि. धर्मजित् सू म सा** आदि १२ महात्माओं के भव्य चातुर्मास का लाभ मीला जिस में सूरिदेव ने श्रीसूरिमन्त्र के पच प्रस्थान की भव्य आराधना की तथा सघ में भी सामुदायिक सिद्धितप हुऍ । आसो सुद १० दशहरा के मगलदिन से महान् उपधानतप का प्रारभ हुआ जिस में १० वर्ष के बच्चों ने, युवकों ने तथा वृद्धों ने भी आराधना करके मोक्षमाला परिधान की ।

हसा । तू झील

विक्रम सवत् २०४४ में महावद सातम के दिन, न्यायविशारद पूज्यपाद **आ भग. श्री वि भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराजा** तथा उनके विशाल शिष्य परिवार की पावन निश्रा में दक्षिण शिवाजीनगर स्थित नूतन जिनालय में देवाधिदेव श्री **महावीर भगवान** आदि जिनबिबों की भव्य अजनशलाका–प्रतिष्ठा हुई ।

विक्रमसवत् २०४५ में महासुद त्रयोदशी के शुभदिन को जवाहर सोसायटी में निर्मित नूतन शिखरबध जिनालय में देवाधिदेव **श्री धर्मनाथ भगवान्** आदि नयनरम्य जिनबिम्बों की अजनशलाका–प्रतिष्ठा का भव्य महोत्सव प्रभुभक्ति रसिक पूज्यपाद आचार्यदेव **श्री वि जयशेखरसूरीश्वरजी महाराज** आदि की पावन निश्रा में हुआ । यही महोत्सव में मलाडनिवासी मुमुक्षु युवक **अतुलभाई** ने चारित्रजीवन का स्वीकार किया । सागली नगर के भी श्रीयुतचापशीभाई, दिपकभाई, मोलभाई सघवी, अभय इत्यादि मुमुक्षओं ने चारित्रजीवन का स्वीकार करके सघ की शान बढायी है । अनेक मुमुक्षु बहिनों ने यहॉ से दीक्षित बनकर सागली शहर को गौरवान्वित किया है ।

जिस भीष्मतप के तपस्वीका उल्लेख पिछले सैकडों वर्ष के इतिहासमें देखने नहीं मिला, ऐसे श्री गुणरत्नसवत्सर तप की महान् आराधना करनेवाले भव्य तपस्वी पूज्य मुनिराज **श्री सोमतिलक विजयजी महाराज,** इस महान् तप के तेरहवे महीने में दूसरी बार के तेरह उपवास के पच्चक्खाण में, इस सागली नगर में ही समाधिपूर्वक दिवगत हुए ।

सागली सघ का सुवर्णकाल ही न चल रहा हो । ऐसे सवत् २०४५ श्री सूरिमन्त्र आराधक पूज्यपाद आचार्य देव **श्री वि. जयशेखरसूरीश्वरजी** आदि १० महात्माओं का आराधनामय चातुर्मास सागली नगर में हुआ। ज्यपाद आचार्यश्री ने श्री सूरिमन्त्र के पचप्रस्थान की एव श्रीसघने समुदायमें धर्मचक्रतप–अट्ठाई आदि की आराधना की । इस चातुर्मास में पूज्य मुनिराज **श्री अभयशेखरविजयजी महाराजने** मैत्रीभाव आदि विषयों पर अपनी तार्किक शैली मे धारदार प्रवचन दिये जो सभी श्रोताओ को अत्यत कर्णप्रिय और उपकारक बनें । मैत्रीभावविषय में गुजराती में लिखी गई आपकी किताब **'हसा। तु झील मैत्री सरोवरमां'** को लोगों का अत्यधिक आवकार मिला । अत उसकी हिन्दी आवृत्ति प्रकाशित करने का निर्णय हुआ । उसके प्रकाशन का

लाभ हमें मीलें ऐसी हमारी प्रार्थना को स्वीकृति देकर पूज्य गुरुदेवो ने महान् अनुग्रह किया है । हमारे सागली नगर में, देवाधिदेव **श्री अमीझरा पार्श्वनाथ** प्रभु का सप्रतिमहाराजकालीन नयनरम्य बिम्ब से मडित श्री अमीझरापार्श्वनाथ जिनालय तीर्थसम है । तथा, गणपतिपेट में **श्री गोडी पार्श्वनाथ प्रभु** का जिनालय, श्वे मूर्त्तिपूजक जैन बोर्डींग में **श्री सुपार्श्वनाथ** प्रभु का जिनालय, दक्षिण शिवाजी नगर में, **श्री महावीरस्वामी जिनालय** तथा जवाहर सोसायटी में **श्री धर्मनाथ जिनमदिर** शहर की शोभा में अत्यधिक वृद्धि कर रहे है । आयबिलशाला और जैन भोजनशाला की भी सुन्दर सुविधा सघ की ओर से है । श्रीलब्धिसूरि जैन पाठशाला बालकों का सुन्दर सूत्रज्ञान दे रही है ।

पिछले तीन-साल के उपरोक्त जयजयकार में श्री सघ के सरलस्वभावी उदारमना प्रमुख श्री **विपीनभाई शाह** आदि ट्रस्टीगण का परिश्रम सराहनीय है । हमारे सघ के भूतपूर्व प्रमुख **श्रीरतनशी भाई, श्री आर. टी. शाह** आदि ने भी श्री सघ को प्रशस्य मार्गदर्शन दिया है ।

इस पुस्तक के प्रकाशन में सघ के उदारदिल सदस्यो ने तथा सोलापूर आदि शहर के श्रुतप्रेमी श्रावकोंने भी सुन्दर सहयोग दिया है, सभी को धन्यवाद। इनकी नामावलि अन्यत्र दी गई है ।

मनोविश्लेषण करनेवाली इस सुदर किताब के लेखक विद्वान् मुनिराज श्री **अभयशेखर विजयजी,** इस निबध को हिन्दी में रूपान्तरित करनेवाले विद्वान **मुनिराज श्री रश्मिरत्नविजयजी,** सुदर सपादन करनेवाले तपस्वी **मुनिराज श्री दिव्यरत्न विजयजी तथा विद्वान मुनिराजश्री अजितशेखर विजयजी एवं स्वाध्याय सुस्थित मुनिराजश्री विमलबोधिविजयजी** के चरणों में कोटिश वदना।

पुस्तक का सुन्दर आफसेट कम्प्युटर मुद्रण करनेवाले **ह्रीँकार कम्प्यु प्रिन्टर्स** के श्री **हेमल वि. शाह** आदि को हम धन्यवाद देते है ।

इस पुस्तक का पुन पुन वाचन करने से पाठक को अवश्य जीवन के अनेक नये आयामों की और उसके द्वारा जीवन में स्वस्थता-शान्ति-समाधि लोकप्रियता आदि की प्राप्ति होगी ऐसी श्रद्धा के साथ .

श्री श्वेताबर मूर्त्तिपूजक जैन सघ

सागली

हसा । तू झील

प्राक्कथन

मानसरोवर तो वही है मगर हस के लिये वह मोतियों का खजाना है तो बगुलों के लिये मच्छलियों का। इसी तरह हसदृष्टिवाले जीवों के लिये यह समूचा जैवविश्व मैत्री का सरोवर है तो बगुले की दृष्टिवालो के लिये शत्रुता का सरोवर है। चन्द्रमा में सौम्यता, सागर में गम्भीरता और गुलाब में सौन्दर्य का दर्शन करना हस दृष्टि है जबकि इन्हीं तीनों में अनुक्रम से कलक, खारापन, और कॉटे देखना यह बगुले की दृष्टि है ।

ठीक, उसी तरह प्रत्येक जीवों में मैत्री देखना हसदृष्टि है और शत्रुता देखनी यह बगुले की दृष्टि है। गुलाब में काटों का ही जो दर्शन करता है उस इसान को बदकिस्मत कहा जायेगा चूकि वह उसकी सुदरता और सुरभि को पा नहीं सकेगा गुलाब को उससे एक पाई भर की भी हानि नहीं है ।

इसी तरह जीवों को जो शत्रु मानता है, नुकसान उसी को है ।

इसलिये तो ज्ञानीभगवत कहते हैं → जड का राग तोडो और विश्व की तमाम जीवसृष्टि के साथ मैत्री जोडो। सभी जीवों को मित्र रूप से देखो शत्रुरूप से किसी को भी नहीं ।

फिर देखो दु खनाश कितना सरल बनता है। और सुखप्राप्ति कितनी सहज हो जाती है। जीवो के साथ शत्रुता को घटा दे और मित्रता को जमने दे ऐसी अनेक विचारसरणियों एव आचारपद्धतियों का इस निबध में आशिक–महत्त्वपूर्ण दिग्दर्शन दिया गया है ।

पाठक को क्षणिक और तुच्छ आनद मिलता रहे ऐसे तुच्छ आशय से लिखी हुई यह कोई रोचक नवलकथा नहीं है, और न ही यह कोई दब्बर के तहाडों से और 007 की स्टेनगनो से गूजती हुई डिटेक्टीव थ्रीलर।

यह तो शक्य इतना जीवन में अमल कर पाठक चिरकालीन (यावत् शाश्वत) और सात्त्विक आनद लूट सके, तदर्थ लिखी गई विचारधारा। अत नोवेल की तरह one sitting में पूरी कर रख देना यह इस मनोविज्ञान प्रधान पुस्तक को न्याय देना नही कहलाता है, दुबारा और तिबारा और बारबार इस पुस्तक को

इसमें कही हुई बातों को यदि जीवन में उतार दी जाय तो लेखक को आशा ही नहीं, अपितु सबल विश्वास भी है कि पाठक का मानसपरिवर्तन हो जायेगा उसके जीवन की कायापलट हो जायेगी वह अवश्यमेव सात्त्विक आनदकी लहरों में अपने आपको मग्न पायेगा ।

परिस्थितियों से मजबूर होकर जो व्यक्ति पूरी पुस्तक न भी पढ सकता हो तो वैसे जिज्ञासुव्यक्ति से भी अनुरोध है कि वह हर दिन अपनी अनुकूलता के मुताबिक एक-एक प्रकरण ध्यान से पढ़े ।

जीवों के साथ दुश्मनी सिर्फ विश्वयुद्धों में ही नहीं, अपितु अनादिकाल से इस जीव के साथ जुडा हुआ रोग है। उस रोग की पराकाष्ठा ही युद्ध के भीषण मानवसहार का रूप लेती है । वैधक का नियम है कि पूराने रोग का सफाया भारी डोज लेने से नहीं होता है परतु, रोज थोडी-थोडी मात्रा में लम्वे समय तक जव कोई औषधि ली जाती है तव जाकर कहीं उसके जमे हुए पॉव उखड़ते है, उसकी जड़े हिलने लगती है ।

एक ही साथ गिरने वाला हजारों गेलन पानी, पत्थर को घिस कर जो अमिट रेखाऐं उभार नहीं सकता वह भगीरथ काम निरतर धीरे-धीरे गिरने वाली पानी की एक पतली-सी धार कर दिखाती है ।

अभी-अभी कुछ साल पहिले प्रसिद्ध धाराशास्त्री श्री राम जेठमलानी तत्कालीन प्रधानमत्री श्री राजीव गॉधी को हर दिन १०-१२ जाहिर प्रश्न पूछते थे और लगभग हर एक सामाजिक पत्र उसे एक आकर्षक समाचार रूप से प्रिन्ट करता था । फेरफेक्स प्रकरण, बोफोर्स की तोपे, जर्मन सवमरीनें, स्नाम प्रोगेटी आदि विवादास्पद विषयों को लेकर प्रश्न पूछनेका उनका यह सिलसिला लगभग एक ` तक जारी रहा। मतलब कि उन्होने लगभग ३०० जितने प्रश्न पूछे होंगे । ोने १०-१२ प्रश्न पूछने के बदले एक ही साथ ३०० प्रश्न पूछ लिये शायद ही लोकमानस पर उसकी देशव्यापी गहरी असर पडती। चूंकि पहिला स्का। यह होता कि कोई अखवार इतनी लबी महाभारत-सी प्रश्नावली को अपनी लम में स्थान ही नहीं देता। और दूसरा फियास्का यह होता कि यदि कोई अगडम्-बगडम् अखवार उसे प्रिन्ट भी कर देता तो जनता का ध्यान उस ओर इतना नहीं खिचता। और यदि कोई कामधन्धा बिना का या बेरोजगार ग्रेज्युएट उसे पढ़ भी लेता तो भी जिस आतुरता और रस के साथ १०-१२ पढा जाता था वह आतुरता और रस तो नही होता। थोडा पढने के बाद वोर भी होते ही । अत

हसा । तू झील

रोज-ब-रोज उत्कण्ठा से थोडा-थोडा पढने के कारण जो हेमरींग मनमस्तिष्क पर हुई वह भी न होती ।

प्रस्तुत पुस्तक को भी इसी तरह यदि थोडा-थोडा पढकर अपने विपरीत सस्कार पर हेमरींग किया जाएगा तो निश्चित ही स्वप्न में भी कल्पना न की जाय वैसा लाभ अवश्यमेव पाठक को प्राप्त होगा, ऐसी मुझे श्रद्धा है ।

इस पुस्तक में लिखी हुई कितनी ही बातें पूज्य गुरुजनों के पास सुनी हुई है, तो कितनी ही बाते कहीं से पढी हुई है तो कितनी ही बातें स्वकीय अनुभवों के ऊपर खडी विचारधारा के रूप है ।

पूज्यपाद स्व दादा गुरुदेव आचार्यभगवत **श्री वि. धर्मजित् सूरीश्वरजी महाराजा** के सान्निध्य में रहने के दौरान उनकी सलाह मुजब उन-उन प्रसगों में उस प्रकार बर्तन करने से जो लाभ अनुभूतिगम्य हुआ, एव पूज्यश्री की थोडी-बहुत जो भी विचारधाराऐं जानने को मिली, उसका भी इन विचारधाराओं में महत्त्वपूर्ण भाग है, *पूज्यपाद दादागुरुदेवश्री कहते कि "किसी की भी भूल और अपराध देखकर दिल में द्वेष या तिरस्कार होने लगे तब यह सोचना कि उसके स्थान पर यदि मै होता तो क्या करता?"*

आज जो कठोर और निष्ठुर दिखता है वही जीव शायद कल उठकर अपने से पहिले भी मोक्ष में चला जाय। वह भी तो सिद्धावस्था की रोमटीरीयल है और उसको भी मै सिद्धरूपमें नमस्कार करता हूँ फिर उस पर दुर्भाव क्यो?

"यह हीरे की कच्ची रफ है" ऐसा जाननेवाला जौहरी उस रफ को पॉव तले रौदता नहीं है चाहे उस रफ में उस वक्त कितने ही डाघ-धब्बे या ऊबडखावडपन भी क्यो न नजर आता हो क्योकि वह उस रफ को हीरे की नजरो से देखता है" ।

किसी भी जीव में 'आज चाहे कितना दोष क्यो न दिखते हो आखिर वह भी तो सिद्धात्मा है उसमें भी केवलज्ञानादि प्रकृष्टगुणों का खजाना छुपा पडा है, तो क्यों उस पर द्वेष या तिरस्कार बरसाया जाय? अत चलिये हम हमारे आत्माराम को कहे

※ हंसा ! तू झील मैत्री सरोवर में !※

इनके प्रति मै कृतज्ञ हूँ.......

सुविशुद्धब्रह्मचारी सिद्धान्तमहोदधि कर्मसाहित्यनिष्णात स्व० पूज्यपाद आचार्य भगवत **श्री वि. प्रेमसूरीश्वरजी महाराज,**

सहस्रों गुमराह युवानो के राहबर, मुझे सयमजीवन की भेंट करनेवाले वर्धमान तपोनिधि पूज्यपाद आचार्यदेवेश **श्री वि. भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराज,**

अध्यात्मरसिक कर्मसाहित्यनिपुणमति श्री सूरिमन्त्रपचप्रस्थानाराधक पूज्यपाद स्व० आचार्यदेव **श्री वि. धर्मजितसूरीश्वरजी महाराज,**

श्री सूरिमन्त्रपचप्रस्थानाराधक प्रभुभक्तिरसिक पूज्यपाद आचार्यवर्य गुरुदेव **श्री वि. जयशेखरसूरीश्वरजी महाराज...............**

सर्वजीवों के प्रति मैत्रीभाव से सपन्न यह सुविहित गुरुपरपरा एव,

आगम–छेदशास्त्रों के प्रखर विद्वान् सिद्धान्तदिवाकर पूज्यपाद आचार्यदेव **श्री वि. जयघोषसूरीश्वरजी महाराज,** जिन्होंने स्वकीय शास्त्रपरिकर्मित प्रज्ञा से, गुजराती में लिखे मूल निबन्ध को सशोधित किया है

तपस्वी मुनिराज **श्री दिव्यरत्न विजयजी** एव विद्वद्वर्य मुनिराज **श्री अजितशेखर विजयजी...** जिन्होने पुस्तक को सुन्दर सपादन से सपन्न बनाया है

सहायगुणसपन्न सहवर्त्ती सर्व मुनि भगवत ।

और.....

युवजनप्रतिबोधक शासनप्रभावक पूज्यपाद आचार्यदेव **श्री वि. गुणरत्नसूरीश्वरजी महाराज** के विद्वान शिष्यरत्न मुनिराज **श्री रश्मिरत्न विजयजी.......** जिन्होने अपना स्वकीय कार्य समझकर बडे उत्साह एव उमग से अपनी पूरी समग्रता से, गुर्जरगिरानिबद्ध इस निबन्ध को हिन्दी भाषा में परिवर्त्तित किया है । हॉ, उन्होंने मात्र भाषान्तर नहीं किया है, अपितु गुजराती मे मेरी लिखी हुई बातों का भाव पकडकर अपनी साहित्यिक, रोचक भाषा में प्रस्तुत किये है और सारे लेख के रूपरग बदल दिये है

अन्त में, इस सारे निबन्ध को पूर्ण चिन्तन मनन के साथ पढा जाय ऐसी अपेक्षा सह

मुनि अभयशेखर विजय

हसा ।

अनुवादक की ओर से......

चमत्कार हुआ मेरे साथ।।

एक पत्र आया था अहमदावाद से उसमें सिर्फ गालियाँ ही भरी हुई थी । उस वक्त मैं "हसा । तु झील मैत्री सरोवरमां" के कुछ प्रकरणों का अनुवाद कर रहा था । इसी दौरान के और पत्र आया सौराष्ट्र से नाम लिखा हुआ नहीं था मगर मैं उस व्यक्तिको पहिचान गया । थोडा-सा अचरज हुआ । ऐसा प्रतिष्ठित व्यक्ति ऐसी हीन भाषा लिख सकता है?

मन में हुआ मैं भी उसे कुछ लिखु अनुवाद का कार्य अपनी गति से चल रहा था। योगानुयोग उसमें इसी विषय को लेकर काफी मनोवैज्ञानिक ढग से "ऐसी परिस्थिति आ पडे तब क्या करना चाहिये?" मार्गदर्शन दिया हुआ था । अब्राहिम लिकन के अपनी निजी जीवन में घटित एक घटना का जिक्र था ।

मैंने पत्र का उत्तर देना छोड दिया बात वहीं खत्म हो गई । वेचारे प्रेषक की मानसिक घोर यातना कल्पना कर सकते है... "मैंने जिसको गालीगलौज-भरा पत्र दिया । वह उसे मिला या नहीं? पोस्ट की दुर्व्यवस्था के कारण कहीं गुम ते नही हो गया?" ऐसे वैसे अनेक विचारों में वेचारा अपनी नींद करता होगा और इधर अपने राम तो घोडे वेच कर मस्ती की नींद सोते है पत्र मिला ही नहीं अर्थात् न उसने पत्र दिया न मैंने पत्र पढा खेल हजम।।

✳ ✳

अभी-अभी प्रवास के दौरान एक नौजवान आदमी मिला । शक्ल-सूरत ग्रेज्युएट लगता था । मगर चेहरे पर तगदिली साफ-साफ नजर आ रही थी। मैने उसको कहा कि रात को आना बातचीत के पहिले दौर में ही मैं चकित हो गया उसने कहा "मैं धर्मपरिवर्तन करना चाहता हूँ।" मैंने पूछा- "क्यों भैया, क्या बात हुई?" उसने अपने दिल की बात कही व्यथा की भाप निकाली "क्या कहूँ आपसे। मैं घर के सदस्यों से पीडित हूँ समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों से तिरस्कृत हूँ. अत मैं घर से समाज से और यावत् अपने आपसे घृणा करने लगा

हूँ इस समाज का प्रत्येक व्यक्ति मेरा शत्रु है "

मैंने "हसा । तु झील मैत्री सरोवरमा" की मेरी इस अनुदित कृति के प्रमुख सूत्रों के माध्यम से उसे समझाना शुरू किया । वह ठडा हो गया । परिणाम तो समय बतायेगा मगर एक बार तो वह धर्मपरिवर्तन की बजाय विचारपरिवर्तन के लिये पूर्णतया सहमत हो गया ।

✳

ग्रीक फिलसूफ को दो हजार साल पहिले एक सत्य पकड में आया था

"If some one criticizes you, agree at once Mention that if only the other person knew you well there would be more to criticize than that!"

मैत्री भाव को टिकाने का यह एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है । क्षमा रखो Agree no argument अर्थात् चौसठ कलाओं को जाननेवाला भी यदि 'द आर्ट आफ एक्सप्टेन्स' नहीं जानता है तो वह पग-पग पर शत्रु खडे कर बैठता है। डा देविड बर्नस नामक एक मनोवैज्ञानिक ने कहा है- *"The key is to put yourself in the other person's shoes and look for the truth in what that person is saying Find a way to agree, the result may surprise you "* कुछ टूट गया फुट गया मन को शात रखो और सोचो अपने आपको वैसी परिस्थिति में रखो यह धैर्य वाकई में सुखदाई लगेगा ।

आज का आदमी ऐसी मन परिस्थिति से गुजर रहा है कि डग-डग पर उसे मानसिक यातनाऐं और विडबनाओं का सामना करना पड रहा हे । वह अपना सतुलन तुरत खो बैठता है । मेनिया और डिप्रेशन का मरीज हो जाता है । प्रतिशोध की ज्वालाऐं उसके अतर में धधकने लगती हे और वह कृत्याकृत्य के विवेक को बिसर जाता है ।

खाडी युद्ध में अनगिनत निर्दोष नरनारी इसी प्रतिशोध की वेदीपर बलि बनते जा रहे है सद्दाम हुसैन और बुश के पेट का पानी तक नहीं हिल रहा है, चूकि उन्हे प्रतिशोध लेना हे प्रतिशोध। आखिर किस पर? क्यों? कोई जवाब नहीं है।

जी चाहता है यह पुस्तक उन दोनों के हाथ थमा दूँ और इस भीषण प्रलय को विराम चिन्ह दे दूँ मगर काश। अरे। मुझे तो विश्वास है कि इस किताब मे लिखी गई बातो को पूर्ण रूप से पचानेवाला योद्धा चाहे वह अमेरीकन हो या इराकी, हिन्दू हो या मुसलमान, अपनी सहारक शक्तियों की राह बदल लेगा प्रतिशोध की आग मे निर्दोष जीवसृष्टि को झोकने की बजाय अपने

पनप रहे अहत्व–मैं–मेरापन को जला भुना कर खाक कर देगा । अपनत्व को सकुचित दायरे से ऊपर उठाकर एक व्यापक सार्वभौम अस्तित्व देगा "सर्व की रक्षा में ही स्वरक्षा समाई हुई है और सर्व की उन्नति में ही स्व की उन्नति है" यह सूत्र उसके जीवन की प्रत्येक लौ बोल उठेगी

अनुवाद अपने आप में एक समस्या है

मेरे सामने एक फार्मुला है OT-SM-M-S1m=TT ऑरीजनल टेक्स्ट से लगाकर ट्रॅास्लेटेड टेक्स्ट तक का यह फार्म्युला है । ऑरीजनल टेक्ष्ट से सिर्फ साउण्ड एण्ड मीनींग पकड़ा जाता है फिर रहता है सिर्फ मीनींग फिर Mchanged to m छोटा M का मतलब है → मीनींग का महत्त्व भी घट जाता है । अन्यभाषाकीय साउण्ड का मिलन होता है और ट्रान्स्लेटेड टेक्स्ट तैयार हो जाता है मतलव की पकाई हुई खिचडी का पुन पकाना हो जाता है जिसमें काली स्याह न वन जाय स्वाद बिगड न जाय इसका पूरा ध्यान रखना पडता है ।

मेटाफ्रेज अनुवाद शैली का मैं शुरू से ही विरोधी रहा हूँ चूकि शब्द के बदले शब्द रखने से अनुवाद में प्राण फूका नहीं जा सकता है । लेखक श्री का इस अर्थ में मैं काफी आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे इस रूढिगत शैली के लिये बाध्य नहीं किया । अनुवाद में मैंने अपने प्राण कितने भरे है ? यह तो पाठक के लिये ही छोड देता हूँ ।

मुनि रश्मिरत्न विजय

एक महत्त्व की बात –

गुर्जरगिरानिबद्ध इस निबन्ध का नाम था 'हसा । तु झील मैत्रीसरोवर मा' यद्यपि गुजराती भाषा में 'झील' शब्द का जो अर्थ है 'अवगाहन करना', वह हिन्दी भाषा में नहीं है, तथापि नाम को अत्यन्त बदल देना नहीं था, अत गुजराती भाषा के ही 'झील' शब्द को यथावत् रखकर इस हिन्दी सस्करण का नाम रखा है हसा । तू झील मैत्रीसरोवर में, मतलब है जिसका

हे आतमहस। तू मैत्रीसरोवर में अवगाहन कर
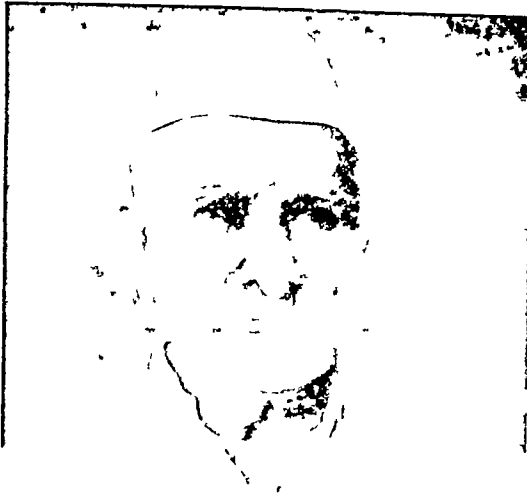
सागली शहर के सुप्रसिद्ध व्यापारी तथा मे आर टी शहा पेढी के सचालक श्री रतनचन्द तुकाराम शहा का जन्म दिनाक १६/२/१९१४ को हुआ। आप धार्मिकवृत्ति के समाजसेवक है । सागली जैन श्वेताबर सघ में भी आपका सराहनीय सहयोग रहा है । आपने सघ के अध्यक्ष पद को शोभाकर अच्छा नेतृत्व दिया है । आपके अध्यक्षताकाल में श्री अमीझरापार्श्वनाथ मन्दिर के जीर्णोद्धार का प्रारभ हुआ । मीरज में स्वकीय मन्दिर को आपने श्री सघ को अर्पण किया हैं । श्री आणदजी कल्याणजी पेढी, अमदाबाद के सागली जिल्ला के प्रतिनिधि के रूप में आपकी नियुक्ति हुई है । अनेक शिक्षणसस्था, रिमाडहोम, अनाथाश्रम आदि को भी आपने दान दिये है।

सतत उद्यमशील, धार्मिक और सुसस्कृत दीर्घायु द्वारा आप अनेक स्व–पर कल्याणकारी कार्य करते रहे ऐसी परमकृपालु परमात्मा से प्रार्थना

हसा । तू झील

शाह जयतिलाल मणिलाल (वढवाणवाले - हाल सागली)
कार्याध्यक्ष ट्रस्टी
श्री जगवल्लभपार्श्वनाथ श्वेताम्बर जैन मन्दिर
कुभोजगिरि तीर्थ

(इसी पुस्तककी गुजराती आवृत्ति को पढकर सहजस्वभाव से इस पुस्तकके प्रकाशन में विशिष्ट अर्थसहयोग देते वक्त श्री अशोकभाइ ने व्यक्त किये हुए उद्गार)

HIRA TEXTILES
70, Ambica Cloth Market,
1st Floor, D.K Lane,
Chickpet Cross
Bangalore-53
Ph 71824

मैत्रीभावना के चितन की यह पुस्तक आज के अशात मानव को शाति का मार्गदर्शन देने से बढिया "गाईड" साबित होंगी । मैने जिसे भी इस पुस्तक को बार-बार पढते एव उसपे मनन करते देखा है उनके जीवन मे मैने काफी परिवर्तन होते देखा है । समय समय पे होनेवाले उत्तेजना के क्षणों मे आपके चितन ने अच्छा ढाढस बॉधा हैं । इस पुस्तक की उपलब्धियॉ सामान्य है, और न ही मै समर्थ हूँ की इस चितन के आनद को अभिव्यक्त कर सकु । मेरा तो सिर्फ यही मगसद है की जो मूल्यवान वस्तु मेरे हाथ मे आई है । उसका फायदा सब उठावे, इस मूल्यवान वस्तु की एक विशेषता यह है कि जो भी इस वस्तु का उपभोग करेगा वह भी मूल्यवान बन जाएगा ।

अशोकभाइ सघवी

हसा । तू झील

इस पुस्तक के अर्थ सहयोगियो की नामावली

स्व श्री तेजराजजी गुलाबचन्दजी जीवावत की पुण्य स्मृत्यर्थे, गुडीवाडा
स्व पेराजमलजी की स्मृतिमें, हस्ते मेतीदेवी, गाव मोदरान (राज) गुन्टूर
स्वस्तिक दाल मिल्स, विजयवाडा
श्री एस पी जैन, सागली
श्री बिपीनभाइ बापुभाइ शाह,
श्री रतनशी तथा कल्याणजी जेठाभाइ
खोना मेमोरीअल ट्रस्ट, सागली
शा डुगरमल भुदराजी ओसवाल,
सोलकी ज्वेलर्स, इस्लामपुर, जि सागली
सुभाषभाइ भाइचन्द शाह, इस्लामपुर, जि सागली
श्रीमती सोनुबेन फुलचन्द शाह, वीटा, जि सागली
एक सद्गृहस्थ ह सोहनराजजी, वीटा, जि सागली
शा फुटमलजी जेठमलजी जैन, सोलापुर
सौ विमलाबाइ तिलोकचन्द निमाणी, सोलापुर
स्व श्रीमती केसरबाई लाभचन्दजी वैद स्मरणार्थ
ह लालचद मणोरमलजी वैद, सोलापुर
श्रीमती सुरजबाई भेरुलालजी कोठारी
ह कोठारी ब्रदर्स, सोलापुर
स्व सौ कुसुमबेन केशवलाल राभिआ, सोलापुर
श्री शातिलाल लीलाधर, दादर, मुबइ
श्री साकलचद दौलाजी गाधी, गुजरीपेठ, कोल्हापुर
स्व डॉ चोथमलजी वालचन्दजी
ह श्रीमती कमलादेवी चोथमलजी, मुबई
शेठ प्रकाशचन्द्र देवशीलाल, सागली
श्री भरतकुमार विनोदचन्द्र वडेचा, सागली
विजय ट्रेडर्स, ह बाबुभाई महेता, सागली
श्री उमरशी पासुभाई, सागली
श्री चन्द्रकान्त व्रजलाल वोरा, सागली
श्री फुलचन्दजी पुखराजजी, भायखला, मुबई
श्री शातिलालजी शकरलालजी सघवी, सोलापुर
श्री हर्ष अेन्टरप्राइज, सोलापुर

हे भवोदधित्राता न्यायविशारद सकल सघहितैषी पूज्यपाद आचार्यभगवत श्रीमद्विजय भुवनभानु सूरीश्वरजी महाराजा ।!।

आप......

☆ सच्चारित्रचूडामणि व्रह्मचर्यमूर्त्ति कर्मसाहित्यनिष्णात स्व. आचार्यदेव श्रीमद्विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराजा के अनन्यकृपापत्र पट्टधर हो.....

☆ वर्धमान तप की १०८ ओली, आजीवन मेवा मिठाई आदिका त्याग, दैनिक १८ घण्टा या उससे भी अधिक समय पचाचार की अप्रमत्त साधना आदि से मघमघायमान जीवन द्वारा हजारो साधको को आदर्श दे रहे हो....

☆ द्विशताधिक सुविहित मुनिवरों के गच्छ का कुशल-सफल नायक हो.....

☆ किसी की शरम रखे विना शास्त्रीय सत्यों को निर्भयता से प्रकाशित करने की सूक्ष्मप्रज्ञा और हिम्मत से सुशोभित हो....

☆ जिस धार्मिक ज्ञानसत्र(शीविर) के माध्यम से अनेक हजारो युवानो को धर्ममय वना रहे हैं उस धार्मिक का आप ही आद्यप्रेरक और वाचनादाता हो....

☆ आप की ही महती कृपा का फलस्वरूप वने इस को 'त्वदीय तुभ्य समर्पयामि' की भावना से आप को ही कोटिश वदन के साथ समर्पित कर रहा हूँ ।

मुनि अभयशेखर विजय

परम पूज्य सुविशालगच्छनायक, न्यायविशारद
आचार्यदेव श्रीमद् विजय

भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराजा

धर्म क्रिया का टॉनिक

एक सद्गृहस्थ ने अपने पुत्र को गणित में कमजोर देखकर, टच्युशन रखा। मास्टर सा'ब रोज आते और पढा कर चले जाते। दो महीने बीत गये। पिता ने सोचा "बेटा कितना होशियार हुआ, जरा देख तो लूँ।" और मास्टर सा'ब की उपस्थिति में ही परीक्षा लेने की मन में ठान ली।

टीचर के सामने ही चिन्टु बैठा हुआ था कि पप्पा आ धमके "चिन्टु। 6+6 कितना होता है ?" "वेरी-वेरी इजी पप्पा। 6+6=टेन अर्थात् दस।"

यह सुनना क्या था, पप्पा का बोईलर फटा और उग्र रूप धारण कर वे टीचर पर बरस पडे-"मास्टर सा'ब। यह क्या नोनसेन्स सिखाया आपने ?"

"जी। जी। शात रहिये," टीचर ने सफाई पेश की "आपका बेटा प्रगति कर रहा है "

पप्पा चीख उठे-"क्या खाक प्रगति कर रहा है।" "सच कहता हूँ महाशय, पहिले आपका शाहजादा 6+6=आठ कहता था अब दस कह रहा है दो महीने और धीरज रखिये बारह कह देगा।"

कहना नहीं होगा, शिक्षक महोदय को सूचना मिल ही गई "आइन्दा इस घर पर तशरीफ न लाये"।

विद्यार्थी की शक्ति दिन ब दिन बढनी ही चाहिये। जिस अध्ययन के बलबूते अज्ञान का नाश और ज्ञान की वृद्धि नहीं होती हो उस अध्ययन की कोई कीमत नहीं, चाहे अनगिनत घटो तक पढने का डोल क्यों न किया हो। मात्र अध्ययन की ही यह बात नहीं विश्व की हर बात को ले लीजिये हर क्षेत्र में अपनी पैनी नजर घुमा दीजिये बात साफ साफ नजर आयेगी कि मनुष्य मात्र टर्नओवर को नहीं देखता परतु उससे दारिद्रयनाश कितना हुआ? नफा-INCOME कितना हुआ? बेक बेलेन्स कितनी बढी? इन्हीं बातो को नजर समक्ष रखता है रोगग्रस्त इन्सान 'मैने टेब्लेट्स कितनी खाई?' दस बीस पच्चीस या पचास? नहीं उसे टेब्लेट्स की सख्या से सतोष नहीं होता, परतु गोलियॅ खाने से रोगनाश कितना

हसा। तूँ झील

हुआ? आरोग्य कितना बढा? इन दो बातों पर ही वह अपना ध्यान विशेष केन्द्रित करता है । स्ट्रीप्स की स्ट्रीप्स वेस्ट बोक्स में चली जाय, फिर भी ये दो बातें जो न हो तो अवश्यमेव मरीज सोचने के लिये मजबूर होता है–कि दरअसल माजरा क्या है?

एक नग्न सत्य

हर क्षेत्र में इस गणित का सेंट परसेंट उपयोग करने वाला अक्कल का वेताज बादशाह यह मानव, मात्र एक क्षेत्र में आख मूद कर ही चला लेता है वहाँ तो सिर्फ घटे, टर्नआवर, खाली स्ट्रीप्स की ढेर को देख कर आनद से झूम उठता है पागल होकर नाचने लगता है और ढोल बजाकर अपनी नगण्य सिद्धियों से इस दुनिया को वाकेफ करता है वह क्षेत्र है धर्म का ॥

मानो या न मानो, अपनी मर्जी की बात है, मगर यह नग्न सत्य है

हजारों और लाखो रुपयो से किया हुआ दान, अनगिनत सख्या में किये गये सामायिक, ओली–अठ्ठम–अठ्ठाइ–मासक्षमण जैसी कठोर तपस्याएँ, अजनशलाका प्रतिष्ठा–सघ–उपधान जैसे विविध अनुष्ठान, अमाप सख्यामें किया हुआ नवकारादि मत्र–महामत्रो का जाप, यह सब दखकर सतोष मानने वाला, चैन की नींद में सोने वाला मानव, यह विचार नहीं करता कि इन सभी अनुष्ठान–धर्मक्रियाओं से मेरा पापनाश कितना हो रहा है ? पुण्यबध कितना बढ़ रहा है ? परमात्मा ने बताया हुआ एक–एक अनुष्ठान की कीमत लाखों और करोडों में आकी जा सकती है। "मैं करोडों को पाने की कोशिश करता हूँ या सिर्फ पाच में ही सतोष मान लेता हूँ ? बहुधा पाच से सतोष मानने वाले धर्मी पर शका होती है कि हकीकत में वणिक्बुद्धि–वणिक्वृत्ति वाला है या नहीं? चूँकि वणिक्बुद्धि कैसी होती है? प्रशसा शास्त्रों में भी की गयी है । जहाँ किसी को लाभ नहीं दिखता हो भी अच्छा लाभ उठाकर हो रहे, यह वणिक्बुद्धि है। बबूल के काटो को tural pins का सुहाना नाम दकर अमराका में बेचनेवाला वणिक् ही है न। कमा गया ।

वणिक्बुद्धि

देवाधिष्ठित पर्वत पर एक मंदिर था । पर्वत पर सो सीडियाँ थी । तलेटी में मंदिर की पढी थी । उसमें सो–सो नोटो के बडल रहते थे । ऊपर जाने वाला भक्त–दशनार्थी अपना धन पास में नहीं रख सकता था, परतु पेढी से जितने बडल लेना हो, उतने ले सकता था । मात्र नियम इतना था कि पास में जितने भी बडल

हो, हर सीढी पर उतने रुपये धर दो ।" पर्वत देवाधिष्ठित था, इसलिए किसी भी प्रकार की न तो गडबडी होती थी और न ही कोई का अगडम–बगडम चलता था । अतिम सीढी पर सभी रुपये समाप्त हो जाते थे ।

एक बार एक डॉक्टर, एक इजनीयर और एक वणिक् वहॉ पर आये। तीनों मे मित्रता थी । नियम जान कर तीनो ने दो–दो बडल उठाये । चलते चलते उपर पहुँच गये । वणिक्मित्र के पास पचास रुपये बचे हुए देखकर दोनों मित्र आश्चर्यचकित रह गये । रहस्य समझने के लिए माथे पर बहुत बल लगाया, सब बेकार । "देवाधिष्ठित पर्वत पर यह हो ही नहीं सकता कि किसी के पास रुपये बचे रहे ।" आखिर सोचते–सोचते थककर चूर हुए दोनों मित्रों ने बात का रहस्य पूछा ।

मदस्मित बिखेर कर वणिक्मित्र ने कहा, "दोस्तो। बात बिल्कुल सीधी थी, नाहक उलझन में फसे रहे। नियम क्या है? जितने बडल पास में हो उतने नोट रखने चाहिए हर सीढी पर, ऐसा तो है ही नहीं कि जितने बडल लिये हो।।अत मैने शुरु में एक ही बडल में से दो–दो नोट रखना शुरु किया बडल बीच में पूरा हो गया फिर रहा मेरे पास मात्र एक ही बडल नियमानुसार मैंने एक–एक नोट रखना शुरु कर दिया और यह रुपये पचास का नफा–बचत हाजिर।

वणिक्मित्र का चातुर्य देखकर दोनों मित्र दग रह गये, यह वणिक्बुद्धि । वणिक्वृत्ति भी कैसी होती है? ९५मार्कस् के साथ गणित में फर्स्टक्लास फर्स्ट हुआ लडका, ईनाम और शाबाशी की इच्छा से परिणाम जब अपने पिता को दिखाता है, रीजल्ट देखते ही वणिक्पिता ने अपने पुत्र को खींच कर तमाचा लगा दिया, "बेवकूफ । सिर्फ पचाणु ही?"

"परतु पिताजी जरा गौर से देखिये तो सही, सपूर्ण क्लास में मेरे मार्क हाइयेष्ट है सौ में से पचाणु ।"

"तू वणिक्पुत्र है या और कोई? वणिक् का पुत्र सौ का एकसौ पाच करेगा या पचाणु?"

जी हॉं, यह वणिक्वृत्ति है, वह हर जगह सौ के एक सौ पाच करने के फेवर में होती है ।

इसीलिए तो सशय का यह कीडा मन में पैदा होता है कि आम धर्मानुष्ठानों मे लाख और करोड के बदले पाच सिर्फ पाच में सतोष मानने वाले अपन, वणिक्बुद्धि और वणिक्वृत्ति को कहाँ खो बैठे है?

मनुष्यने अपने धर्मानुष्ठान ऐसे नीरस बना दिये है कि न पूछो बात । सिर्फ

हसा । तूँ झील

नवकार ही ले शास्त्रकार भगवतों ने उसका जितना और जैसा लाभ बताया है क्या हकीकत में हम उतना और वैसा ही लाभ पा रहे है?

अर्थात् अनुष्ठान हम किये जा रहे है पर गुणवत्ता की सोच को हमने छोड दिया है कफन में रख कर उसकी दफन विधि ही कर डाली हमने । उफ्

हर एक छोटा-बडा अनुष्ठान शक्तिसम्पन्न बने समर्थ बने और अपूर्व फलदायी बने एतदर्थ क्या किया जाय?

आदमी तन से कमजोर हो जाता है मल्टीविटामीन की गोलियॉ तैयार है गोलियॉ न ले सको तो टॉनिक का लाल-पीला सीरप (syrup) तैयार है

मन कमजोर हो जाता है भात-भात की हर्बल टोनिक्स तैयार है

परन्तु हमारे अनुष्ठानों को ताकातवर कौन बना सकता है ? ऐसी कौनसी टॉनिक है जिसको पीते ही हमारे अनुष्ठानो के जान में जान आ जाय?

शास्त्रकार महर्षियों ने इसका सूचन दिया है

टॉनिक की फार्मूला

मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्यानि नियोजयेत् ।
धर्मध्यानमुपस्कर्तुं तद्धि तस्य रसायनम् ॥
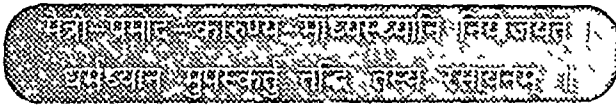
धर्मध्यान को सुसस्कृत/पुष्ट (healthy) करने की यदि चाह मन में जग जाय तो ईधर उधर पास की भटकन छोडकर आइये हमारे पास, हम आपको बडा ही मजेदार फार्मूला बताते है

मैत्री+प्रमोद+कारुण्य+माध्यस्थ्य=धर्मध्यान को तगडा बनाने की B Complex मल्टीविटामिन दवा ।

मैत्र्यादि भावनाओं से मन को भावित कीजिये फिर देखिये चमत्कार।

दिल में मैत्रीभाव का पवित्र झरणा बह रहा हो और धर्मानुष्ठान करे झरणा ... नामशेष रह गया हो और कोई अनुष्ठान करे फलश्रुति में जमीन-आसमान फर्क पडता है ।

एक आदमी 35 Calibre (रीवोल्वर) की गोली हाथ में लेता है सिर्फ दो फुट की दूरी पर एक इसान खडा है उसकी छाती पर वह बुलेट फेकता है। रीजल्ट कुछ भी नहीं आता है। शत्रु मूछ में ताव देकर खडा-खडा हसता है।

अब वह आदमी अपनी भूल को जान जाता है । रिवोल्वर के बिना बुलेट कुछ काम की नहीं। उसी बुलेट को उठाता है, रिवोल्वर में फिट करता है, घोडा दबाता है और यह लो । शत्रु लहू-लुहान होकर ओधेमुह गिर पडता है । गोली

आरपार निकल गई थी ।

आखिर यह हुआ कैसे? बडी ही अजीब बात है । बूलेट वो की वो, दूरी उतनी की उतनी और शत्रु भी द सेम मेन। पहिले बुलेट से मामुली-सी चोट और अब उसी बुलेट से जीते-जागते इसान की मौत?

होता यह है कि रिवोल्वर के अन्दर की भाग में एक स्प्रींग होता है उसका काम होता है पुश करना जिससे बुलेट का वेग बढ जाने से वह आरपार हो जाती है ।

मैत्रीआदि भाव रिवोल्वर में रही स्प्रींग जैसे है प्रत्येक अनुष्ठान को यदि इन भावों का पुश मिल जाय तो पलक झपकते ही कठिन और निबिड ऐसे कर्मशरीर को छिन्नभिन्न कर दें अस्तित्वहीन बना दे ।

और जिन्हे यह पुश न मिले वैसे अनुष्ठानों में खास दम भी नहीं होता ॥

रसूलमियॉ

70-75 साल पहिले बिहार की यह घटना है ✍

सन्तपुरुष पादविहार कर रहे थे । एक मिया साथ हो गया । महात्माजी। मेरे लायक कोई उपदेश हो, तो कहिएगा । सन्तपुरुषने योग्य समझकर थोडा-बहुत उपदेश दिया, फिर यह विचार उनके मनमस्तिष्क में कौध उठा "क्यों न इसे पवित्र महामत्र नवकार सिखाया जाय? देखो भैया । यह दुनिया का सर्वश्रेष्ठ मत्र है । कोई ऐसा कार्य नहीं जो इससे सिद्ध न हो ।" इत्यादि रूप से महामत्र की महिमा सुनाकर नवकार मत्र दिया ।

मिया के गाव में ही मुनिभगवत का रात्रिविश्राम था । रात को भी धर्मगोष्ठि/सत्सग चला । 2-25 घटे मिया ने धर्म की बातें सुनी । दूसरे दिन सुबह मिया गाव की सरहद तक छोडने आया । जब वह वापिस मुडने लगा, तब मुनिभगवत ने फिर मे भार देकर कहा "इस मत्र के जाप के साथ सृष्टिमात्र के उपर मैत्रीभाव होना अत्यत ही आवश्यक है । कोई कैसा भी अप्रीतिकर/हानिकर वरताव करे मन में शत्रुता के भाव पेदा नहीं होने चाहिये । शक्य हो तो कट्टर शत्रु का भी कोई छोटा-बडा काम आ पडे तब एक जिगरजान दोस्त की तरह सच्चे दिल से सहाय कर सके, ऐसा दिल बनाना चाहिये। ऐसा मैत्रीभाव होगा तो यह महामत्र अपूर्व चमत्कार बतायेगा" ।

रसूलमिया के दिमाग में यह वात फिट वैठ गई । दिन-रात वह नवकार की धून मे रहने लगा चलते-फिरते-उठते-वैठते खाते-पीते-सोते बस जब भी

हसा । तूँ झील

देखो मिया के अधरपल्लकों पर नवकार के पदों की गुनगुनाहट चालू ही रहती थी। महात्मा का अन्तिम सूचन भी वह याद रख रहा था। एक दिन रसूलमिया नवकार महामत्र को गुनगुनाता हुआ कहीं जा रहा था। सामने मिले एक परिचित मोहमेडियन

सलाम आलेकुम

आलेकुम सलाम

"क्यों रसूल मिया, यह तुम क्या गुनगुना कर रहे हो?" "भाईजान, मैं तो खुदा का नाम ले रहा हूँ ।" "सुनते हो जी, फौरन बद कर दो यह गुनगुनाहट। बे वक्त खुदा का नाम लिया जाता है क्या?"

दो-चार दिनो के बाद फिर से उसी महाशय के दिदार हुए रसूलमिया की गुनगुनाहट चालू ही थी। "अरे काफर हो गया है क्या? मना करने पर भी यह चालू रखते हो ?"

"अरे भैया । मैं खुदा का नाम ले रहा हूँ इसे तुम निषेध क्यों करते हो?"

"खुदा का नाम तो नमाज के वक्त लिया जाता है ऐसे जहाँ तहॉ नहीं। फौरन बद कर दो वर्ना, हमें कुछ करना होगा ।"

दो-तीन बार कठोर शब्दो में धमकी दी, पर रसूलमिया का नवकारपाठ ज्यों का त्यों चालू ही था। व्यक्ति सब कुछ सह लेता है, मगर अपमान नहीं मैं कहूँ और न करे? बस उसकी आखे चिनगारिया बरसाने लगी। रसूलमिया का जानी दोस्त जानी दुश्मन बन गया । लेकिन रसूलमिया के मनमें लेशमात्र भी शत्रुता के भाव नहीं थें वह तो उसे अपना मित्र ही मानता था, और सोचता "बेचारा है, खुदा उसे भी सद्बुद्धि दे।" यह भावना के कारण वह निर्भय था ।

कैसा भी खूखार हो, जुनून चढ जाय तो ज्यादा में ज्यादा नुकशान क्या ? एकबार आपको जान से खत्म कर देगा, आप उसे शत्रु मानो या मित्र। परन्तु शत्रु मानने में सदा भय है। इन्सान को भयभीत रहना पडता है। के बादल सदा उसके सिर पर मडराते रहते है। निर्भय एक पल मरता है, भयभीत हर पल। सिर्फ उसकी श्मशानयात्रा देरी से निकलती है ।

भय व्यर्थ है अभय सार्थ है। अभय जीवन है।

भय-अभय का रिजल्ट

शत्रु को शत्रु मानना यही भय है मित्र मानना अभय । सामनेवाले व्यक्ति को शत्रु मानने में उससे सदा भयभीत रहना पडता है उसके प्रति दुर्भाव-द्वेष

और सक्लेशकी उर्मियाँ हृदय के अन्तराल में सदा उमड-घुमड करती रहती है कदाचित् व्यक्ति सावधान रहकर शत्रु के आकमणो से बच सकता है। मगर

पल-पल मृत्यु की भीति उसे सताती ही रहती है उससे बच पाना उसके लिये असभव सा हो जाता है और वही तो मौत है। पल पल की मौत ॥

जबकी उसे दोम्त मानने में बहुत फायदा है । भयमुक्त व्यक्ति प्रसन्न रह सकता है। उसका मन हल्का फुल्का वेरी लाइट रहता है "मैं अपने शत्रुओ के बीच जा रहा हूँ, बस रहा हूँ ।" यह विचार अत्यत खतरनाक है भयप्रद है।और "मै अपने मित्रों के बीच जा रहा हूँ, बस रहा हूँ" यह विचार अत्यत आह्लादक है आनदजनक है यह अनुभवसिद्ध बात है

जैसे कि-एक बार आपको किसी कार्यवश भीषण जगल से गुजरना पड़ा किसी व्यक्ति ने आपको घबरा दिया 'जगल में खूखार गुडे है चालबाज है किसी भी छल से पथिक-मुसाफिर को गिरफ्त करते है और स्टेनगन से देह की छलनी बना देते है" अब आप ही सोचिये अपके कैसे हाल होगे? सभव होगा तो यात्रा स्थगित करेगे, वह न हो सका तो रस्ता दूसरा ढूढेंगे और वह भी न हुआ तो

चलेंगे जरुर मगर फूक फूक कर बहुत सोचकर बहुत समझकर और बहुत सभलकर हवा की एक झोंक आती है सूखे पत्तो की एक चरचराहट होती है और आप का दिल मशीन की तरह धुक धुक करने लगता है नस मे खून की गति सुपरसोनिकों के रेकर्ड को तोड देती है हार्ट-एटक हो जाय कोई आश्चर्य नहीं दर असल आप भयभीत है अत सबकुछ सभव है

उसी भीषण वन से आपको पसार होना है किसीने कह दिया बडे ही मायालु लोग है मुसाफरों की बुतखातिर करते है यह सुनना क्या था आप खिल जाते है एकदम निश्चित बन जाते है

आप मजे से चलने लगते है होठों पर मीठी मुस्कान जुबा पे गीत की गुनगुनाहट देह में अल्लहमस्ती । पार हो जाते हैं कुछ भी नहीं

खैर, आया तो पहिले भी नहीं था कोई मारने या डराने मगर आप हर पल डर रहे थे किसी अज्ञात से जिसका अस्तित्व ही नहीं था इस दुनिया में

बहुत रसप्रद और मनोवैज्ञानिक सूत्र है यह *"सुख और शाति चाहते हो तो किसी को शत्रु मत मानो निर्भीक रहोगे"*

सर्व जीवों को मित्र मानने का यह भी अपूर्व लाभ है ।

कडक शब्दों में कहने पर भी जब रसूलमिया ने जाप रोका नहीं, तब उस

हसा । तूँ झील

मिया ने अपना क्रूर निर्णय ले लिया । शाम के वक्त जब रसूलमिया कहीं बाहर टहलने गया हुआ था उसी वक्त जगल मे जाकर कहीं से एक भयकर जहरीला साप पकड लाया और चारपाई के नीचे इस तरह रखा कि जैसे ही वह खाट पर बैठे कि तुरत करड से बाहर निकलकर क्रुद्ध नागराज रसूलमिया का सफाया कर दे। एक डस बस, खेल खतम, पैसा हजम

रसूलमिया आया कपडे उतारे और नवकार गिनकर शाति से सो गया। मौत उस पर लटक रही थी, इसका अहसास उसे नहीं था वह तो ठीक रोज की तरह नवकार गिनकर सो गया था

अध-पौना घटा हुआ, न हुआ और वह मिया बेतहाशा भागा-भागा आया और चिल्लाने लगा "रसूलमिया उठो रसूलमिया उठो" चीखसे रसूलमिया उठ तो गया मगर देखता क्या है सामने वाले भाईजान का मुह भय से सफेद हो गया है फफक् फफक् कर रोते हुए वह कह रहा था, "रसूलमिया । खुदा के बदे । मुझे माफ कर दो मुझे माफ कर दो "

"अरे भैया, आखिर बात क्या हुई? कुछ समझाओ तो सही "

"मैंने भयकर गल्ती की है भैया, मुझे माफ कर दो " गल्ती । काहे की गल्ती? तुमने तो कुछ नहीं किया है नाहक क्यों चिता से परेशान हो उठे हो?"

रसूलमिया को बात की गध भी आयी नहीं थी और उसे किसी प्रकार की शका भी नहीं थी। "नहीं नहीं मै पाकदिल नहीं हूँ भैया मैंने तो तुम्हे मारने के लिये जहरी साप रखा था" यह कहते हुए उसने चारपाई के नीचे रखी हुई बास की पिटारी खींच कर बताई

यह देखकर भी रसूलमिया को तो मानो कुछ भी हुआ ही न हो वह पहिले की तरह शाति से बोला

"देखो भाईजान। ठीक है तुमने साप रखा था इस करड में मगर मुझे तो हुआ नहीं है न, मैं तो बिल्कुल स्वस्थ हूँ अब जाओ, मेरी तनिक भी न करो, और शाति से सो जाओ "

रसूलमिया की सहजता मर्मस्पर्शी थी "नहीं भैया, तुम्हे भी मेरे साथ आना होगा "

इतनी देर गये रात में?

हॉ, चूकि मैंने जो भयकर सर्प रखा था, उसने मेरे पुत्र को काट दिया है तुम ही बचा सकते हो उसे। चलो भैया, महेरबानी कर जल्दी चलो "मैं?

मै आकर वहाँ क्या करुगा भाईजान? नीमहकीम तो हूँ नहीं, जो औषधि ईलाज को समझुँ । "

जिस मत्र ने तुम्हे बचाया, यकीनन वही मेरे बच्चे को भी बचा देगा चलो जल्दी चलो उसका शरीर नीला पड रहा हे मै तुम्हारे पाँव पडता हूँ खुदा की कसम, चलो "

उस मिया को भी नवकार पर आस्था हो चुकी थी वाकई अपार शक्ति जरुर है इस मत्र में "रसूलमिया का बालबाका न हुआ और मेरे घर पर ही आग लग गई घर का चिराग बुझने लगा हाय हाय मुझ नापाक को यह क्या शैतानियत सूझी? रसूलमिया तो खुदा का बदा है पाकदिल है और मैने ऐसे व्यक्ति को मारने की साजिश की तोबा। तोबा ।।"

मिया विह्वल हो उठा बरबस रोने लगा। रसूलमिया ने आश्वस्त स्वरों में कहा -- "भैया । पाव में गिरने की जरुरत नहीं और इतना गिडगिडाने की भी जरुरत नहीं इन्सानियत के नाते मुझे वहॉ चलना ही चाहिये। चलो जल्दी चलें "

आत्मभूमि में खल-खल बहती हूई मैत्रभाव की सरिता ने अपार करुणा को अकुरित किया दोनों गए

मद प्रकाश में देखा एक नवयुवक की निश्चेष्ट देह पडी थी जहर फैल रहा था अत्याधिक तेजी से लक्षण स्पष्ट थे रसूलमिया बावरा हो उठा "नहीं नहीं इस बच्चे को मैं कतई मरने नहीं दूगा "पर उसके पास भी कोई चारा न था "क्या करुँ? कैसे करुँ? इन विचारों में से श्रद्धा का-मैत्री का ऐसा स्वर निकला रसूलमिया हाथ में पानी लेकर नवकार महामत्र के स्मरण में तल्लीन बन गया

महामत्र नवकार के प्रति अपूर्व श्रद्धा, महात्मा के प्रति अद्‌भुत सद्‌भाव और सर्वजीवो के प्रति (विशेषरूप से उस मिया और उसके पुत्र के प्रति) उछलते हुए मैत्री-करुणाभाव के साथ तीन नवकार गिने और पानी छिडका

और अपूर्व चमत्कार हुआ आश्चर्य। आश्चर्य। आस्था फलित हुई निश्चेष्ट देह मे प्राण सचार होने लगा लडका बच गया

टूटती कडी

हम जन्म से नवकार महामत्र सुनते आये है और गिनते भी मृत्यु की अतिम पल तक सुनते रहेगे और गिनते भी रहेगे

इसके सिवा और भी वहुत कुछ हम अपने जीवन में प्रभु पूजा, साधुभक्ति,

हसा । तूँ झील

दान, सामायिक, प्रतिक्रमण, अभक्ष्यत्याग आदि करते है और करते रहेगे

नमस्कार महामत्र में जिन पाच परमेष्ठियों को नमस्कार किया गया है उनके प्रति भी हमारे हृदय में अपूर्व बहुमान हैं हम नवकार की रटण करे और विष उतर जाय क्या ऐसी श्रद्धा और आस्था हमारे उरमें नहीं?

नहीं, दु ख में सुमिरन हम जरुर करते है प्लेन क्रेश की तैयारी हो ऊपर आकाश और नीचे धरती कोई सहाय नहीं सुरक्षा नहीं ऐसी परिस्थिति में हम भी नमस्कार महामत्र का जाप जोर-शोर से शुरु करते है अन्त करण की श्रद्धा से गिनते है

फिर भी एक टूटती कडी है मैत्रीआदि सुन्दर भावों की ।

कई सालों से वदन, पूजन, सावत्सरिक प्रतिक्रमण करने वाले हम त्रिलोकपति महावीर प्रभु के तप, त्याग, ध्यान, वैराग्य और अप्रमत्त आराधना को नजरअदाज करते है और वह सब करने की झखना-तमन्ना जागती है हमारे मन मस्तिष्क में और उन मनोरथों को पूर्ण करने के लिए हम यथाशक्य प्रयत्न भी करते रहते है मगर

दु ख और दर्द इस बात का होता है कि वीर प्रभु के एक अपूर्व आयाम से हम अपरिचित-अछूतप्राय रह जाते है

भयकर में भयकर परिषह और उपसर्गों की बारिस बरसाने वाली आत्माओं को भगवान महावीर ने शत्रु नहीं माना मित्र माना। अरे। अवसर आनेपर अपराधी आत्माओं के लिए करुणामूर्त भगवान ने आखों से दो बूद आसू के भी बरसा दिये। अफसोस। इस महत्त्वपूर्ण बात की ओर हम हमारा ध्यान केन्द्रित नहीं करते ।ल९ हमें उसकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती और नहीं वैसे मनोरथ उद्भव । हैं उरमें, तभी तो हमारा प्रयत्न भी नहीं हो रहा है उस दिशा में

पर्युषणा और सवत्सरी कई आयी और चली भी गई पैसे की थैली की थोडी सी ढीली करके उदारता कर दी मगर हाय। दिल में जमी हुई वैर की गाठ को छोडकर-तोडकर सामने वाला व्यक्ति का अपराध माफ करने की उदारता हममें जन्मती नहीं जिसका चेहरा भी हमने सालभर नहीं देखा, ऐसे कई अजनबी मित्रों को यादकर-करके क्षमापना का सुदर पत्र डालने वाले हम अत्यत निकट में रहे हुए पडौसियों को एक ही घर में बसने वाले भाई-भाभी, माँ-बापों को क्षमा नहीं कर पाते आपसी वैमनस्य को भूला नहीं कर पाते छोटी छोटी बातो को रफादफा नहीं कर सकते *किमाश्चर्यमत परम्?*

इससे बढकर और कौनसा आश्चर्य हो सकता है ।।

मैत्री आदिकी आवश्यकता

मैत्री जैसे सुन्दर भावों का पुश न मिलने से ही तो हमारे अनुष्ठानों में वह दम नहीं होता जो होना चाहिये उनमें

दवाई अनुपान के साथ लेते है और उसके बिना लेते है फर्क तो पडेगा ही

मैत्री आदि भाव धर्म आराधना के अनुपान जैसे है ।

वही भूमि वे ही बीज वही किसान और वैसा ही जलसिचन होते हुए भी खाद डालने पर जो पाक तैयार होता है वह खाद के बिना नहीं हो सकता

मैत्री आदि भाव खाद के समान है

खाद की गुणवत्ता फसल को उत्तम बनाती है

भावों की उत्तमता आराधना के फलों में रग लाती है

स्प्रीग, अनुपान, और खाद जैसे इन मैत्री आदि भावों को १४४४ ग्रन्थों के रचयिता सूरिपुरदर **आचार्य हरिभद्र सूरीश्वरजी महाराजा** ने धर्म की प्राथमिक भूमिका में अत्यधिक आवश्यक गिनाये हैं ।

जिस प्रवृत्ति से मोक्ष नजदीक आये, उसे योग कहते है । मात्र धर्मक्रियाऐं कर लेना, कोई योग नहीं है । किन्तु जिस में प्रणिधान, प्रवृत्ति, विघ्नजय, सिद्धि और विनियोग इन पाच शुभाशयों का सम्मिश्रण हो, वही धर्मक्रिया "योग" रूप से स्वीकारी जाती है ।

इन पाच शुभाशयों में सर्व प्रथम जो 'प्रणिधान' लिया गया है उसमें भी परोपकार की वासना–भावना, हीनगुणी पर द्वेष का अभाव, करुणावासित चित्त आदि का समावेश किया गया है ।

और, योग के अध्यात्म, भावना, आध्यान, समता और वृत्तिसक्षय नामक जो उत्तरोत्तर ऊची कक्षा के भेद बताये है उनमें से प्रथम जो अध्यात्म योग है उसमें भी मैत्री आदि भावों को आवश्यक अगरूप माना है। इस तरह याकिनी महत्तरासूनु श्री हरिभद्र सूरि महाराजा ने आत्महित की प्राप्ति के नींव में इन मैत्री आदि भावों की आवश्यकता पर जोर दिया है । इससे यह सहज जाना जा सकता है कि इन भावों के बिना तो हम अभी अध्यात्म की पहली सीढी भी पहुच नहीं पाये है पहली मजिल भी हासिल नहीं कर पाये तो शेष बातों पर एक बडा सा प्रश्नवाचक चिह्न लग जाय आश्चर्य नहीं ।

दान, सामायिक, प्रतिक्रमण, अभक्ष्यत्याग आदि करते है और करते रहेगे

नमस्कार महामत्र में जिन पाच परमेष्ठियों को नमस्कार किया गया है उनके प्रति भी हमारे हृदय में अपूर्व बहुमान हैं हम नवकार की रटण करे ओर विष उतर जाय क्या ऐसी श्रद्धा और आस्था हमारे उरमें नहीं?

नहीं, दु ख में सुमिरन हम जरुर करते है प्लेन क्रेश की तैयारी हो ऊपर आकाश और नीचे धरती कोई सहाय नहीं सुरक्षा नहीं ऐसी परिस्थिति में हम भी नमस्कार महामत्र का जाप जोर-शोर से शुरु करते है अन्त करण की श्रद्धा से गिनते है

फिर भी एक टूटती कडी है मैत्रीआदि सुन्दर भावों की ।

कई सालों से वदन, पूजन, सावत्सरिक प्रतिक्रमण करने वाले हम त्रिलोकपति महावीर प्रभु के तप, त्याग, ध्यान, वैराग्य और अप्रमत्त आराधना को नजरअदाज करते है और वह सब करने की झखना-तमन्ना जागती है हमारे मन मस्तिष्क में और उन मनोरथों को पूर्ण करने के लिए हम यथाशक्य प्रयत्न भी करते रहते है मगर

दु ख और र्दद इस बात का होता है कि वीर प्रभु के एक अपूर्व आयाम से हम अपरिचित-अछूतप्राय रह जाते है

भयकर में भयकर परिषह और उपसर्गों की बारिस बरसाने वाली आत्माओं को भगवान महावीर ने शत्रु नहीं माना मित्र माना । अरे । अवसर आनेपर अपराधी आत्माओं के लिए करुणामूर्त भगवान ने आखों से दो बूद आसू के भी बरसा दिये। अफसोस। इस महत्त्वपूर्ण बात की ओर हम हमारा ध्यान केन्द्रित नहीं करते इसीलिए हमें उसकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती और नहीं वैसे मनोरथ उद्भव पाते है उरमें, तभी तो हमारा प्रयत्न भी नहीं हो रहा है उस दिशा में

पर्युषणा और सवत्सरी कई आयी और चली भी गई पैसे की थैली की थोडी सी ढीली करके उदारता कर दी मगर हाय । दिल में जमी हुई उस वैर की गाठ को छोडकर-तोडकर सामने वाला व्यक्ति का अपराध माफ करने की उदारता हममें जन्मती नहीं जिसका चेहरा भी हमने सालभर नहीं देखा, ऐसे कई अजनबी मित्रों को यादकर-करके क्षमापना का सुदर पत्र डालने वाले हम अत्यत निकट में रहे हुए पडौसियों को एक ही घर में बसने वाले भाई-भाभी, मॉ-बापों को क्षमा नहीं कर पाते आपसी वैमनस्य को भूला नहीं कर पाते छोटी छोटी बातो को रफादफा नहीं कर सकते *किमाश्चर्यमत परम्?*

इससे बढकर और कौनसा आश्चर्य हो सकता है ॥

मैत्री आदिकी आवश्यकता

मैत्री जैसे सुन्दर भावों का पुश न मिलने से ही तो हमारे अनुष्ठानों में वह दम नहीं होता जो होना चाहिये उनमें

दवाई अनुपान के साथ लेते है और उसके बिना लेते है फर्क तो पडेगा ही

मैत्री आदि भाव धर्म आराधना के अनुपान जैसे है ।

वही भूमि वे ही बीज वही किसान और वैसा ही जलसिचन होते हुए भी खाद डालने पर जो पाक तैयार होता है वह खाद के बिना नहीं हो सकता

मैत्री आदि भाव खाद के समान है

खाद की गुणवत्ता फसल को उत्तम बनाती है

भावों की उत्तमता आराधना के फलों मे रग लाती है

स्प्रींग, अनुपान, और खाद जैसे इन मैत्री आदि भावों को १४४४ ग्रन्थों के रचयिता सूरिपुरदर **आचार्य हरिभद्र सूरीश्वरजी महाराजा** ने धर्म की प्राथमिक भूमिका में अत्यधिक आवश्यक गिनाये हैं ।

जिस प्रवृत्ति से मोक्ष नजदीक आये, उसे योग कहते है । मात्र धर्मक्रियाऐं कर लेना, कोई योग नहीं है । किन्तु जिस में प्रणिधान, प्रवृत्ति, विघ्नजय, सिद्धि और विनियोग इन पाच शुभाशयों का सम्मिश्रण हो, वही धर्मक्रिया "योग" रूप से स्वीकारी जाती है ।

इन पाच शुभाशयों में सर्व प्रथम जो 'प्रणिधान' लिया गया है उसमें भी परोपकार की वासना–भावना, हीनगुणी पर द्वेष का अभाव, करुणावासित चित्त आदि का समावेश किया गया है ।

और, योग के अध्यात्म, भावना, आध्यान, समता और वृत्तिसक्षय नामक जो उत्तरोत्तर ऊची कक्षा के भेद बताये है उनमें से प्रथम जो अध्यात्म योग है उसमें भी मैत्री आदि भावों को आवश्यक अगरूप माना है। इस तरह याकिनी महत्तरासूनु श्री हरिभद्र सूरि महाराजा ने आत्महित की प्राप्ति के नींव में इन मैत्री आदि भावों की आवश्यकता पर जोर दिया है । इससे यह सहज जाना जा सकता है कि इन भावों के बिना तो हम अभी अध्यात्म की पहली सीढी भी पहुच नहीं पाये है पहली मजिल भी हासिल नहीं कर पाये तो शेष बातों पर एक बडा सा प्रश्नवाचक चिह्न लग जाय आश्चर्य नहीं ।

हसा । तूँ झील

तभी तो यह वात विचारणीय वन जाती है "लाख मूल्यवाली हमारी सभी क्रियाऐं, पाच का भी फल दे सकेगी क्या?" यह सिरदर्द एस्पीरिन खाने से नहीं मिटेगा, परतु इस प्रकरण को खूब गौर से पढकर चितन–मनन करने से मिटेगा

अत्यधिक आवश्यक मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्य इन चारभावों में से मैत्रीभाव का यहॉ कुछ विचार हमें करना हे चूँकि इसके आते ही, शेष तीन को लाने में परिश्रम इतना नहीं पडता और मैत्री भाव में कुछ कमी रह जाय तो शेष तीन की प्राप्ति वडी मुश्किल हो जाती है ।

विश्व के प्राणिमात्र के हित की इच्छा करना **मैत्रीभाव** है । अपने से अधिक गुणी देखकर ईष्या न करना और आनदित होना प्रमोदभाव है। अपने से हीनगुणी देखकर तिरस्कार–फिटकार नहीं वरसाना और करुणा वहाना **करुणाभाव** है । अपने से निम्नस्तर पर रही हुई आत्माऍ सभव हो फिरभी गुणों की ऊचाई को प्राप्त न करे सुदर परिस्थितियॉ खडी करने पर भी जो जीव ऊपर आने की तमन्ना न वतावे हीन और हीनतर बनता जाय अज्ञान–मोहादि के कारण गिरता ही जाय ऐसे जीव के प्रति क्रोध उत्पन्न न कर उपेक्षा करना let go करना यह **माध्यस्थ्य उपेक्षा** भावना है ।

·ध करना और वैराग्नि से जलना इसका मतलव
` के अपराधों की सजा अपने आप को करना....
अथवा स्वय झेलना...

मित्ति में सव्वभूएसु
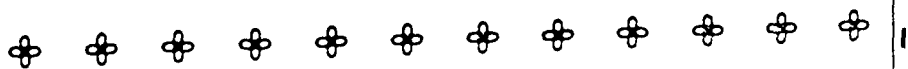
मैत्रीभावना वगैरह की व्याख्या को देखते हुए, यह बात सविशेष ख्याल में आती है कि मैत्रीभावना सबसे ज्यादा व्यापक है । जगत के तमाम प्राणी उसके विषय है ।

अपने से ऊच्चतर कक्षा पर पहूँचे हुए जीव प्रमोदभावना के विषय है । ऊच-नीच का वर्गीकरण दो प्रकार से जीवों में सामान्यत हुआ करता है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से और भौतिक दृष्टिकोण से । अध्यत्ममें जो हम से ऊचे हे उनके प्रति दिल में ईर्ष्या की आग-जलन नहीं होनी चाहिये, परतु आनद की अनुभूति होनी चाहिये। उनकी अन्त करण से अनुमोदना करनी चाहिये कि धन्य है आपका जीवन ।

भौतिकदृष्टि में जो हमसे आगे है उनके प्रति ईर्ष्या नहीं होनी चाहिये बस, यही आनद की अनुभूति बहुत है उनकी अनुमोदना करने की जरुरत नहीं ।

आध्यात्मिकदृष्टिमें जो हमसे निम्नस्तर के जीव है वे सभी भावकरुणा के विषय है। भौतिकदृष्टिमें जो हम से निम्न है, वे जीव द्रव्यकरूणा के विषय है।

उपेक्षाभावना के विषय भी वे ही जीव है जो हमसे निम्न और निम्नतर है। स्वय ऊपर उठ सके, ऐसी सुदर परिस्थितियॉ उनके सामने खडी है फिर भी वे जीव अपने जीवन में उन ऊचाइयों को प्राप्त नहीं कर रहे है करने की चाह भी नहीं ऐसे व्यक्तियों पर माध्यस्थ्य/उपेक्षा भावना रखनी चाहिये । क्योकि वर्त्तमानमें अपनी लाख कोशिश के बावजुद भी वे ऊपर उठने वाले नहीं है अत उनके लिये कुछ भी प्रयास न करना यही उपेक्षाभाव है । कई आत्माए ऐसी होती है जो थोडी सी सावधानी-उद्यमशीलता आदि अथवा किसी अन्य हितेच्छु के प्रयास से ऊचे उठ सके, ऐसी सेंट-पर-सेंट शक्यता होते हुए भी, अपनी अज्ञानदशा-प्रमादभाव निरी मूर्खता आदि कारणों से ऊपर न आए, गुणवान न बने वैसी आत्माओं के प्रति दिलमें तिरस्कार भाव न जागे इसका पूर्ण ख्याल करना चूकि वैसी आत्माए उपेक्षाभाव के विषय है ।

जिनको ऊपर उठाने के लिये हमने अपना अधिकार-जवाबदारी समझकर तनतोड प्रयास किये फिर भी मात्र ऊपर्युक्त अज्ञानदशा आदि कारणों से ऊपर न उठे वैसों के प्रति अपने अतर में करूणा की स्रोतस्विनी सुख कर द्वेषभाव खडा न हो इसका खास ध्यान रखना चूकि वे उपेक्षणीय है ।

फ्रेंडसर्कल-सारा विश्व

समष्टिगत सर्व चेतनावन्त जीव मैत्रीभाव के विषय है । अर्थात् अनुकूलवर्त्तन करने वाले स्वजनस्नेही तो इसके अन्तर्गत है ही, अपरिचित जीव भी इसमें शामिल ही है, साथ ही प्रतिकूल वर्त्तन करने वाले दिलोजान दुश्मन भी इसके विषय है।

सपूर्ण जीवराशि इस मगलभावना से जुडी हुई है एक जीव की भी इसमें बादबाकी नहीं होनी चाहिये

"शिवमस्तु सर्वजगत " का नारा तो बुलन्दी से हम लगा देते है मगर अफसोस। "सारी दुनिया का कल्याण हो मेरे पडौसियों का कतई नहीं" कहीं ऐसी बादबाकी तो अपन नहीं कर देते? अतर को टटोलना जरूरी है

इग्लेन्ड में इन्टरनेशनल लव की एक सस्था है उसके सदस्य निश्चित दिन के निश्चित समय विशाल चौराहे पर इकट्ठे होते है और चीखते-चिल्लाते है "We love all" एक युवती भी नियमितरूप से उसमें भाग लेती थी, पडौसी ने याद दिलाया बहिन। सारी दुनिया से प्रेम की बातें करती हो जरा अपने माँ-बाप यह सुनते ही उसका बोयलर फटा "सारी दुनिया से मैं प्यार-लव कर सकती हूँ उनसे तो कतई नहीं वे मेरे जानीदुश्मन है।"

खैर व्यक्तरूप से कदाचित् हम किसी को माइनेस न भी करते हो फिर र्भतरूप से तो हम किसी को बाकी नहीं रखते हैं? यह भी खोजबिन आवश्यक की जाय? लीजिये फार्म्युला हाजिर है-

शिवमस्तु मे से बादबाकी

"जिस किसी के भी प्रति दिलमें शत्रुता हो, उसकी हानि देखकर आनद होता " यह एक सामान्य नियम है बिल्कुल साइन्टीफिक ओर साइकोलोजिकल है यह।

अब आइये, हम अपने आपको टटोलें, माध्यम प्रश्नों का है उत्तर सोचने जाइये

१ अपने आसपास के सर्कल में किस-किस व्यक्ति की हानि को देखकर मन प्रसन्न होता है?

२ किस व्यक्ति की असफलता मुझे आनंदित करती है?

३ किस व्यक्ति की व्यथा की कथा सुनकर हमदर्दी जताने के बदले व्यथित होने के बदले मेरी बाछियाँ खिलने लगती है?

जैठानी का बच्चा परीक्षा में दूसरी बार फेल हो गया और हम खुश हुए, लाइट चली गई, पडौसी हेरान-परेशान हो गया और हमें मजा आई, भाईसा'ब का व्यापार फ्लोप हो गया, और हमें मीठाई बाटने का मन हो आया बाहर से शोकमग्न रहे मगर अदर से आनदसागर में डुबकियाँ लगाते रहे तो समझ लीजिये उन-उन व्यक्तियों के प्रति हमारे दिल में मैत्री भावना पनपी नहीं है शत्रुता के भाव जम कर बैठे हुए है उन-उन जीवों की "शिवमस्तु " की मगलमयी कामना और आराधना में बादबाकी है माइनेस पोइन्ट जिन्दे है ।

दिल मे प्रभुजी का अप्रवेश

महामत्री पेथडशाह के पुत्ररत्न झाझण शाह सघ लेकर जा रहे थे । एक नगर के उपवन में उन्होने अपना पडाव रखा । नगर के राजा ने सघपति को आमत्रण भिजवाया "सघ के अच्छे-अच्छे चुनिदा यात्रियों को लेकर आप राजमहल में पधारिये जिससे हम आपकी आवभगती कर अनुगृहीत बन सकें " तब सघपति ने जवाब कहलाया, "राजन् । मेरे इस सघ में हर एक व्यक्ति अच्छा है अत यदि सपूर्ण सघ को आमत्रण हो तो ही मै आ सकता हूँ अन्यथा नहीं " अर्थात् यदि एक व्यक्ति भी आमत्रण बिना का है तो मैं और मेरा सघ आपके राजमहल में प्रवेश नहीं करेगा "

श्रावक की भूमिका में रहा हुआ झाझणशा भी ऐसा कहता हो कि "राजमदिर में मेरा एक भी व्यक्ति अनामत्रित है तो मै भी नहीं आ सकता" तो फिर सहज है कि सर्वोत्कृष्ट भूमिका को प्राप्त हुए तारक तीर्थंकर परमात्मा भी अपने को यह कहे "इस सृष्टि के सकल जीवराशि की हित कामना मैने की *"सवि जीव करू शासनरसी"* अर्थात् सर्वजीवों का मैं हितचितक पिता हुआ और सर्वजीव मेरे पुत्रतुल्य हुए । अत तेरे मनमदिर में एक जीव का भी यदि प्रवेश नहीं है तेरे दिल के द्वार यदि एक जीव के लिये भी बध है, तो समझ ले, मैं भी प्रवेश नही कर सकता । तुमने किसी एक जीव के लिये क्रोध से मानसे अथवा वैरवृत्ति से 'No Admission' का बोर्ड लगाया है तो उसको सर्व प्रथम मैं ही पढूगा क्योकि मै सबसे आगे हूँ अगुआ के नाते उसको पढते ही सर्व प्रथम मैं ही लौटुगा ।।

बात भी सही है घर की खिडकियॉ और द्वार खुले हो तो ही मद मद समीर और सूर्य की स्वर्णिम रश्मियॉ अदर प्रवेश पाती है "कचरा अदर न आये"

हसा । तूॅ झील

इस हेतु से आप यदि खिडकियॉ वन्द कर देते है तो याद रखिये सूर्य की किरणों दरवाजे से टकराकर वापिस लौट जायेंगी शीतल पवन भी लोट जायेगा गृहमंदिर मे न होगा पवन और न होगा सूर्यप्रकाश।।

दिल के दरवाजे आपने वद कर रखे है प्रतिकूल आचरण करने वाले शत्रुओं के लिये मगर परमात्मा भी प्रवेश नहीं करेगे

मन मन्दिर खोलो

परमात्मा को मनमन्दिर में प्रतिष्ठित करना है? तो सर्वप्रथम दिलके दरवाजे के ताले तोड दो सब के लिये खोल दो स्वजन और मित्रों की तरह शत्रुओ के लिये भी वेलकम का वोर्ड लगा दो इस भगीरथ कार्य के लिये सवसे पहिले "शत्रु के हित की कामना करो शिवमस्तु की मगलमयी भावना से जितने माइनेस पोइन्ट थे सभी को प्लस पोइन्ट में वदल दो

सपर्क में आने वाले व्यक्तियों में से ऐसे व्यक्तियों के नाम एक कागज पर नोट कर दो जिनकी छोटी-वडी आपत्तियॉ हमारे अन्त करण में हर्ष की कम्पनें पैदा करती हो उन सभी व्यक्तियों के साथ हमारी शत्रुता है हमारे दिल के दरवाजे उनके लिये वद पडे है यह निर्णय हम आसानी से कर सकते हैं हमारे अतर में पडी हुई कैंसर की गाठ को हमने वखूवी पहिचान ली है। अव हमें उसका ऑपरेशन करना है ।

चमत्कार देखना है

हमारे माने हुए शत्रुओं की लिस्ट तैयार है उस लिस्ट को हाथ में उठाइये, शक्य हो तो दिन में तीन वार, नहीं तो कमसे कम एकवार लिस्ट में रहे हुए , व्यक्ति को मानसपटल पर उभरने दीजिये व्यक्ति का स्पष्ट चित्र सामने गुनगुनाइये *"भगवान इनका भला करे इनका भी कल्याण हो"* अन्त करण , भावना को वार-वार दोहराइये ।

कदाचित् कोई एक व्यक्ति आपको वेगुनाह परेशान कर रहा है पीडा पहुँचा है आप उससे अत्यन्त त्रस्त हो चुके है

आप पति है, पत्नी आपको चैन की सास लेने नहीं देती

आप वाप है, वेटे आपको हरतरह से तग कर रहे है

आप नोकर है, एम्पलोयर से दु खी है, शेठ से परेशान है, ऑफिसर आपको नाकों दम ला रहा है

कुल मिलाकर आप चारों ओर से परेशानियों से घिर चुके है आपको लगता

है ये सभी इडियेट मुझे निष्कारण नोच रहे है

और आप इस परेशानी से छुटकारा पाना चाहते है तो यह रटण चालु कीजिये "*भगवान उन्हे सद्‌बुद्धि दे*" इस सद्‌भावना का एक न एक दिन अवश्य चमत्कार होगा

मामूली मैल से गदे हुए कपडे कम महेनत से धोये जाते है और कोलर जैसे भाग जो ज्यादा मैले हो उन पर विशेष महेनत पडता है साबून भी ज्यादा लगाना पडता है । और घिसने भी ज्यादे पडते है

इसी तरह विश्व के बहुसख्यक जीवों के साथ "शिवमस्तु " की मगलमयी भावना ही मैत्रीपुल बाधने में काफी है, मगर जिन-जिन व्यक्तियों के प्रति कटुता वैमनस्य-वैरभाव आदि सुप्त या जाग्रत हो उनके साथ मैत्री बाधने के लिये विशेष प्रयास करना पडता है उनका सविशेष स्मरण कर विशिष्ट रूप से मैत्रीभावना को क्रियान्वित करनी पडती है और तभी कटुता वैमनस्य के वे डाघ साफ होते है, काले कोयले जैसी अपनी आत्मा तब ही राजहस के पख के समान उज्जवल ओर कान्तियुक्त बनती है ।

ACTION & REACTION

"हम भला, कितनी भी मैत्रीभावना की बातें कर आचरण में लाये शत्रुता के भाव सो फुट खोदकर जमीन में गाढ दे तो भी सामनेवाला व्यक्ति शत्रुता थोडे ही छोडेगा? और यदि वह न छोडे तो उसके द्वारा दिया गया त्रासजनक Atmosphere हमारे अतर में शत्रुता के भाव को पुन प्रस्थापित किये बिना थोडे ही रहेगा? शत्रुता तो वापिस आ ही धमकेगी न ।" नहीं, ऐसी शका-कुशकाए करने की जरूरत नहीं है निराश बनने की बात ही फिजुल है, निकाल दो उसको मन से बाहर । आपके दिल की भावनाऐं अव्यक्तरूप से सामनेवाली व्यक्ति पर अपनी असर जमाती है ऐसे एक नहीं अनेक दृष्टात मौजूद है । आती है न वह बात कि

एक मध्यमवयकी प्रौढ स्त्री अपनी जवान बेटी को साथ लिए एक गाव से दूसरे गॉव जा रही थी । एक ऊटसवार भी ठीक उसी दिशा में जा रहा था। प्रौढा को विचार आया, "मेरी लाडली फूल जैसी कोमल है चलने की आदी नही है" अत उसने ऊटवान को रोका "भैया । मेरी लाडली को भी ऊट पर बिठा दो न ।" ऊटवान ने सोचा "क्या मतलब है मुझे इस बुढिया से या इस जवान लडकी से? न लेना न देना नाहक में मेरे ऊट को क्यों परेशान करु?"

हसा । तूँ झील

और उसने मना कर दिया । थोडा आगे गया और उसके मनमें शैतान घुसा । उसको हुआ ऐसी सुदर जवान कली का सहवास मिलता है विना मूल्य तो क्यो खो देना? और वह खडा रह गया । इसी समय उस प्रौढा के मस्तिष्क में भी यकायक विचार कौध उठा मै भी कैसी पगली । न जान न पहिचान अच्छा हुआ उसने मना कर दिया अन्यथा मेरी बेटी को वह कुछ कर देता तो? "अच्छा माताजी, आप अपनी लाडली को मेरे ऊट पर विठा दो मुझे कोई हर्ज नही है " "ना बाबा ना, अब तो यह मेरे साथ ही पैदल चलेगी "

"अरे माजी, आप भी कमाल करती है। अचानक क्या हो गया? अभी थोडी देर पहिले तो ऊटसवार चौकन्ना हो गया, बुढिया को गध आ गयी क्या? वात का राज मिल गया क्या? प्रौढ स्त्री ने जवाब दिया "भाई। राई के भाव रात को बीते तुम्हारे विचार बदले तो मेरे भी बदल गये ॥

वनस्पति भी रीसेप्टीव

हमारे शुभ–अशुभ विचारों की असर सामनेवाली व्यक्ति पर पडती है इसमें कोई शक नहीं

अरे। व्यक्ति तो क्या, वनस्पति पर भी हमारी शुभ–अशुभ विचारधारा की असर होती है भावों की धारा को वे रिसीव करते है और उससे वे विकसते भी हैं, मुर्झाते भी हैं ।

अमेरीका में वनस्पति पर अनेक प्रयोग कर वर्षो से गहरा अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक वेकस्टन को विविध प्रयोगों के माध्यम से यह राज मिला है, और उन्होने नोट किया कि यदि वनस्पति के साथ लाइडीटेक्टर मशीन जोड दी जाय .२चात् उसके प्रति स्नेह और धिक्कार बरसाया जाय तो उन–उन भावों के अनुरूप । के ग्राफों में भी बदलाव आता है।

'अपने को जो परेशान करे उसका भी भला हो' यह प्रार्थना निशदिन प्रभु , पास करने से और दिल में सद्भावना की ज्योति प्रगट करने से एक दिन च होगा सचमुच आपका दिलोजान शत्रु आपका जिगरजान मित्र बन जायेगा

श्रीयोगवाशिष्ठ में भी कहा है --

अमृतत्वं विषं याति सदैवामृतवेदनात् ।
शत्रुर्मित्रत्वमायाति मित्रसंवित्तिवेदनात् ॥
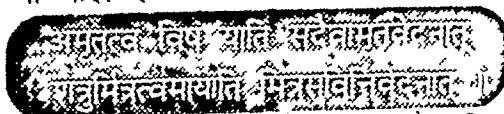
अर्थ– "यह अमृत है" "यह अमृत है" ऐसा सदैव चिन्तन करने से विष भी अमृत बन जाता है। ठीक उसी तरह, "यह मित्र है" "यह मित्र है" ऐसा सोचने

से शत्रु भी मित्र बन जाता है ।

और यह भी सच है कि विश्व के सकल जीव जन्तुओं के प्रति सद्भाव और उनकी हितकामना एक विशिष्ट प्रकार की पुण्यराशि अर्जित करवाती है ।

श्रेष्ठ पुण्य

विश्व का सर्वश्रेष्ठ जिननामकर्म (जिसके उदय से जीव सर्वपूज्य जिनेश्वर भगवान बनते है) और उसके साथ प्रकृष्ट कक्षा के सौभाग्यनामकर्म, आदेयनामकर्म, यशनामकर्म आदि पुण्यों को उपार्जित करवाने में जीवों का *"सवि जीव करु शासन रसी"* "विश्व की संपूर्ण जीवसृष्टि ससार में भयकर वेदनाओं को भुगत रही हैं कैसे उनकी मुक्ति हो?" इस प्रकार का सद्भाव ही तो काम लगता है।।

इस सद्भावना के प्रताप से सौभाग्यादि पुण्य कितने श्रेष्ठ कोटि के होते है इसका अदाज इसी से लगाया जा सकता है कि अभी तो परमात्मा माता की कुख मे पधारे ही है और इन्द्र का आसन हिलने लगता है, कोई तार नहीं फोन नहीं सब कुछ प्रभु के पुण्यप्रभाव से अपने आप होने लगता है इन्द्र परमात्मा की भक्ति मे तभी से जुड जाता है ।

जन्म होते ही रूमझूम-रूमझूम करती हुई **56** दिक्कुमारिकाऐ हाजिर हो जाती है आनद से रास-गरबा लेती है । परमात्मा को अपने हाथो में और गोद मे लेने के लिये पडापडी करने लगती हैं और ज्योहि अपना नबर लगे, वे अप्रतिम आनद से उद्वेलित हो उठती है। और हॉ, ये छप्पन दिक्कुमारिकाए कोई ऐरी-गेरी सामान्य देवियाँ नहीं, किन्तु हजारों देवों की साम्राज्ञी होती है ।

ऐसा तो अनगिनत सौभाग्यसुख मिलता था परमात्मा को परतु इस सब का मूल कौन है? वही विश्वप्रेम की सद्भावना जिसमें पराकाष्ठा की मैत्री होती है।

May God Bless You

करीबन दो वर्ष पूर्व ही गुजरात के ख्यातनाम वर्त्तमान पत्र में अमेरीका का एक प्रसग पढने में आया

"न्युयोर्क मे सरकारी स्टेट बेंक की एक ब्राच है, जिसका व्यवहार सारी दुनिया के बेंकों से है । हर दिन लाखो और करोडों डोलरों का हिसाब किताब लेन देन चलता रहता हैइस बेंक मे ६ काउटरों की व्यवस्था है जहॉ से व्यक्ति पैसे ले सके और ६ ही काउटर ऐसे थे जहाँ व्यक्ति पैसे जमा करवा सके पैसे देने के जो ६ काउटर थे उसमे एक काउटर पर **जहोन पीटर** नामका क्लर्क बैठता था

हसा । तूँ झील

अजीब बात तो यह थी कि अन्य काउटर की अपेक्षा इस एक काउटर पर लोगों की अपार भीड जमी की जमी रहती और दूसरे काउटरों पर कैशियरों के मुख पर हवाइयाँ ऊडने लगती । जहोन पीटर हमेशा व्यस्त रहता था । लोग भी अजीबोगरीब थे, अन्य काउटर पर जाकर तुरत अपने चेक की क्लीयरींग हो सकती थी फिर भी घटों की प्रतीक्षा के बावजूद भी पीटर के हाथ ही चेक क्लीयरींग हो, ऐसा आग्रह रखते थे ।

यह देखकर बेंक मेनेजर के दिमाग में शका का कीडा रेगने लगा आखिर माजरा क्या है? समय को बरबाद कर पीटर के वहाँ एरलडाइट की तरह चिपकू अमेरीकन उसे मूर्ख प्रतीत होते थे ।

उसने पाच-सात व्यक्तियों को अलग-अलग बुलवाकर इन्टरव्यु ली । सभी ने अपने अपने विचित्र अनुभव व्यक्त किये सुन कर बैंक मेनेजर दग रह गया।

एक व्यक्ति ने कहा कि पीटर के हाथों से पैसे लिये और उसे व्यापार में प्रोफिट अच्छा हुआ ।

दूसरे ने कहा - "मेरा मन कहता है कि मैं पीटर से ही पैसा लूँ "

तीसरे ने अपने अनुभव का राग अलापा कि "पीटर से पैसे लिये हो तो काम आसानी से बन जाता है "

चौथे ने अपना स्वार्थ बताया कि पीटर के हाथों से लिये हुए पैसों से भरी सूटकेस दो बार खो गई थी, फिर भी वापिस मिल गयी एक नोट भी ईधर उधर नहीं हुई । कलियुग में इससे बढकर और आश्चर्य क्या हो सकता है?

पाचवें व्यक्ति से जब पूछा गया तब वह बोला "मेनेजर साब । यदि पीटर '١ч का नाम मेरे जीवन से नहीं जुडता तो मै कहीं का नहीं रहता । यदि ;. समय हो तो मैं अपनी रामकहानी सुनाऊँ?

मेनेजर की उत्सुक्ता बढ गई उसको अब धीरे-धीरे लगने लगा था कि 'ट१ कोई देवदूत हे उसने ग्रीन सिग्नल दिया ➛ "ओके गो ओन ।"

आसु पोंछकर खोया-खोया-सा वह व्यक्ति बोलने लगा "मेनेजर साब । आज मै स्वर्ग में हूँ । प्रताप पीटर महाशय का है । परतु भूतकाल में मैं एक भयकर व्यसनी था । एक वेश्या के पीछे मैं अपना तन बर्बाद कर रहा था मन सत्त्वहीन बना चुका था । मीसिस जानती थी और कोशिश भी बहुत करती थी समझाने की पर मै ठहरा पशु विवेकहीन जानवर। मुझ पर उस सुशील नारी की अच्छी बातों की कुछ भी असर नहीं होती थी मुझे तो वेश्या के सहवास में स्वर्ग(?)

जैसा सुख और प्रेम का आभास होता था और न जाने कितना धन मै लुटा चुका था उस प्रेमरहित औरत के पीछे ॥

एक दिन बैंक से पैसे लेकर मै सीधा वेश्या के पास जाने वाला था । योगानुयोग मेरा चेक क्लीयरेन्स के लिए मि पीटर के पास आया। काफी भीड थी उनके काउटर पर । फिर भी किसी अदृश्य आकर्षण से मैं वहीं बैठा रहा इत्मीनान से प्रतीक्षा करता रहा बेंच पर बैठकर दिवास्वप्नों से अठखेलियाँ करता रहा मेरे सामने बस एक ही मुखडा था उस वेश्या का। स्वर्ग की परी जैसी मेरी सुदर सुशील पत्नी घर में दुबक कर आठ-आठ आसु गिरा रही थी पर उसका चेहरा मैं मस्तिष्क में उभरने ही नहीं देता था

मि पीटर ने मुझे पैसे गिनकर दिये मैंने लिये ओर थोडा चला ही था कि अचानक मेरे मनमें विचार आया आह । आज दिन तक वेश्या के पीछे मैने कितना धन वेस्ट कर दिया और उसके कारण मैंने प्रेम और स्नेह की दिव्यमूर्ति ऐसी सुशील पत्नी को कितनी परेशान की? धिक्कार हो मुज पापी को पशु को॥ "और उसी दिन उसी समय मैंने दृढसकल्प किया कि मर जाना कबूल है पर वेश्या का मुख नहीं देखूगा ।"

बेंक से निकल कर मैं सीधा चर्च में गया और परमात्मा का आभार माना कि "हे प्रभु। ऐसा सद्‌विचार देकर तूने सचमुच बहुत बडा उपकार किया है, और मेरा जीवन बचा लिया है" उसी रात को एक सपना आया और उसमें मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो भगवान मुझे कह रहे है "भाई । सद्‌विचार हमने नहीं, उस केशियर ने दिया है"

दूसरे दिन आया सीधा बेंक में तो यह भी मार्क किया कि मि पीटर के यहाँ रोजिदा भीड रहती है तब लगा कुछ न कुछ बात जरुर हे - चमत्कार जरुर है बस उसी दिन से निर्णय कर लिया कि पैसे पीटर महाशय के हाथों से ही लेने ॥

बात सुनकर मेनेजर आश्चर्यमुग्ध बन गया

छठ्ठी व्यक्ति महिला थी उसका नाम था जीमी वर्थ उसने भी अपनी ओटो-बायोग्राफी-आत्मकथा सुनायी

मेरे पति का नाम रोवर्ट वर्थ है । हम दोनों का जोइन्ट एकाउट आपकी ब्राच मे चालू है । दोनो की सही काम लगती है पैसे उठाने में मैं जिस ऑफिस मे काम करती हूँ वहीं एक नौजवान को मैं अपना दिल दे बैठी हमारी रगरेलियों

हसा । तूँ झील

के बीच पति विघ्नरूप था इसलिये मेरे यार ने सुझाव दिया —•—

"तुम्हारी भी तो सही चलती है । क्यों न बैंक से पूरा पैसा उठाया जाय? फिर हम दोनों दूर–दूरप्रदेशों में जाकर शादी कर लेंगे और जीवन की मजा लुटेंगे। यार के प्रेम की मैं दीवानी थी, अधी थी मुझे उसकी आइडिया जॅच गई प्लान बिल्कुल ठीक था

चेक में बहुत बडी राशि लिखकर मैंने अपनी साइन की सितारे कुछ अच्छे थे, इसलिए मेरा चेक मि पीटर जहोन के पास गया पैसे लेकर मैं बेंक की सीढी उतर रही थी मेरा मन दौडने लगा विचारों का चक्र गतिमान हो गया "अरी पगली । तू यह क्या कर रही है? जरा विचार तो कर जीवन के प्रश्नों में जल्दबाजी अच्छी नहीं" मैं उसी क्षण वापिस मुडी और बैंक की बैंच पर बैठकर सोचने लगी

"र्चच में जाकर खुदा की साक्ष्य में जिसका तूने हाथ पकडा उस पति का तू विश्वासघात कर रही है? यह तो सोच, यह पैसा जब समाप्त हो जायेगा, फिर क्या होगा? शाति से विचार कर और कदम बढा " तत्क्षण उस राशि को स्लीपबुक में लिख ली और पुन बैक में जमा करवा दी

फिर धीरे–धीरे मैं मेरे मन को स्थिर करने लगी और पति के प्रति वफादार रहने का निर्णय कर लिया

मैं एक बेवफा नीच औरत थी, पर मि पीटर से प्राप्त पैसों ने कमाल किया और मेरे जीवन में 'टर्निंग पोइट ऑफ द लाइफ' का चमत्कार, हुआ बस, उसी दिन से मैने निर्णय कर लिया कि मेरे सभी चेकों की क्लीयरींग

मेनेजर ने उस बहिन के रवाना तो कर दिया मगर इन सभी अनुभवों के कौनसी अदृश्य शक्ति काम कर रही है यह राज उसे नहीं मिला वह इतना मज्ञ पाया कि "जरुर। मि पीटर के पास कोई मत्रशक्ति या दिव्यशक्ति है"।

रहस्य का पर्दा हटाने के लिये छुट्टी के दिनो में उसने मि पीटर को अपने आमत्रित किया । उचित मान–सन्मान देकर अत्यत विनम्रता से उसने मि पीटर को विनती की कि आप इस रहस्य को सुलझाये "क्या सचमुच ही आपके पास कोई मत्रशक्ति या दैविक सहाय है क्या?"

तब केशियर ने अर्ज की "मेनेजर साहेब । न तो मेरे पास कोई मत्रशक्ति है न दिव्य सहाय है और न हि मैं किसी चमत्कारिक जाप को जपने वाला साधक । आप देख ही रहे है मैं तो एक सीधा–सादा सा व्यक्ति हूँ बेंक की

री कर अपना गुजरान चला रहा हूँ

हॉ, इतना जरुर कह सकता हूँ मेरे पिताजी चर्च के पादरी थे माता कारी थी दोनों का जीवन पवित्र था। बचपन से ही मेरे पूज्य पिताजी मुझे दम चर्च ले जाते और प्रार्थना करवाते । मेरी मॉ ने मुझे यह बात घूँट कर ला दी थी कि अपने सपर्क में आने वाले व्यक्ति का हमेशा दिल से भला चाहना हे वह मित्र हो या शत्रु।। इस सुनहरी बात को मैने जीवन में उतार दी

इसीलिये जब कभी व्यक्ति मेरे पास चेक क्लीयरींग के लिये आता है तब न ही मन मैं तीन बार प्रार्थना करता हूँ 'May God bless you' रमात्मा आपको आशीर्वाद दे आपका भला करे" यह प्रार्थना जब कोई टोकन दे तब, मैं पैसे की गिनती करु तब और जब पैसे सामने वाले व्यक्ति के हाथों में देता हूँ तब हर समय यही प्रार्थना करता हूँ और कुछ भी नहीं इसको आप चाहे सो मान सकते है मत्रजाप कहो तो यह और दिव्य सहाय कहो तो यह जो भी कुछ है वह यही है "

अपने सपर्क में आये हुए व्यक्ति के प्रति सद्भाव रखने वाले केशियर का भी यदि सौभाग्य, यश, आदेय आदि इतने बढ जाते है कि प्रतीक्षा करनी पडे समय बर्बाद हो फिर भी उसी के हाथों से पैसे लेने के लिये लोग चाहते है ओर उस व्यक्ति के हाथों से पैसा मिलने मात्र से ही सद्बुद्धि जग जाती है Turning point of the life आ जाता है तो फिर

विश्व के प्राणीमात्र के कल्याण की कामना करनेवाले त्रिभुवनपति श्री अरिहत परमात्मा के सौभाग्य आदि श्रेष्ठ कक्षा के हो जाय और इन्द्र जैसे इन्द्र उनके पीछे बावले होकर सुधबुध खोकर घुमने लगे उनके चरण चूमने के लिये लालायित रहे उसमें क्या आश्चर्य?

वैर की शाति वैर से नहीं

अपने को तो यहाँ यह सोचना है कि जिस व्यक्ति के साथ हमारे अतर मे शत्रुता खडी हो गई है और एक दूसरे के सामने भी देखने को तैयार नहीं है वैसे व्यक्ति के प्रति भी यदि हम दिल से सद्भावना को चितन में लाते रहे तो हमारा भी ऐसा सौभाग्य आदि खडा हो सकता है जिससे शत्रु के मन में घुसपेठ कर चुकी शत्रुता खतम हो जाय और अपने साथ मित्रता के लिये वह अपने आप हाथ बढा दे

चूंकि वैर से वैर तो कभी शात होता हुआ न देखा है न दिखाई देता

हसा । तूँ झील

है । आग को शात करना है तो पानी ही उडेलना होगा पेट्रोल कदापि नहीं वर्ना आग और भडकेगी प्रलयाग्नि का भीषण रूप भी धारण कर सकती है और हर एक को झुलसा देगी

वेर के सामने वैर रखो वह और बढेगा एक गुजराती गीत की मनहर और कर्णप्रिय कडी याद आ जाती है

वैर थी वेर शमे नहीं जगमा
वैर थी वैर वधे जीवन मा

पुन यह नोट कर रखिये अपने दिल और दिमाग की डायरी मे
आग से आग कभी शात नहीं होती पानी चाहिये
शत्रुता से शत्रुता कभी नष्ट नहीं होती मैत्री चाहिये ।

इसीलिये

क्या
- लाख मूल्यवाली धर्मक्रियाओं का लाख मूल्य करना है?
- सृष्टि के जीवमात्र के प्रति मैत्री से चित्त को वासित करना है?
- परमात्मा को दिल में प्रतिष्ठित करने है?
- किसी व्यक्तिविशेष के प्रति दिल में पैदा हुई कटुता दूर करनी है?
- हर एक के लिये दिल के दरवाजे पर (द्वार पर) 'वेलकम' का बोर्ड लगाना है?

तो

जिस किसी भी व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, कौटुम्बिक, सामाजिक, आर्थिक, आदि की आपत्तियों में अपना दिल अव्यक्त रूप से दिल के किसी कोने में ... भी आनन्द उभरने लगे

उन–उन व्यक्तियों का एक लिस्ट इसी समय तैयार कर दीजिए और फिर ...न एक कार्यक्रम बना लीजिये। उस लिस्ट को सामने रखिये और हर एक ...म को पढिये व्यक्ति का चेहरा स्मृतिपटल पर उभरने दीजिये और फिर उस व्यक्ति के प्रति सद्भावना व्यक्त कीजिये, कल्याण की कामना कीजिये । हो सके तो तीन वार इस प्रक्रिया को दोहराइये, नहि तो एक वार तो अवश्य।।। Just Try एक वार अजमाइये अजमा कर देखने में क्या दिक्कत है? कटुता रख कर बहुत सक्लेश किया अव कुछ मीठापन लाइये जीवन में

दिल से शुभ भावना भाते रहे तो कोई छोटे वाप के नहीं हो जायेंगे ।

पर दिल में ऐसी सद्भावना उठती ही नहीं ऐसी यदि आपकी फरियाद हो तो लीजिये सोल्युशन तैयार है

"दिल से शत्रु के प्रति सद्भावना खडी न हो तो भी सद्भावना रखनी शुरु करो चाहे बेमन से ही सही, और परमात्मा के पास जाकर अन्तर्मन से प्रार्थना करो कि "हे परमात्मन् । मेरे दिल में कटुता कम हो और उस व्यक्ति के प्रति सच्चे दिल सद्भावना रख सकू ऐसी दया कर । उसको भी सद्बुद्धि मिले और उसका भी भला हो ऐसा कर"

ऐसा हरदिन करने से वह भावना साहजिक हो जायेगी जिस भाव से हम क्रिया करते है वह क्रिया उन भावों को अभिवृद्ध करती है

जं भावेण कयं पुण किरिया तब्भाव वुड्ढिकरी

सच्ची सद्भावना यद्यपि हमारे दिल में उठी नहीं है फिर भी हम उस क्रिया को चालू रखते है तो एक न एक दिन अवश्यमेव सच्ची सद्भावना प्रगट हो जायेगी

प्राय हर एक व्यक्ति के लिये यह अनुभवसिद्ध बात है, कि दोनों शर्ट सुदर धोये हुए है पर एक को प्रेस किया और दूसरे को नहीं किया तो रोनक में फर्क पडता ही है। प्रेस किया हुआ शर्ट ज्यादा सुदर लगता है, ऐसा क्यों? फर्स्ट क्लास डिटर्जेन्ट साबुन और पानी का सयोग तो बिना प्रेस किये हुए शर्ट को भी मिला तो फिर? हॉ, इसमें सलवटे-शिकनें बहुत पडी हुई है और प्रेस किये हुए शर्ट में सलवटे निकल गई है इसलिये उसकी शोभा बढी हुई नजर आती है

ठीक, उसी तरह हम पूजा करते है सामायिक करते है और विविध सुदर अनुष्ठान भी करते हे परतु यदि किसी एक व्यक्ति के प्रति भी वैरभाव की सलवट रह जाती है तो आत्मा का अपूर्व तेज और सौन्दर्य जगमगा नहीं उठता है, अविकसित ही रह जाता है अन्य व्यक्ति के प्रति दिल में जम कर बैठी हुई उस असद्भावना को निकालने का एक सुदर और सरल उपाय यही है कि बार बार उस व्यक्ति को मित्र मानना और उसी दिशा में चिन्तन करना उस व्यक्ति के हित की कामना हर दिन करते रहना ॥

मुट्ठी भींस कर चलने वाला इन्सान कभी हाथ खुल्ले नहीं कर सकता है। और इसीलिये न तो वह किसीको नमस्कार ही कर सकता है और न ही किसीसे

हसा । तूं झील

शेक हेन्ड भी कर सकता है

तो फिर

वह दूसरों को मित्र कैसे बनायेगा? यदि मित्र हैं भी तो उनकी मित्रता को वह कैसे टिका पायेगा?

इस तरह जो व्यक्ति अपने दिल में गाठ लगा कर घूमता है, वह अपने दिल को कहीं भी खोल नहीं सकता है । तो वह दिल में अन्य को प्रवेश कैसे करायेगा? और मित्र कैसे बनायेगा?

पित्तल का कलश इतना घन होता है कि वह अपने भीतर पानी की एक बूद भी आने नहीं देता इसीलिये न तो वह स्वय ठडा बन पाता है और न ही पानी को ठडा बनने का चान्स ही देता है । अरे और तो और आइसकोल्ड ठडा पानी डाला हो उसमे तो घडी दो घडी बीते उसके पहिले उसे गर्म भी कर देता है । जब कि सूक्ष्म छेदवाला होने से मिट्टी का मटका पानी को अपने भीतर उतरने देता है जिससे स्वय भी ठडा बनता है और पानी को भी शीतलता बक्षता है उसी तरह आप भी अपने शत्रु को अपने दिल में बैठाकर देखिये । आप भी शीतल बनेंगे शात बनेंगे, और वह भी शीतल और शात बनेगा । क्लेश-सक्लेश का ताप दूर हो जायेगा ।

इससे बढकर और कौनसा चमत्कार हो सकता है बोलिये??

शत्रुता से बचने के लिये एक काम कीजिये, अपनी आवश्यकताएँ और अपेक्षाएँ घटा दीजिये अपेक्षाओ जितनी अधिक शत्रुता के चान्सेस उतने ही अधिक

चूकी पत्नी-पुत्र-मित्र-नौकर-चाकर आदि से जिन अपेक्षाओं को हम रखते की अपूर्त्ति से हमारे क्रोधआदि कषाय भडक उठते हैं और नित नई शत्रुताऐ जाती है

न सिद्धात यह नहीं कि गरीबी को मिटाने के लिये गरीबों को मिटाओ

motto है *अपनें शत्रुओं को मिटाने के लिये शत्रुता को मिटाओ।।*
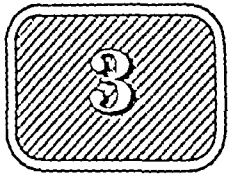
एक श्रोता को अपनी मीसीस पर इतना राग था कि व्याख्यान में भी भाईसा'व बारबार मुखचद्र देख ही लेते थे । प्रवचनकार ने यह बात देख ली । इसीलिये व्याख्यान पूरा होते ही महाराजश्री ने महाशय को बुलाया और तीव्रराग के पाप से बचने के लिए उसको उपदेश दिया "जगत स्वार्थ का साथी है चाहे पत्नी हो या परिवार । स्वार्थ खत्म कि मित्र भी शत्रु बन जाते है इसलिए स्नेह के बॅधनो को तोडते रहना चाहिये"

यह सुनते ही महाशय तपाक् से बोल उठे "महाराजजी । आप भी कमाल है चार दिन के पहिले आपने ही मैत्रीभावना के प्रवचन में कहा था सृष्टि के तमाम प्राणी अपने मित्र है, कोई भी शत्रु नहीं है सभी पर स्नेहपरिणाम रखना चाहिये । और आज आप ठीक विपरीत कह रहे है । मेरी वाइफ को मैं चाहता हूँ उसके प्रति मेरा साहजिकस्नेह है और आप उसको तोडने का कह रहे है?"

तब महात्माजी ने कहा देखो भाग्यवान । जैसे मैत्री आदि चार भावनाएँ है वैसे ही अनित्यता आदि बारह भावनाएँ भी तो है उन्हे भी हरदम चित्त में लाकर चिन्तन के द्वारा चित्त को भावित करना चाहिये।

इन बारह भावनाओं को बतानेवाले भी वे ही ज्ञानी भगवत है ।

अशरण भावना मे.. "ये स्नेही स्वजन माता-पिता-पुत्र-पत्नी-परिवार वगेरे कोई भी शरणभूत नही है न मौत से मुझे कोई बचा सकता है न दुर्गति से इसलिये इस सपूर्ण सृष्टि मे मैं अशरण हूँ" ऐसी भावना दिल में जगानी चाहिये।

ससार भावना मे . "ससार में प्राप्त हुए सभी स्वजन स्वार्थ के साथी है पचड पवन ने विशाल वटवृक्ष को जडमूल से उखाड फैका सारे के सारे पक्षी रोने लगे क्यो? क्या वे उस वृक्ष की यादो में आसू बहा रहे है? अथवा अपना घोसला-नीड का आधार नष्ट हो गया इसलिये रो रहे है? स्वार्थमय विश्व में नि स्वार्थ प्रेम मिल नही सकता " ऐसी सुदर भावना से व्यक्ति ससार की आसक्ति को घटा सकता है ।

एकत्व भावना में .. "जन्मा हूँ अकेला कर्मों को बाधता हूँ अकेला कर्मों को भोगना पडेगा अकेला दु खों को सहता हूँ अकेला मरता हूँ अकेला सब कुछ बस अकेला ही अकेला है एलोन इन द वर्ल्ड । तो फिर नाहक सारी दुनिया की झझट से क्या? एकला चलो रे।।"ऐसे चिन्तन में सदा मशगुल रहना

अन्यत्व भावना में "शरीर, धन, कुटुम्ब, पुत्र, पत्नी, परिवार आदि सब कुछ पराया है *में नहीं केरा को नहीं मेरा क्यू करे मेरा मेरा तेरा है सो तेरे पास और सभी अनेरा आतमध्यानमा रे अवधु सदा मगन में रहना* अवधूत **योगी आनदघनजी** कहते है सब कुछ तुमसे पर है तेरा कुछ भी नहीं और जो तेरा है वह तेरे पास ही है । अनत ज्ञान अनतदर्शन अनतचारित्र आदि तेरे सहज स्वाभाविक गुण बिल्कुल तेरे पास ही है "

आदि विविध भावनाओं से भी अन्त करण को वासित करना है "

भावनाओं मे विरोधाभास?

यह सुनकर श्रोता महाशय दुविधा के भवर में जा घुसे अरे महाराज साहेब। मुझे तो कुछ समझ में नहीं आती बात आपने जो फरमाया उसके अनुसार तो यह तय हुआ कि जिन-जिन व्यक्तियों के साथ अपना मधुर सबन्ध स्थापित हुआ है उसे तोड डालना दिल में जो स्नेह अकुरित हुआ है उसे कुचल देना जब कि मैत्रीभावना में सृष्टि के प्राणीमात्र के साथ स्नेहसबन्धों को स्थापित करना है कटुता को भगाकर दिल में माधुर्य को भरना है कोई भी व्यक्ति मेरा दुश्मन नहीं है सभी मेरे दोस्त है ऐसी सुदर भावना के बल पर शत्रुओं को भी गले लगाना है टूटे हुए तार को पुन जोडना है

तो क्या पहलेवाली बात और इस बात में विरोध नहीं है?"

पाठकगण । आपको भी शायद यह विरोधाभास अखरता होगा परतु एक कर लीजिए अपनी दिल की डायरी में सर्वज्ञभगवत की वाणी हमेशा फॉल्ट ही होती है उसमें विरोधाभास या विसगति का अवकाश ही नहीं है

आइये हम कुछ गहराइ में उतरे "गहरे पानी पेठ" मोती सागर के तट पर बिखरे हुए नहीं होते है रहस्य की बातें यूही नहीं मिलती कुछ गहराईमें उतरना पडेगा यह है छुपा हुआ रुस्तम रहस्य

"अवर अनादिनी चाल नित नित तजीएजी"

भारी अज्ञानता

अनादिकाल से यह आतमराम अज्ञान से घिरा हुआ है । राग और द्वेष से परवश है । और कर्म जैसे नचाता है वैसे नाचता रहा है। इन्हीं अज्ञानआदि दोषोंका मारा यह आतमराम मोहराजा को अपना मित्र मानता रहा है जिस मोहराजा ने इसको भयकर से भयकर कष्ट दिए । जो कट्टर में कट्टर शत्रु है उस मोह को यह जिगरजान दोस्त मान बैठा है उसे हितेच्छु जान रहा है । इसीलिये दरअसल जो हितेच्छु है ऐसे धर्मराज को हृदयसिहासन पर बिठाने के बदले मोहराजा को बिठा चुका है। मोहराजा जो भी आज्ञा करे 'जी हुजूर', कहकर अक्षरश स्वीकार लेता है और आनदित होकर काम करता है ।

पर हाय। आत्मा की उससे अवनति ही हुई है. चूकि वह जानीदुश्मन है वह कभी अच्छी और आत्मा का हित हो वैसी आज्ञा करता ही नहीं है आत्माके कल्याण की कामना तो उसके खून में नहीं है । बाई चान्स ऐसी आज्ञा कर दे तो आत्मा का हित हो जायेगा और आत्मा मोक्ष में रफूचक्कर हो जायेगी । एक गुलाम कम हो जाएँ? नहीं ऐसा बिल्कुल नहीं चलेगा अत आज्ञा देने में मोहराजा बडी ही सावधानी रखता है। कहीं ऐसा न हो गुलाम नौ–दो–ग्यारह हो जाय मोक्ष में छू हो जाय ॥

मधुबिन्दु जैसे वैषयिक क्षणिकसुखों को बताकर मोहराजा आत्मा को विपरीत अहित करनेवाली आज्ञाए करता है बिचारा अज्ञान जीव। क्षणिक वैषयिक सुखों की चकाचौंध में चुधिया जाता है मोहराजा की आज्ञाओं को हितकर मानकर न करने जैसे पाप करता है भयकर कर्म बाधता है और अपने हाथों से अपना सत्यानाश कर बैठता है॥

जैसे विज्ञान की चकाचौंध में उलझा हुआ बिचारा अज्ञान मूर्ख भारतीय। जिस सस्कृति और जीवनपद्धति के बलबूते हजारों वर्ष तक विश्व की समृद्धियों के शिखर पर बैठा हुआ था उसे तिलाजलि देता जा रहा है और अग्रेजों की=पश्चिम की हर एक बात–सलाह को अपूर्व हौसले के साथ अपनाते जा रहा है परिणाम हर पल एक से बढकर एक विनाश को सिर पर ढो रहा है कौन उस पगले को समझाये कि भाईजान। पश्चिम की तरफ क्यों आख फाडे जा रहे हो? पूर्व की तरफ नजर कर पश्चिम में तो अस्त ही देखने को मिलेगा उदय नहीं । अभ्युदय देखना है तो पूर्व की ओर मूह रख॥

हसा । तू झील

दु:खपरपराका कारण

बिचारा अज्ञान जीव भी वैसा ही है । मोहराजा की फरमाइशों का पालन इसने पाच पचीस बार नहीं लाखों करोडों बार भी नहीं पर अनतीवार कर दिया है उसकी हर आज्ञा को इस अभागिये ने सर आखो पर उठायी है ननु नच करने की तो बात ही नहीं इसलिये उसकी आज्ञाका पालन उसका ढर्रा बन गया है रोजमर्राकी जिदगीका एक अभिन्न अग बन गया है बिल्कुल सहज। बिल्कुल स्वाभाविक । इसी बात को ज्ञानीपुरुष कहते है

"अनादिनी चाल"

अपनी इस कार्यपद्धतिसे वह इतना अभ्यस्त हो चुका है कि जीव उन आज्ञाओं का पालन अत्यत सरलतासे और साहजिक रीतिसे कर सकता है जबकि आत्माका एकान्तहित करने वाली आज्ञाए उसे अखरती है विचित्र लगती है उनमें वह जीव एडजस्ट ही नहीं हो पाता

परतु बेचारा जीव। अज्ञान है न। अपने अनुभवों पर से भी इतना नहीं समझ पाता कि "एकके बाद एक ऐसी अनादि की चाल पर मै चलता ही रहता हूँ और दु खों की परपरा उत्तरोत्तर वढती ही जा रही है । मैं सुखके पीछे दौडता हूँ और दु ख मेरा गला घोंटता ही रहता है न सुख मिलता हैऔर न ही दु ख का पिड छूटता है।

आखिर बात क्या है? हो न हो इन दु खों का कारण मेरी उल्टी चाल–चलन ही होनी चाहिये मोहराजा का दासत्व ही होना चाहिये ।

हो सकता है कि मैं उल्टी चाल–चलन चलू और तुरत में फल न भी दु ख न भी आये किलो–डेढ किलो वरफी याहोम कर ली हो तो भला, मतलब यह थोडा ही है कि तुरत ही सडास की विझिट लेनी पडे दस ;` जाते है और मजा चखने को मिलता है। इसलिये यदि मुझे दु खों का लाना है तो इस अनादिकी सी रीति–भात छोडनी ही पडेगी ।"

मोहराजा : प्रच्छन्नशत्रु

आतमरामकी बुद्धिको मिथ्यात्वने जकड दी है, इसलिये वह उपर्युक्त सीधी–सी बात भी समझ नहीं पा रहा है फिर भी कोई सद्‌गुरु उसे मिल जाय तो उने यह वात समझाते है समझनेपर वह जिज्ञासु वनता है कि 'अव मुझे क्या करना चाहिये?'

करुणासागर सद्‌गुरु उसे वताते है कि → 'भाग्यवान् । तूँ जिने अपना

हितेच्छु मान रहा है वह सही मायनेमें तेरा दुश्मन है । आस्तीन का साप है । अत पहिला काम तो यह करना होगा कि तुम्हारे हृदयसिहासनसे उसे पदभ्रष्ट कर और फिर विश्ववत्सल परमहितैषी धर्मराजा श्री अरिहत परमात्माका उस खाली सिहासनपर अभिषेक कर तदनतर वे तारक प्रभु जैसी आज्ञा करे वैसा करने के लिए कटिबद्ध बन "

पर प्रभो । परमात्मा की किस पल कैसी आज्ञा है यह मुझे कैसे पता चलें? मोहराजाकी आज्ञा को समझना मेरे लिए बडी बात नहीं है चूकि बिलकुल सहजरूप से ही तदनुकूल आचरण हो जाता है लेकिन परमात्माकी आज्ञाकी बात तो ऐसी नहीं है तो प्रभो । आप ही फरमाईये मैं करु तो क्या करु?"

जिज्ञासु आत्माको सद्‌गुरु सक्षेपमें परमात्माकी आज्ञा समझाते हैं → *"अवर अनादिनी चाल नित-नित तजीयेजी"* साधना किए बिना मन-वचन और काया की प्रवृत्ति सहजरूप से जो भी होती है वह अनादिकी चाल चलन है वह सब कुछ मोहराजा की फरमाइश-आज्ञा का प्रताप है । उसका सपूर्ण बहिष्कार करो त्याग करो और यथासभव उससे विपरीत करो यह जिनेश्वर भगवान की आज्ञा है

अणुसोयो संसारो पडिसोयो तस्स उत्तारो

मोहराजा की आज्ञा से विपरीत चलना ही हितकर है श्रेयस्कर है एव आत्मा को सुख, शाति और समाधि देनेवाला है ।

'यह खाऊँ वह खाऊँ' ऐसा सहज होता है और तपश्चर्या करनी यह बात नई लगती है उसमें मन को दबाना पडता है । इसीलिए खाऊँ-खाऊँ करना मोह की प्रवृत्ति है और तपश्चर्या करनी यह परमात्माकी आज्ञा है ।

स्वय के गुण और दूसरों के अवगुण शीघ्र और सहजता से दिख जाते है, जबकि अपने दोष और अन्य के गुण सरलता से नहीं दिखते है । अत अपने गुण और दूसरों के दोष देखना आत्मा के लिए अहितकर बात है, और दूसरों के गुण एव अपने दोष देखना अपनी आत्मा के लिए हितकर बात है ।

स्वय की बडी भूल भी छोटी मानकर "अरे ऐसी तो भूलें हो जाती है मानवमात्र भूलका पात्र ऐसी भूलों को तो माफ कर देना चाहिए" ऐसी मान्यताऐं अतिसहजतासे मन में रमण करती हुई देखी जाती है। अन्य की छोटी सी भूल को भी राई का पर्वत कर "ऐसे कैसे चलाया जा सकता है? भूल की सजा करनी ही चाहिए उसके बिना भूल सुधरेगी ही नहीं " ऐसे भाव मनमस्तिष्क

हसा । तू झील

में सहज ही उभरने लगते है । इनसे विपरीत भावों को खडा करने में वडी कठिनता महसूस होती है। इसलिए यह निर्णीत किया जा सकता है कि मोहकी आज्ञा कौन-सी है? और उसके विपरीत परमात्माकी आज्ञा कौनसी है?

प्रथम बात आत्माको सक्लेशआदि करवाती है, जवकि दूसरी वात आत्मा को समाधि आदि अर्पित करती है । जीवन के प्रत्येक प्रसगों में यह चालचलन प्रतिबिम्बित है, इसलिए ज्ञानी भगवत कहते है *"अवर अनादिनी चाल नित नित तजीयेजी"*।

साहजिक ममता - शत्रुता

अस्तु, प्रस्तुत में हम कुछ विचारविमर्श करे । स्वजन परिजनों के प्रति सहजरूप से ममत्वभाव इतना जोरदार हो जाया करता है कि आत्माराम उसका मारा अनेकविध पापाचरण करने के लिए तत्पर बन जाता है

इसके सामने जिस व्यक्तिके प्रति उसे लेशमात्र भी शका हो जाय कि फलॉ-फलाना व्यक्ति मुझे परेशान करने पर उतारु है तो उसकी खैर नहीं समझो मनमें उस व्यक्तिके प्रति शत्रुताके भाव पनपने लगते है धीरे-धीरे शत्रुता इस हद तक पहुॅच जाती है कि, भाई'साव इसी सोच में डूबे रहते है कैसे उसकी नाकों दम लाऊॅ? वह तबाह कैसे हो जाय? कुछ भी हो इन असद् विचारों के बल वह कौन-सा अकार्य अछूता रखेगा? कह नहीं सकते।।

स्वजनों के प्रति ममत्व और शत्रुओं के प्रति शत्रुता विल्कुल सहजता से होती हुई देखी जा सकती है यह हर एक व्यक्ति की अनुभवसिद्ध वात है इसीलिए यह मोहाज्ञा है और आत्मा का अहित करनेवाली है । अत त्याज्य अर्थात् ।ङ` जैसी है । इन दोनों भावों में पहली जो वात थी उस अनादिकी वक्र चालको ,, के लिए ॲटमवम है अनित्य, अशरण आदि भावनाऐ जिससे वैराग्यभाव होता है स्वजनों का मोह नष्ट होता है

दूसरी टेढी चालको तोडने के लिए मैत्रीआदि भावनाऐं है जिनसे वात्सल्यभाव है ।

रथ के दो चक्र

आत्मा एक रथ है मोक्ष को लक्ष्य वना कर साधनाके पथ पर उसे आगे वढना है . आजके कलयुगमें विज्ञानके वल कई आविष्कार हुए है टु व्हीलर, थ्री व्हीलर, फोर व्हीलर, सीक्स व्हीलर आदि कई शोधें हुई है । परतु ऐसा कोई वाहन या गाडी हाई-वे पर या सीटी ट्राफिक में दौडती हुई नजर नहीं आयी जिमका

एक ही पहिया हो।।

आत्मरथको भी साधनाके पथपर दौडनेके लिए दो चक्रो की आवश्यकता रहती है वैराग्यभाव और वात्सल्यभाव, ये दोनों चक्र जैसे है एक की भी अनुपस्थिति नहीं चल सकती गाडी ठप्प हो जायेगी अर्थात्

अनित्यादि भावनाओंसे भी चित्तको भावित करना जरुरी है, और मैत्र्यादि भावनाओं से भी इसलिए एकओर पुत्र–पत्नी–पैसा–परिवार आदि के रागको घटाने के लिए अनित्यादि भावनाओं का उपदेश देना और दूसरी ओर शत्रुताआदि को जडमूल से उखाडने के लिए मैत्रीआदि भावनाओं का भी उपदेशदान करना इन दोनों बातो में कुछ भी विरोध जैसा नहीं है । इसीलिए ग्रन्थकार परमर्षि बहुधा *'एगोह णत्थि मे कोई'* इत्यादि कह कर रुकने के बजाय *'सर्वे ते प्रियबान्धवा '* इत्यादि भी साथ ही साथ कहा करते है ।

जैसा रोग वैसी दवाई–

जिस मेडीसिन से रोग मिटता हो वही डॉक्टर प्रीस्क्राइब करेगा

"वैद्यराजजी, सर्दी–जुकाम हो गया है "

"सोंठ फाक ले "

"वो तो गर्म कहलाती है न?"

"कोई बात नहीं मैं कहता हूँ फाक लें।"

"वैद्यराजजी, लू लग गई है "

"गुलकद खा ले "

"पर वो तो बहुत ठडा कहलाता है "

"माथापच्ची मत कर, चुपचाप खा ले।"

वैद्यराजजी के कथन में विरोधाभास जैसा कुछ भी नहीं है जैसा रोग वैसी दवाई ।

इसीप्रकार जिस ऍगलसे सोचनेपर आत्मा निरोग बन सके वैसा हमें सोचना–विचारना होगा यह ज्ञानी भगवन्तों का फरमान है एक लठ्ठी से भैंस हाकी नही जा सकती ।

पत्नी आदि के ऊपर रागदृष्टि और शत्रु के उपर द्वेषदृष्टि ये दोनों रोगको पैदा करने वाले साहजिक ऍगल है निरोग बनने के लिए उनसे विपरीत ऍगल–भावनाऍ है ।

हसा । तू झील

बगीचा और घूरा

प्रश्न – क्या जिस दृष्टिकोण से सहज देखा जाता है वह सब कुछ रोगरूप ही होता है? और खराब ही होता है जिससे उसको छोडना पडे?

उत्तर – जी हॉ जिसको उत्पन्न करने के लिए कोई विशेष प्रयत्न नही करना पडता और जो सहज ही पैदा हो जाय फिर सिर्फ टिककर रहे इतना ही नहीं, पर विपरीत परिस्थितियॉ खडी न हो तो दिन दुगुने रात चौगुने बढता ही रहे, वह घूरा (गदगी का स्थान) ही हो सकता है, बगीचा नहीं

बगीचा कोई कुक्कुरमुत्ता नहीं है कि जहॉ तहॉ उग आये उसको अस्तित्वमें लाने के लिए ऍडी चोटी का पसीना एक करना पडता है, तब कहीं जाकर उसका नाकनकशा सामने आता है। जमीन को समतल–लेवल करो फिर उसे जोतो तदनन्तर उसमें बीजारोपण करो योग्य खाद डालो पानी पिलाओ न ज्यादा न कम पेड–पौधे तैयार हो जाय फिर फूलो को सडने न दो सडे हुए पत्तों को पौधों पर न रखो आदि गार्डनींग साइन्स के अनुसार ध्यान रखो तब कहीं जाकर बगीचा बनता है नहितो बना बनाया गुड गोबर होते भी देर नहीं लगे बगीचा तो सुन्दर बन गया मगर इसको बादमें भी नहीं सम्हालो तो गए काम से पौधों के आसपास कचरे का ढेर इकट्ठा हो गया इधर–उधर घास उग आयी पतझड में सूखे पत्ते गिरने लगे और आप चैन की नींद सोते रहे तो मजा करो थोडे ही दिनों में बगीचा उजड गया समझो ध्यान रखो तो ही बगीचा बगीचे के रूप से रह सकता है वरन् घूरा बनते देर नहीं

साराश यह हुआ कि जो सहज ही पैदा हो, टिके और वृद्धिको पाए वह घूरा ही होता है, बगीचा नहीं

अथवा तो यू कहो प्रयत्नविशेषके बिना पानी जिस गति से चल रहा हो अधोगति ही हो सकती है ऊर्ध्वगति नहीं, पानी में ऊर्ध्वगामिता लाने के पप के फोर्स की जरुरत रहती है तदर्थ विशेष प्रयत्न करना पडता है

मोहाज्ञा की त्याज्यता

ठीक उसी तरह

किसी भी तरहकी साधनाके बिना जो ऍगल सहज स्वीकारा जाता है वह घूरा होगा बगीचा नहीं। उससे दुर्गंध ही फैलेगी सुगध नहीं ॥ वह ऍगल आत्मजलकी अधोगति ही कराएगा ऊर्ध्वगति नहीं।

इसलिए वह ऍगल खराव ही कहा जायेगा और अत एव त्याज्य भी। चूंकि

वह मोहराजाकी आज्ञा का ही रूप है मोहराजा का मुख्य अश-एजेन्ट जिसे मिथ्यात्व कहा जाता है उसके नाम का विचार करे तो पता चलता है कि उसके प्रभावसे जो भी कुछ हो वह मिथ्या=असत्य ही होता है ।

काश। अनादि की इस चालचलन में हितकारिता सम्यक्पना रहा हुआ होता परतु 'न भूतो न भविष्यति' वाली यह बात है यदि इसमें हितकारिता निहित होती तो वह तीर्थकर की आज्ञा ही होती तब मानना पडता कि अनगिनत भवों से आत्माके हृदय सिहासन पर तारक परमात्मा अधिष्ठित है और यदि ऐसा ही होता तो आत्मा की भवभ्रमणा मिटे बिना रहती नहीं अर्थात् ससार टिक ही नहीं सकता न रहता ससार, न चलती दु खों की परपरा ॥

अत लगता है कि भगवान हृदय में आज दिन तक प्रतिष्ठित ही नहीं थे अत अदर से उठनेवाली प्रत्येक आवाज मोहाज्ञा है इसलिए खराब है और त्याज्य है।

यहाँ एक सहज प्रश्न अगडाइयाँ लेकर खडा हो सकता है "पत्नी आदि को देखकर यदि मै हर पल ऐसा सोचूँ कि "ये सभी स्वार्थी है स्वार्थ के साथी है" इत्यादि तब, आज नहीं कल वे शत्रु नहीं लगेंगे क्या?और यदि शत्रु लगने लगे तो जीवमात्र को मित्र मानने वाली मैत्रीभावना छूमतर नहीं हो जायेगी क्या?

स्टीलका रोड

इन प्रश्नों का भी लाजवाबी जवाब मिलता है एक स्टील का रोड लीजिए दायीं ओर मोडिये अब मुझे दीजिए बोलिये मैं उसे सीधा करना चाहता हूँ । मैं क्या करु? आप कहेगे जोर लगाओ और बायीं ओर मोडो न्युट्रल हो जायेगा रोड सीधा हो जाएगा ।

इस एक्सपेरीमेन्ट में आपने नोट किया होगा कि मेरी इच्छा तो उसे सीधा करने की है न तो उसे दायीं ओर मुडा रखना है न बायीं ओर । पर आपने मुझे सलाह दी बायीं ओर मोडने की चूकि आप जानते है कि दायीं ओर मुडे रहनेसे दायी ओर ढले रहने के उसमें जो सस्कार है वे अब बायीं ओर मोडनेसे बायी ओर ढलने के रूप में परिवर्त्तित होने की तैयारी करते है और वहीं न्यूट्रेलिटी खडी हो जाती है स्टीलका रोड एकदम सीधा बन जाता है ।

बस यही बात प्रस्तुतमें भी है

सपूर्ण जीवसृष्टि के साथ मैत्री अपना मूल लक्ष्य है परतु यह जीव सृष्टि मे आखे खोलता है और दो बातों में एक्टीव बन जाता है किन्हीं जीवों पर रागका कलश उडेलता है और किन्हीं जीवों पर द्वेषके अगारे बरसाता है । इन

हसा । तू झील

दोनों का ईलाज करना है स्टीलके रोड को सीधा करना है न उसे लेफ्ट में मुडा रखना है न राइट में

इसलिए जिनके प्रति राग है उनके प्रति अनित्यादि वैराग्यपोषक भावनाओं के बलपर थोडा-सा द्वेष खडा करने जैसी प्रक्रिया की जाय। और जिनके प्रति शत्रुताके कारण द्वेष है उनके प्रति मैत्रीआदि भावनाओं के बलबूते स्नेहका वातावरण माहौल बना दिया जाय ऐसा करनेसे राग-द्वेष के सस्कारों में परस्पर न्युट्रेलिटी खडी हो जाती है ।

घडी का लोलक

अथवा एक ओर रागपरिणाम है दूसरी ओर द्वेषपरिणाम है और मध्यमें है वीतरागता

घडी का लोलक जब तक दाएँ-बाएँ झूलता रहता है तब तक छोटे-बडे काटेका भी घूमना चालु ही रहता है लोलक अपना हिलना-डुलना बद कर मध्य में स्थिर हो जाता है तो काटों का भी भ्रमण स्थगित हो जाता है ।

जब तक मन राग-द्वेष के बीच झूलता ही रहता है तब तक जीवका ससार परिभ्रमण चलता ही रहेगा और जब यही मन राग-द्वेष के छोरों को छोडकर मध्य में स्थिर हो जाएगा तब जीव के भवभ्रमण की ऍडींग हो जायेगी उस पर फुलस्टोप लग जायेगा परस्पर विपरीत लग रही इन भावनाओं से मध्यस्थताकी प्राप्ति ही अभिप्रेत है ।

राग-मैत्री का डीफरस

राग और मैत्री में फर्क क्या?

स्थूलदृष्टि से व्याख्या की जाय तो कहेगे जिस आकर्षण में स्वार्थ का पुट उसे राग कहते है और जिसमें स्वार्थ का पुट न हो उसे मैत्री कहते है ।

पौद्गलिक लाभ-पौद्गलिक सुख प्राप्ति की इच्छा यही स्वार्थ है, राग का प्राण स्थान है । तात्पर्य यह है कि एक जीव का दूसरे जीव के प्रति आकर्षण-आत्मीयता की घनिष्ठता मुख्यतया उस जीव के रूप-स्वर-धन-स्थान-प्रतिष्ठा आदि कारणों पर निर्भर है तो वह राग है । उसमें प्रधानता उस जीव की नहीं किन्तु उस जीव के आसपास घिरे पुद्गलो की हुई । अब परिस्थिति बडी ही नाजुक है मनपसद रूपरग बदला नहीं कि आकर्षण मन्द पडा ही समझो *भावा परिवर्त्तनशीला* पुद्गल है तो बदलाव आयेगा ही और फिर आकर्षण ह ।

जिस आकर्षण-आत्मीयता की घनिष्ठता में अन्य जीव के रूपरगादि पौद्गलिक

तत्त्वों की मुख्यता न हो उसे मैत्री कहते है। इस आत्मीयता की घनिष्ठता में या तो व्यक्तरूप से उस व्यक्ति के क्षमा, नम्रता, सयम आदि आत्मिकगुणो की प्रधानता होगी या सीधी ही जीवद्रव्य की प्रधानता होगी ।

अर्थात् व्यक्ति के पौद्गलिक व्यक्तित्व का इसमें अवकाश नहीं रहता है। इसलिए जब कभी उनमें भारी चेंज आ जाय तो भी उस आकर्षण में हीनता नहीं आती चूकि वह आकर्षण आत्मपरक है स्वार्थ की कालिमा से अछूता है ।

खोजा कुटुम्ब की कन्या

बात उस समय की है जब आज की तरह वायुयानों की भरमार नहीं थी

एक खोजा कुटुम्ब व्यवसायवश आफ्रिका में बसा हुआ था, वह अपनी जन्म भूमि में आने के लिए स्टीमर से रवाना हुआ और बबई पहुँचा। बबई में अपने किसी परिचित के घर 3–4 दिन रुक कर बादमें अपने गाव जानेका प्रोग्राम था।

आज दुनिया के देश नजदीक आ गए है (तभी तो 'फट् गए हो चट् आये' और बारबार लोग प्रवास करने लगे है) जबकि इन्सानों के दिल दूर हो गये है। परतु उस जमाने में देशों के बीच अतर बहुत था पर दिल नजदीक थे । परिचित कोई नजदीक का स्वजन स्नेही नहीं था, फिर भी उसे आवभगती कर आगन्तुकों को ७ दिन तक रोकें। बबई के विविध स्थलों में घूमने का कार्यक्रम बनाया, एक दिन 5–6 घण्टों का प्रोग्राम था परिचित की युवालडकी शारीरिक अस्वस्थता के कारण घर पर ही रही सयोगवशात् आगतुक का जवान लडका भी बुखार की चपेट में आ गया था इसलिए वह भी प्रोग्राम में सम्मीलित न हो पाया और घर पर ही रुका रहा शेष दोनों कुटुम्ब घूमने के लिए साथ–साथ निकल पडे।

आगन्तुक युवक बगले के दीवानखाने में कोच पर पडा–पडा किसी पुस्तक को पढ रहा था । युवती रुम के अदर थीं । एक डेढ घटा हुआ होगा वह युवती एकान्त से एकाकीपन से थक गई । रूपवती कन्या दीवानखाने में आई। युवक एकदम ही उठ बेठा युवती कोच के दूसरे छोर पर बैठ गई ।

नौजवान तो पुन पुस्तक पढने में तल्लीन हो गया । दसेक मिनट बीती तो भी वह कुछ न बोला तब उस युवती ने हिम्मत कर पूछा

'क्या आप बोर नहीं होते हे?'

'नही '

'पर मै तो अत्यधिक बोर हो चुकी हूँ चलिए, थोडी–सी बातें कर जी बहलाए जिससे असान से टाइम पास हो सके ।'

हसा । तू झील

"मेरा टाइम पास तो यू भी इस पुस्तक से हो ही रहा है "
और वापिस वही असह्य नीरवता छा गई ।

"आप मुझसे थोडी बातें कीजिए न मुझसे यह एकाकीपन सहा नहीं जाता "

"नहीं बहिन। आप जवान हो मैं भी जवान हूँ अपने लिए ऐसे बातें करना कतई उचित नहीं।"

"अरे, थोडी-सी हसकर दो टुक बातें से कर ली तो कौन-सा प्रलय हो जाएगा?"

छोटी सी बातें

है न मनुष्य के मन की अदूरदर्शिता । एक छोटेसे परमाणु की आतरिक सरचना में हुआ जरा-सा परिवर्त्तन विध्वसकारी परिणाम प्रस्तुत कर देता है । छोटा सा घाव नासूर बनकर शरीरको गलाने लगता है छोटी सी खरोंच टिटेनस जैसा प्राणघाती रोग उत्पन्न कर देती है । छोटा सा छेद बडे जहाज को डुबो देता है। छोटी सी फुसी बडे से बडे पहलवान को मार सकती है प्रसिद्ध विचारक बर्ट्रेण्ड रसेल ने लिखा है ➛ आदमी की परख बडी बडी बातों से उतनी नहीं होती जितनी कि छोटी बातों से अत छोटी बातों की उपेक्षा न कीजिए । वे बडी से बडी बातों से भी बडी है एक गेहूँ का दाना लगता है कितना छोटा मगर सारे विश्व का भरण पोषण कर सकें उतना विराट हो सकता है गणित से बात सिद्ध है कि एक दाने से वर्ष में 50 दाने होते है, अगले वर्ष 2500, तीसरे वर्ष 125000 और तेरहवें वर्ष 21,41,40,62,50,00,00,00,000 (21 शख, 41 पद्म, 40 नील, 62 खरब, 50 अरब)!!!

आज तो दाना एक ही दीखता है कल उठ कर वही दाना चिनगारी छोटीसी है मगर वही भीषणरूप धारण कर नगरों को भस्म कर देती है

युवक का मन कट्रोल

युवक जानता था दो बातें प्रेम से कर ली तो क्या हो गया? इस मनोवृत्ति नहीं था बिल्कुल एकान्त यौवनवय सामने से चलकर आनेवाला रूप अब यदि छोटी सी भी असावधानी रख ली तो भयकर विनाश समझो शालीन युवक ने सूझबूझ से काम लिया ।

"देखो बहिन। जब तुम्हारे माँ-बाप मेरे भरोसे पूरा घर छोडकर गए कि हमारी किसी भी वस्तु के साथ अयोग्य रूप से नहीं बरतेगा तो मुझे आपने दो पल ही सही पर, हसकर बातें करना कितना उचित है?"

प्रश्न के उत्तर की परवाह किए बिना युवक अपनी पुस्तक में खो गया। युवती तो दग रह गई अपलक उसे निरखती ही रही पूर्ण एकान्त वातावरण में रूपवती नौजवान लडकी सामने बैठी है फिर भी

न कोई उत्कण्ठा न कोई नखरे या न कटाक्ष सामने से युवती बोलने को उत्सुक है मगर गुद्गुदी या चचलता का नामोनिशान नहीं अपने मन और इन्द्रियों पर उसका ऐसा अद्भुत नियत्रण देखकर, उस नवयौवना का मन आफरीन-आफरीन पूकार उठा। वाह रे सत्त्वशील वाह। उसका मन रह-रह कर उसे कहने लगा यह इस भूमितल का इन्सान नहीं है यह तो साक्षात् देवात्मा है इसकी देह किसी और ही मिट्टी से बनी हुई होनी चाहिए ऐसा उसे प्रतीत होने लगा

युवती आवर्जित हुई

युवकके सयम के प्रति उसके दिलमें अत्यत बहुमान जगा वह अत्यत आकर्षित हुई। मन ही मन उसने निर्णय कर लिया शादी करुगी तो इस गुणवान के साथ ही

वह कन्या अपने स्थान से उठी और यकायक युवक के पास आ कर बैठ गई और उसका हाथ पकड लिया

"अररर यह आप क्या गजब कर रही है? यह हाथ तो उस व्यक्ति के साथ मिलाना है जिसका चयन आपके पिताजी जिदगीभर के लिए करेगे" कन्या के दु साहससे युवक घबडा उठा था अत कन्या को समझाने के स्वर में उसने कहा और अपना हाथ छुडाने के लिए छटपटाने लगा कन्याने कहा "जी हॉ आप जो कह रहे है, मैं भी वही कर रही हूँ। आपका हाथ मैने पकडा है बिल्कुल सोच समझकर मेरा अटल निर्णय है कि पकडूँगी तो यही हाथ अन्य नहीं "

कन्या की बात सुनकर एकबार तो युवक चौक उठा फिर भी उसके मन मे शरारत करने की या दूसरी कोई छेडखानी करने की वृत्ति नहीं आई यह देख कन्या के मन में गुणानुराग की और बढौती हुई।

सात दिनके बाद आगन्तुक कुटुम्ब तो अपने गॉव की ओर प्रस्थान कर गया। लेकिन कुछ ही दिन में जब कन्या की शादी की बात घर में चलने लगी, तब उसने अपने पूज्य पिताजी को विनम्रतापूर्वक साफ-साफ कह दिया। उसका जिक्र था कि शादी करुगी तो उस युवकके साथ ही। पिता ने कहा "पगली। उससे भी ज्यादा रूपवान और धनवान युवक तेरे लिए खोज लेगे व्यर्थ ही उस मध्यमवर्गी युवक के पीछे क्यों अपना जीवन बर्बाद कर रही है?"

हसा। तू झील

युवती का निर्णय अडिग था रूप और धनसे भी अधिक उसके मन गुण की गरिमा थी।आखिर पिताने पत्र लिखकर मगनी की। वहॉ से युवक के पिता का निराशाजनक प्रत्युत्तर आया कि "युवक को टी बी हो गई है, इसलिए आपकी कन्या की जिदगी उजाडने की तमन्ना उसे नहीं है खुशी से वह किसी अन्य युवक की जीवनसगिनी बन कर सुखी रहे "

वचन नहीं, वज्रलेख

ऐसा प्रत्युत्तर सुनकर कन्या अधिक आकृष्ट हुई । उस पर फिदा हो गई सपूर्ण रूप से कायल हो चुकी थी वह। मन ही मन उसने उस गुणवान को प्रणाम किया पिता ने बहुत समझाया बुझाया कि तुम अपना निर्णय बदल लो । पर कन्या ने युवक को जो वचन दिया था वह वज्रलेख था । सूर्य पश्चिम में उग आये तो भी अपना वचन नहीं तोडूगी प्राण जाय पर वचन न जाय का दृढ निरधार था उसका ।

"शादी करुगी तो उस गुणनिधि के साथ ही सुदर में सुदर उनकी सेवा करुगी, उन्हे रोगमुक्त बनाऊॅगी और सुखी बनूॅगी"

अत मे कन्या की विजय हुई और शादी हो गई । काल को कुछ और ही मजूर था छ महीने बीते और रोग ने अपना पजा कसा युवक चल बसा। जब पिताने उपालम्भ के दो शब्द सुनाए तब उस सन्नारीका जवाब था "पूज्यतम। मुझे उनकी मिट्टी की कायाका परिचय नहीं करना था किन्तु उनके गुणमय देह को पहिचानना था और वह कार्य छ महिने में मैं बहुत आसानीसे अच्छी तरह कर चुकी हूॅ । उनकी उपस्थिति मै मेरे इर्द-गिर्द महसूस कर पाती हूॅ क्योकि अपनी गुणदेह के जरिए अभी भी हाजिर है मौजूद है । अपने गुणों से मेरे वे मरे नहीं है अमर है । उनका गुणदेह काल-यम की पहुॅच से पर है। । आप अपनी लाडली की चिता से बिल्कुल मुक्त रहिए व्यर्थ ही दु खी बनिएगा मैं तो अब से निरतर उनके गुणों का स्मरण करती रहूॅगी इसी माध्यम उनका सपर्कसूत्र मानकर सुखी रहूॅगी और समाजसेवा के कार्यो में लग जाऊगी ॥

इस आकर्षण में पौद्गलिक इच्छाओं का प्रावल्य नहीं दीख पडता है स्वार्थ भी नहीं दिखता है अत राग नहीं।पर यह तो है जीव के गुणो के प्रति असाधारण आकर्षण लगाव आत्मीयता की घनिष्ठता।।

प्रेम, जो बाधक नहीं

पर हॉ, मैत्री तो हमें सर्वजीवों के साथ स्थापित करनी है फिर भी मुझे ऐसा महसूस होता है कि किसी एक जीव के प्रति भी रखा हुआ ऐसा प्रेम प्राथमिक भूमिका में बाधक नहीं है अत हेय नहीं पर उसे उपादेय माना जा सकता है।

जिसमें पौद्गलिक आकर्षण की मुख्यता न हो ऐसा सबन्ध किसी जीवविशेष के साथ बधा भी गया हो और कदाचित् वह आगामी भवों में भी चलता रहे, तो भी वह बाधक नहीं बनता है* अपि तु दोनों के लिए हितावह और साधना के पथ में प्रगति कराने वाला ही बहुधा देखा गया है । इसके अनेकों उदाहरण शास्त्रो में यत्र-तत्र बिखरे पडे है ।

मिसाल के तौर पर –

श्री ऋषभदेव भगवान और श्रेयासकुमार

श्री नेमिनाथ भगवान और राजिमती

पृथ्वीचद्र और गुणसागर

एक भी दृष्टात शास्त्रो में ऐसा पढने में नहीं आया जिसमें दो जीवों का भवपरपरा में चल रहा स्नेहसबध उन दोनों को चौरासी के चक्कर में या दुर्गति में भटकाने वाला बना हो

पौद्गलिक आकर्षण

इसका कारण स्पष्ट है कि जिस सबध में पौद्गलिक स्वार्थ की प्रधानता हो वह निर्बल ही होता है उसमें वास्तविकता या दृढता की बात ही नहीं होती इसलिए भवातर में उसका साथ चलना सभव कम ही रहता है

चूकि व्यक्ति की भौतिक उन्नतियॉ धूप–छाव की तरह देखते ही देखते अपने तेवर बदल लेती है अरे, जीवनभर साथ निभ भी गया तो भी क्या यमराजा कहॉ पीछा छोडनेवाला है? सभी उन्नतियॉ खाख में मिलाते देर ही कितनी?

तब भला उन उन्नतियो के बूते जो आकर्षण खडा हुआ हो वह टिक भी कैसे सकता है ? और भवातर में साथ भी कैसे चलेगा ? बास ही नहीं तो बसरी बजती भी कैसे? सवाल ही नहीं ।

अव्वल बात यह है–जो भवातरमें चलता है उस सबध में स्वार्थके लिए

---

* हॉ, इतना जरुर है कि वह उच्चभूमिका में बाधक बन भी सकता है । जैसे कि श्री गौतमस्वामी को प्रभु महावीर के प्रति जो आकर्षण था वह केवलज्ञान में बाधक भी बन गया । अत मुझे तो शास्त्रपरिशीलन से प्रतीत हुआ वह लिखा है ।

हसा । तू झील

कोई स्थान ही नहीं है नो वेकेन्सी फोर इट ।

तरगवती

अत एव तरगवती बनी हुई चक्रवाकी यह निर्णय करती है कि – "पूर्वभव का प्रियतम चक्रवाक पति रूप से मिले तो ही शादी करनी – अन्यथा नहीं "

अब आप ही गौर कीजिए .

अप्सरा को भी मुह नीचा करना पडे वैसी सुदर रूप–लावण्य वाली है स्वय और हो सकता है कि पूर्वभव का प्रियतम चक्रवाक इस भव में भयकर कुरूप हो ।

स्वय श्रीमतकी बेटी है और वह कगाल हो दाने–दाने केलिए मोहताज हो

कहॉ सोना कहॉ लोहा ?

कहॉ हीरा कहॉ पत्थर ??

पर नहीं ऐसा एक भी क्षुद्रविचार उसके मन को अपने प्रियतम के चरणों में अपने सर्वस्व को अर्पित करते हुए रोक नहीं सका ।

क्षुद्रविचार हावी होते है नि सत्त्वों पर

सत्त्वशीलों पर उनकी एक नहीं चलती

ऐसा अटूट स्नेह था फिर भी तरगवती का जीव भटका नहीं यह हकीकत है। जब कि अपने धन आदि की मूर्च्छा साथ में ले जानेवाले जीवों की भयकर अवगतियॉ हुई है बूरे हाल हुए है। ऐसे अनगिनत दृष्टात शास्त्रों में मौजुद है।

इसलिए लगता है कि प्राथमिक भूमिका में पौद्गलिक आकर्षण बिना का प्रेम व्यक्तिगत निर्दोष जीवप्रेम स्नेह आत्मीयता की घनिष्ठता आत्मसाधना में बाधक बल्कि सहायक है ।

पुद्गलानन्दी जीव

:र। सोचना है कि अभव्य या अचरमावर्त्ती जीवों का अन्य जीवों के साथ , भी आकर्षण पैदा हुआ होगा तो वह पुद्गल के आकर्षण की प्रधानता ही होगा । पुद्गल के आकर्षण बिना का शुद्ध जीवप्रेम या जीव के गुणों सच्चा आनद उन्हे कभी हुआ ही नहीं और होता भी नहीं । शास्त्र में वैसे ावे। को पुद्गलानन्दी कहे है, वह भी इसी कारण से होगा न ।

अनादिकाल से हम स्वार्थघटित प्रेमसे इतने अभ्यस्त हो चुके है कि स्वजनों क साथ के सवन्ध में पौद्गलिक स्वार्थ घुसपैठ कर ही लेता है । स्वार्थरहित स्वजनप्रेम लगभग अशक्य–सा है।परतु मोहराजा इतना चालाक है कि अपने को भी उल्लू

बना दे मन के जरिए वह अपने को ऐसा मानने की प्रेरणा देता है कि-"ना, बाबा, हमें तो कोई स्वार्थ नहीं है स्वजन-स्नेहियों के प्रति मेरा जो प्रेम है वह तो शुद्ध जीवप्रेम है" है न मोह की चालबाजी। कहीं न कहीं घुस ही आता है ॥

सावधान

और शुद्धप्रेम के मिथ्या अभिमान में जकडे हुए जीव को मोहराजा अपना परवश बना ही लेता है । अत "मुझे तो स्वजनो के प्रति नि स्वार्थ प्रेम है" इस जतर मतर के भूल-भुलैये में फसने जैसा नहीं है चूकि वह न ही हितावह है और न ही सुखावह

परतु सभी स्वजन-परिजन स्वार्थ के ही सगी है गुडपर मक्खी भिन-भिनाती है चूकि उसमें माधुर्य है कमल पर भौरा गुञ्जन करता है चूँकि उसमें मकरद है सुगध है उन्हे न गुड से मतलब है न कमल से बस, सभी को अपने मतलब की ही पडी है जगत है स्वार्थ का साथी, समझ ले कौन है अपना इत्यादि भावनाओं से चित्त को भावित कर ममता के बधनों को तोडना यही हितावह है।

सामान्य से देखा जाएँ तो स्वजनो के ऊपर जो प्रेम होता है वह भी कितना स्वार्थघटित होता है पता है न?

पूनम के चाद-सा तिलक

एक महिला की मेरेज हुए तीन महीने करीब बीते थे । सखी मिली । उसको थोडा सा आश्चर्य हुआ चूकि महिला के भाल-ललाट पर पूनम के चाद जैसा पूरा सौभाग्यतिलक चमक रहा था । उससे रहा न गया, वह पूछ बैठी

"ओहो। इतना बडा तिलक?"

"अरी यह तो बहुत छोटा कहलाता है इतना सुदर रूपवान पति मिला तो इतना बडा तिलक क्यों नहीं?" महिला का अहमियत भरा जवाब सुन सखी चुप हो गई ।

दो महीनो के बाद पुन मिलना हुआ सखी ने मार्क किया कि तिलक छोटा हो गया था

सहसा उसने पूछ लिया "बहिनजी, तिलक छोटा क्यों?" रोती सूरत बनाकर महिला ने जवाब दिया

क्या कहूँ सखि । रग में भग पड गया है । जीवन की मस्ती ही उड गई वे अब दिन रात बीमार रहते है उनकी सेवाशुश्रूषा से ही ऊपर नहीं उठती। महीने के बाद वापिस मिलना हुआ तब मार्क किया कि तिलक का नामोमिशान

हसा । तू झील

ही मिट गया था पूछने से पता चला कि वे अब इस ससार में नहीं रहे है।
योगानुयोग चार महीने के बाद पुन मुलाकात हो गई परतु आश्चर्य । पूनम के चॉद-सा तिलक ललाट पर शोभायमान था
उससे तो पूछने की हिम्मत न हुई पर सामने से ही उद्धत लापरवाह जवाब मिला अरी क्या देख रही हो बार-बार अब दूसरा कर लिया है॥"
हॉ, अपने सबध ज्यादातर ऐसे होते है । मौजमजा और स्वार्थ बढने के साथ बढते है और घटने के साथ घटते है । इसीलिए वैराग्य की भावनाओं से आत्मा को वारवार भावित करना भी उतना ही आवश्यक है ।

तात्पर्य

तात्पर्य ऐसा लगता है कि क्षमादि गुणों की मुख्यता और जीवद्रव्य की प्रधानतावाला जो आकर्षण आत्मीय भाव जिसे वात्सल्य भी कह सकते है वह है प्रेम-मैत्री। इसका बस एक काम साफ-साफ नजर आता है आत्मा के भीतर अनादिकाल से साहजिक जो द्वेषसस्कार कुक्कुरमुत्तो की तरह अपार राशि में एकत्र हुए है उन्हे नष्टभ्रष्ट कर उखाड फेंकना अत मैत्री आत्मा के लिए अत्यत हितावह है ।

जड पुद्गल एव उसके रूप-रगों के प्रति जीव का जो अनादि साहजिक आकर्षण है वह राग है पौद्गलिक रूप-धनादि की जिसमें मुख्यता हो ऐसा भी जो अन्य जीवों के प्रति लगाव रहा करता है वह भी राग है वैराग्य की भावनाएँ इस राग नामक बकासुर का अत लाती है अत आदरणीय है ।

सारी सृष्टि में भयकर आतक फैलाने वाला यह आतकवादी है, जिसका
हे राग उर्फ अभिष्वग (आसक्ति) उर्फ वासना
और इस को ठार करने वाली है वैराग्यभावना की पराक्रमी वेटेलियन
॥ दुखावह है जबकि वैराग्य और वैराग्यकी भावनाऍ सुखावह ।
इस प्रकार विपरीत जैसी दिखनेवाली मैत्री आदि की भावनाऍ और वैराग्य भावनाऍ सही मायने में विरोधी नहीं है परतु पूरक है ।
एक का विषय जीव और जीव के गुण है
दूसरे का विषय पुद्गल और पुद्गल के गुण है ।
इसीलिए दोनों की आवश्यकता समान रूप से गिनी गई है । और वह इसी रहस्य का सूचन करती है कि अवर अनादिनी चाल नित नित तजिएजी ।"
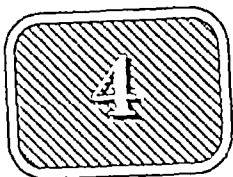
एक नगर में रामलीला की नाटचमडली आई । उसमें राम और रावण की एक्टींग इतनी जीवत थी कि लोग आफरीन पूकार उठे । कलाकार भी गजब थे स्टेज पर उनका लोहा मानना पडता ।

रामलीला पूरी हुई और घूमता फिरता एक प्रेक्षक स्टेज के पीछे पहुँचा । स्टेज पर खूखार जग खेलने वाले पास बैठकर चाय पी रहे थे हसी-मजाक के साथ जोर-जोर से हा-ही कर रहे थे । गप्पो का दौरा चल रहा था । यह देख वह पूछ बैठा "कमाल है यार । अभी दस मिनट भी पूरे नहीं हुए है तुम एक दूसरे की बोटी-बोटी काट कर कुत्ते को खिलाने पर उतारु थे और अब मानो कुछ हुआ ही नहीं मस्ती से हसते-खेलते हो तो आखिर सत्य क्या है तुम दोनो मित्र हो या शत्रु ?"

भोले प्रेक्षकके प्रश्नने उनके मुह पर मुस्कान फैला दी

तुम भी कैसे भोदू हो यार। इतना भी नहीं समझ सकें? हम दोनो के बीच जो शत्रुता का व्यवहार था वह तो सिर्फ रामलीला के ३ घटे तक ही मर्यादित है आगे पीछे २१ घटे तो हम जिगरजान दोस्त है । साथ साथ घुमते है खाते है पीते है मौजमजा करते है । और इन तीन घटों की शत्रुता में भी कोई दम नही है क्योकि वह दिखावटी है असलियत उसमें कुछ भी नहीं है। मेनेजर ने इसको राम का पार्ट दिया और मुझे रावण का यह तो सिर्फ एक्टींग है और कुछ भी नहीं हम दोनों तो दोस्त है दोस्त ।"

उस भोले प्रेक्षक को तो पता चल गया, पर 4-5 अरब समझदार इन्सानो के बीच जीनेवाला यह इन्सान समझ नहीं पाया किमाश्चर्यमत परम् ?

[illegible] सत्य है यह कुछ समय के लिए शत्रुता का व्यवहार दीख भी जाय तो भी यदि आगे-पीछे मित्रता का व्यवहार देखा जाता है तो मित्रता ही वास्तविक [illegible] जाएगी शत्रुता तो किसी कार्यवश ही बरती गई

हसा । तू झील

भूत-भविष्य

जगत के प्रत्येक जीव अपने साथ भूतकाल में अनतपुद्गल परावर्त्तो तक निगोद के एक ही शरीर में रहे थे खाते भी साथ-साथ जीते भी साथ-साथ श्वासोच्छ्वास भी साथ-साथ लेते थे ।

इससे यह बात निर्णीत हो जाती है कि निश्चित अवधि के पूर्व हर एक जीव के साथ अपना मित्रता का व्यवहार था । भविष्य में सिद्धगति मे पहुचते ही अनत पुद्गलावर्त्त तक उन उन जीवो के साथ ही साथ रहनेवाले है । एक समान ज्ञान, स्थान और सुख की अनुभूति करने वाले है।

इस तरह आगे-पीछे अनतानत पुद्गल-परावर्त्त के विराट काल तक अपना हर एक जीव के साथ मित्रता का व्यवहार है, तो कदाचित् किसी जीवविशेष में अल्पकाल की इस मध्यावधि में हमारे प्रति शत्रुता का व्यवहार दिख भी जाय तो भी उसे शत्रु मानने की भूल हम कैसे करे ?

इसीलिए सभी तारकतीर्थंकर भगवत हमें उद्देश कर बुलन्दी से कहते है

"सर्वे ते प्रियबान्धवा न रिपुरिह कोपि"

"हे पुण्यात्मन् । ससार के प्राणीमात्र तेरे बन्धु है, शत्रु कोई भी नहीं ।"

और आगे पीछे की यह निगोदावस्था और सिद्धावस्था का विराट काल ही नहीं, मध्यावधि जो व्यवहारराशि का काल है उसमें भी उन उन जीवो के साथ हमारा अनतीबार स्नेहसबध हो चुका है ।

वसुधैव कुटुम्बकम्

आज जिसे हम जानी दुश्मन मान रहे है वो ही जीव कभी कभार हमारा ेज न मित्र भी बन चुका है। वही जीव कभी वात्सल्यपूर्ण पिता, तो कभी ममतामयी ,भी स्नेहालु भाई, तो कभी प्रेमयुक्त बहिन कभी प्राण से भी प्रिय पत्नी ,भी विनीत पुत्र भी बन चुका है ।

ऐसा ससार में एक भी सबध नहीं है जो हमारा उस जीव मे स्थापित न आ हो । चाचा-चाची, जीजा-जीजी, ताउ-ताई, ननद-ननदोई, फूफा-फूफी, मौसा-मौसी, समधी-समधीन, सास-ससुर, साला-साली, नाता-नातिन, पोता-पोती, भतीजा-भतीजी, भाजा आदि आदि

अरे कोश में दिए गए रिश्तेदार का ऐसा एक भी शब्द नहीं है जिससे हमने उसे न बुलाया हो या उसने हमे न बुलाया हो

शत्रु नही, मित्र!

अर्थात् जो आज हमारे पथ में काटे बिखेर रहा है वही आदमी कई बार फूल भी बिखेर चुका है । जिस व्यक्ति को देख कर आज हमारे अग अग में आग लग रही है उसीने हमें चदन सी शीतलता भी पहुँचाई है। जो व्यक्ति आज हमें काटो की तरह चुभ रहा है फूटी आखों न भाता है उसकी उपस्थिति अखरती है वही व्यक्ति हमें सुहाता था उसके लिए हमने अपनी जान गवाई थी उसने हमारे लिए एक नहीं अनेकबार कुर्बानी की थी ।

जिस बाघिन ने सुकोशल मुनि का लहू गटा गट पिया क्या उसीने अपना अमृततुल्य दूध पूर्वभव में सुकोशल को नहीं पिलाया था ? जिस बाघिन ने सुकोशल मुनि की देह को चबेना की तरह चबा दी, क्या उसीने अपनी गोद में उसका लालन पालन कर खिलाया पिलाया नहीं था

जो बाघिन आज सुकोशल मुनि के खुन की प्यासी है मारने पर उतारु है क्या उसीने एक दिन नौ-नौ महीनेकी वेदना सहकर उसे जन्म नहीं दिया था ?

सब कुछ सभव है....

अजीब बात है। आज जो लहू पी रहा है वो ही दूध पिलाने वाला हो सकता है। शरीर को खाने वाला झूलाने वाला हो सकता है। प्राण लेने वाला देने वाला भी हो सकता है ।

सब कुछ सभव है इस दुनिया में । आज जूते मार कर भयकर तिरस्कार करने वाला कल का फूलों की माला से बहुमान कर्त्ता हो सकता है । आज जो मुझे बदमाश कह रहा है हो सकता कल उसी ने मुझे जेन्टलमन कह कर बुलाया हो । आज प्रहार कर रहा है वह कल उसीने मुझे गले लगाया था पुचकारा था प्यार-दुलार किया था । आज सबधों को बिगाडने वाला स्वजन कल सबध प्रस्तौता था । स्थापनकर्त्ता था । आज धधा फ्लोप कर रहा है वह पर उसीने एक नही हजारों बार सुनहरी तकें हमें दी थी और बेशुमार कमाई करवाई थी। लाखो का धन होइया करने वाला कल का करोडों की तादाद में धनदाता कुबेर था । आज जो व्यक्ति हमारे यश पर कालिख पोतने पर आमादा है उसीने हमे कई बार राजहस के पख की तरह उज्जवल दिगन्तव्यापी यश दिलाया था।

तभी तो कह रहा हूँ everything is possible । जहर पिला कर गला घोटने वाली रानी सूर्यकान्ता, प्राणप्रिय पतिदेव प्रदेशी राजा के लिए अपनी जान बिछाने को तैयार प्रेमप्यासी सूर्यकान्ता नहीं थी क्या ?

हसा । तू झील

यह एक बहु आयामी चिन्तन है । हम सामने वाले आदमी को आज जैसा है वैसा ही जीवनभर होगा यह सोचने लगते है। यहीं हमारी बहुत बडी भूल है । इसी मिथ्यापनने हमारी दृष्टि धुंधली कर दी और समझ भोंथरा दी हमें एतराज है उसके आज से हमें फरियाद है उसके आज से । तो कल का उसका रूप क्यों नहीं हम सामने ला देते ? दृष्टि को साफसुथरी बनानी जरुरी है दृष्टि की सकुचितता को तोडनी जरुरी है ।

अतीत मे खो जाओ

चिन्तन की धारा को सत्य से आप्लावित कीजिए किसको पत्थर मारु? कौन यहॉ पराया है? *'शीशमहल में रहने वाला हर एक चेहरा अपना सा लगता है'* नग्नसत्य हमारे सामने है जो आज शत्रु है वो पहिले न वैसा था न वैसा रहेगा अर्थात् अपनी मान्यता को नीलगगन की असीमता प्रदान कीजिए यह शत्रु है यह मित्र है, यह रेखा खींचना ही अपनेपन की असीमता को लाछन लगाना है। जिसकी विचारधारा सीमित है सकीर्ण है वह क्षुद्र है। जिसने अपनेपन की परिधि उस अनत तक बढा ली वह महान है

उपर्युक्त तथ्यो से यह स्पष्ट हो चुका है कि व्यक्ति के अतीत में जाइये आज क्या है क्या कर रहा है इस सकुचितता से परे हो जाइये

'आज मुझे परेशान कर रहा है न' इस बात को मारो गोली । अतीत में यही जिगरजान मित्र था इस तथ्य को सामने रखिए आधा गिलास खाली है? नहीं, आधा गिलास भरा है यह दृष्टि व्यक्ति को उल्लसित और प्रफुल्ल रखेगी ।

सुपुत्र-सा सज्जन

जन्म देकर पालन पोषण किया सुदर सस्कारों का सींचन किया ऐसे . किसी कर्मवश वृद्धावस्था में पेरेलाइसीस-लकवा जैसी भयकर घृणास्पद रोग कजे में फस भी जाय खिलाने पिलाने की प्रोब्लम बारबार विष्टा से :डे बिस्तर भी बिगाड देते है स्वभाव चिडचिडा हो गया, इसलिए बारबार ुडकी देना चीखना-चिल्लाना चालू ही हो, फिर भी सपूत किसको कहेगे ? इन सब कार्यकलापों को देखा-अनदेखा सुनी-अनसुनी कर सेवा में प्रसन्न रहने वाल उसके सामने वर्तमान गौण है अतीत के एक एक दृश्य जीवत हो आते है । उनके उपकार याद आते है । जो इन्सान मॉ बाप की वर्त्तमान दशा को आखों के सामने तैरती रखता है उसको लकवाग्रस्त मॉ-बाप फूटी आख नहीं भाते है वह कभी सेवा नहीं कर सकता उपकारों से अऋण होने के सुअवसर को खोने

वाला वह कपूत कहलाता है ।

इसीतरह वर्त्तमान में परेशान करने वाले लोगो के पूर्वकृत उपकारों को याद कर उनके साथ सौजन्यपूर्ण व्यवहार रखने वाला ही सज्जन कहलाता है मात्र वर्त्तमान को देख कर शत्रुता का व्यवहार करने वाला नहीं ।

पौधा गुलाब का है या कॉटो का ?

कभी कभार बगीचे में इधर उधर अल्लहड मस्ती से टहलते हुए आपने गुलाब का हसता खिलता पौधा देखा होगा आइये । मन की आखों को खोलिए बारीक नजर से उस पौधे का अध्ययन कीजिए डाल तो अनेक है पर गुलाब का खुश्बूदार फूल किसी एक दो डाल पर ही लहरा रहा है जबकि कॉटे तो हर एक डाल पर चिपक कर बैठे है उखडने का नाम भी नहीं लेते और तो ओर जिस एकाध डाल पर गुलाब मस्ती से झुम रहा है उस पर भी कॉटों की कमी नहीं – ढेर सारे उग आये है एक बात और भी है → गुलाब का अस्तित्व भी अल्पकाल का आया कोई मनचला चट कर निकाला और अपनी प्रियतमा की वेणी में उसको बैठा देता है. पौधे पर तो रह जाते है कॉटे गुलाब तो आया राम–गया राम ही समझो फिर भी हर एक इसान उस पौधे को पुकारता है *'यह गुलाब का पौधा है'* कोई उसे कॉटो का पौधा नहीं कहता है ।

उपकार के गुलाब

इसी तरह सामने हमारा शत्रु बैठा है । बारीकी से देखेंगे तो पायेंगे कि उस पर उपकार के गुलाब लहरा रहे है और अपकार के कॉटे भी। बताइये । उसे क्या कहना न्यायसगत है ? उपकारी या अपकारी ? गुलाब का पौधा या कॉटों का? लेकिन **याद रखना कि** ☞ गुलाब बीनने वाला उसकी खुश्बू और सुदरता से आत्मतोष पाता है। कॉटे इकट्ठे करने वाला अपनी हथेली और ऊँगलियों मे चुभन ही पाता है। खून की धारा बहती है और वह वेदना से कराहता है बस यही तो उसके भाग्य में बचा है ।

इस प्रकार उन उन जीवों के व्यवहार–वर्त्तन में उपकारों को ही मन में अपनाने वाला आदमी मित्रता की सुगध को पा सकता है । अपकारों की ओर ताकनेवाला शत्रुता के तीक्ष्णकॉटे ही पाता है ।

अरे, हजार बार अपकार कर क्वचित् उपकार करने वाले जीव को भी उपकारी ही मानना है तो आगे–पीछे अनेकवार असीम उपकार करनेवाले और सिर्फ मध्यावधि मे कुछ पाच पच्चीस वर्ष जितने मर्यादित समय के लिए अपकार करने

हसा । तू झील

वाले जीवों की तो बात ही क्या कहनी ?

ऍगल सुधारो

जैसे की हम पहिले यह बात विचार ही चुके है कि जिस ऍगल से घटना का दर्शन लाभप्रद हो यही ऍगल अपनाना चाहिए ।

शत्रुता के व्यवहार को नजर में लाया जाय तो बहुत बडी आपदाए और विपदाए खडी हो जाय

* **पहली बात** > दिल में शत्रुता के भाव–द्वेष, तिरस्कार, क्रोध कषाय की आग पैदा होती है
* **दूसरी बात** > बेतुकी बातों पर वैर की गाठे बध जाती है
* **तीसरी बात** > प्रतिशोध की भावना जागृत हो आती है। बात का बतगड हो जाता है । खून–खराबा होते देर नहीं लगती । पीढियॉ की पीढियॉ साफ हो जाती है ।

अनेक प्रकार के तीव्र सक्लेशों का उफान आता है और इन्हीं उफानों ने चबल के गिरोह खडे किए है । कुटुम्ब के कुटुम्ब प्रतिशोध की आग में जलकर भस्मीभूत हो गए । जिन्दे के जिन्दे कट गए ।

शत्रुता के भाव से जन्मते है तीव्र सक्लेश और उन सक्लेश से मनुष्य के विवेककमलपर तुषारापात होता है और जहॉ विवेक नहीं वहाँ कृत्यअकृत्य की भेदरेखा सहज ही मिट जाती है । भयकर पापों में प्रवृत्त होना है वह। और फिर पापो से आती है भयकर दुखों की बौछारे *मान न मान मैं तेरा मेहमान* ।

जब मित्रता के व्यवहार को नजर में लानेवाले की स्थिति ठीक इससे विपरीत हआ करती है । ✡ दिल में कटुता के अकुरे ही नहीं उगते । ✡ दिल विल्कुल , फुल सा रहता है । ✡ अनेक प्रकार के सक्लेश और पापो से बचाव , कारण दु ख आते नहीं । ✡ मन में शुभभावों की बारिश बरसती है और पु' ब ' की फसल उग आती है । ✡ ओर आत्मा इसी शुभपाथेय को लेकर मुक्ति के पथ पर प्रगति करती रहती है ।

मतलव यह कि यदि स्वजन–परिवार के ऊपर अतिशय ममता हो तो सुकोशल महामुनि के दृष्टात को इस सिरे से ऍगल से देखना चाहिये ➡ स्वजन पर ममता क्यों रखी जाय? जव मॉ भी वाघिन वन कर फाड खा जाय तो दूसरों की बात ही क्या कहनी? इस ससार के स्नेहीजनों की ममता से तोबा । तोबा।।

परतु दु ख और पीडा पहुँचाने वाले व्यक्ति पर यदि दिल में शत्रुता पैदा

हो रही हो तो इसी बात को कुछ अलग ढग से नए सिरे से सोचिए — अरे चीर-फाडकर खानेवाली बाघिन भी यदि अत्यत उपकारिणी माता हो सकती है तो क्या पता कौन क्या था पूर्व काल मे ? तो फिर शत्रुता क्यो रखनी ?

जिस दृष्टिकोण में मोहराजा की आज्ञा का प्रतिबिम्ब हो . उससे विपरीत ही दृष्टिकोण अपनाना यही जिनाज्ञा है । उसीसे शाति, समाधि और स्वस्थता जीवत रहेगी ।

बहुत अच्छा हुआ....

सध्या की बेला थी। भक्त आया और आश्रम में गाय बाध कर चला गया। शिष्य तो मानो खुशी से झूम उठे। उन्होने समाचार गुरुजी को दिए। गुरु ने दो टुक जवाब दिया "अच्छा हुआ अब तुम्हे दूध की भिक्षा की झझट नहीं रही ज्ञान-ध्यान में ज्यादा समय मिलेगा"

चार दिन के बाद देखा गाय गायब थी । चोर-उचक्के वहाँ भी पहुँच गए थे। शिष्यों ने ये दु खद समाचार गुरुजी को दिए ।

गुरु ने कहा → यह भी अच्छा हुआ अब तुम्हे गाय को चराना गोबर इधर-उधर करना वगैरह झझट नहीं पढने में टाईम ज्यादा मिलेगा

भैया। यह तो स्टेज है!

रामलीला का समाधान बडा ही उपयुक्त था । रगमडप में तीन घटे तक शत्रुता का वातावरण हमें देखने को मिलता है चूँकि-सूत्रधार ने उन उन रोलों मे उन्हे नियुक्त किया है अमिताभ और अमजद पिक्चर मे डिशुम डिशुम करते है क्योकि उन्हे डायरेक्टर ने हीरो-विलेन का पार्ट दिया है जिदगीभर वे एक दूसरे को न तो घुरते हे और नहीं कुत्ते कमीने कहकर एक दूसरे का गला पकडते है ।

इसी तथ्य को जीवन और विश्व के रगमच पर लाना है । दीस इज स्टेज एवरीथींग इज पोसिबल । **शेक्सपीयर** ने एक सोनेट में लिखा है ***वर्ल्ड इज द स्टेज ऑफ ड्रामा वी आर एक्टर्स !***

विश्व के इस रगमच पर सब अपना अपना रोल अदा कर रहे है । कर्मसत्ता सूत्रधार है डायरेक्टर है। वह किसीको हीरोका पार्ट देता है किसीको विलन का।

यह भी शूटींग है

उसी के ओर्डर से

कोई हमे गाली दे रहा है तो कोई हमें गोली से दाग रहा है । कोई हमारा

हसा । तू झील

वाले जीवों की तो बात ही क्या कहनी ?

ऍगल सुधारो

जैसे की हम पहिले यह बात विचार ही चुके है कि जिस ऍगल से घटना का दर्शन लाभप्रद हो यही ऍगल अपनाना चाहिए ।

शत्रुता के व्यवहार को नजर में लाया जाय तो बहुत बडी आपदाए और विपदाए खडी हो जाय

* **पहली बात** ≻ दिल में शत्रुता के भाव–द्वेष, तिरस्कार, क्रोध कषाय की आग पैदा होती है
* **दूसरी बात** ≻ बेतुकी बातों पर वैर की गाठे बध जाती है
* **तीसरी बात** ≻ प्रतिशोध की भावना जागृत हो आती है। बात का बतगड हो जाता है । खून–खराबा होते देर नहीं लगती । पीढियॅा की पीढियॅा साफ हो जाती है ।

अनेक प्रकार के तीव्र सक्लेशों का उफान आता है और इन्हीं उफानों ने चबल के गिरोह खडे किए है । कुटुम्ब के कुटुम्ब प्रतिशोध की आग में जलकर भस्मीभूत हो गए । जिन्दे के जिन्दे कट गए ।

शत्रुता के भाव से जन्मते है तीव्र सक्लेश और उन सक्लेश से मनुष्य के विवेककमलपर तुषारापात होता है और जहॅा विवेक नहीं वहॅा कृत्यअकृत्य की भेदरेखा सहज ही मिट जाती है । भयकर पापों में प्रवृत्त होता है वह। और फिर पापो से आती है भयकर दुखों की बौछारे *मान न मान मै तेरा मेहमान* ।

जब मित्रता के व्यवहार को नजर में लानेवाले की स्थिति ठीक इससे विपरीत हूआ करती है । ✡ दिल में कटुता के अकुरे ही नहीं उगते । ✡ दिल बिल्कुल ~का फुल सा रहता है । ✡ अनेक प्रकार के सक्लेश और पापो से बचाव , कारण दु ख आते नहीं । ✡ मन में शुभभावों की बारिश बरसती है और ... की फसल उग आती है । ✡ और आत्मा इसी शुभपाथेय को लेकर मुक्ति के पथ पर प्रगति करती रहती है ।

मतलब यह कि यदि स्वजन–परिवार के ऊपर अतिशय ममता हो तो सुकोशल महामुनि के दृष्टात को इस सिरे से ऍगल से देखना चाहिये ➡ स्वजन पर ममता क्यों रखी जाय? जब मॅा भी बाघिन बन कर फाड खा जाय तो दूसरों की बात ही क्या कहनी? इस ससार के स्नेहीजनों की ममता से तोबा । तोबा।।

परतु दु ख और पीडा पहॅुचाने वाले व्यक्ति पर यदि दिल में शत्रुता पैदा

हो रही हो तो इसी बात को कुछ अलग ढग से नए सिरे से सोचिए — अरे चीर-फाडकर खानेवाली बाघिन भी यदि अत्यत उपकारिणी माता हो सकती हे तो क्या पता कौन क्या था पूर्व काल मे ? तो फिर शत्रुता क्यो रखनी ?

जिस दृष्टिकोण मे मोहराजा की आज्ञा का प्रतिबिम्ब हो . उससे विपरीत । दृष्टिकोण अपनाना यही जिनाज्ञा है । उसीसे शाति, समाधि और स्वस्थता जीवत हेगी ।

बहुत अच्छा हुआ..

सध्या की बेला थी। भक्त आया और आश्रम मे गाय बाध कर चला गया। शिष्य तो मानो खुशी से झूम उठे। उन्होने समाचार गुरुजी को दिए। गुरु ने दो टुक जवाब दिया "अच्छा हुआ अब तुम्हे दूध की भिक्षा की झझट नहीं रही ज्ञान-ध्यान मे ज्यादा समय मिलेगा"

चार दिन के बाद देखा गाय गायब थी । चोर-उचक्के वहॉ भी पहुँच गए थे। शिष्यों ने ये दु खद समाचार गुरुजी को दिए ।

गुरु ने कहा → यह भी अच्छा हुआ अब तुम्हे गाय को चराना गोबर इधर-उधर करना वगैरह झझट नहीं पढने मे टाईम ज्यादा मिलेगा

भैया। यह तो स्टेज है!

रामलीला का समाधान बडा ही उपयुक्त था । रगमडप मे तीन घटे तक शत्रुता का वातावरण हमे देखने को मिलता है चूँकि-सूत्रधार ने उन उन रोलों मे उन्हे नियुक्त किया है अमिताभ और अमजद पिक्चर मे डिशुम डिशुम करते है क्योकि उन्हे डायरेक्टर ने हीरो-विलेन का पार्ट दिया है जिदगीभर वे एक दूसरे को न तो घुरते है और नहीं कुत्ते कमीने कहकर एक दूसरे का गला पकडते है ।

इसी तथ्य को जीवन और विश्व के रगमच पर लाना है । दीस इज स्टेज एवरीथींग इज पोसिबल । **शेक्सपीयर** ने एक सोनेट मे लिखा है ***वर्ल्ड इज द स्टेज ऑफ ड्रामा वी आर एक्टर्स ।***

विश्व के इस रगमच पर सब अपना अपना रोल अदा कर रहे हैं । कर्मसत्ता सूत्रधार है डायरेक्टर है। वह किसीको हीरोका पार्ट देता है किसीको विलन का।

यह भी शूटींग है ..

उसी के ओर्डर से

कोई हमे गाली दे रहा है तो कोई हमें गोली से दाग रहा है । कोई हमारा

हसा । तू झील

हास–परिहास कर रहा है तो कोई हमें त्रास दे रहा है कोई हमारी चीज बिगाड रहा है तो कोई हमें उजाड रहा है कोई हमें पीडित कर रहा है तो कोई हमें दण्डित कर रहा है और कोई तो हमारे खून का भी प्यासा है

कर्मसत्ता ऐसे एक नहीं अनेक शॉट लेता है नाना प्रकार के दृश्य खडे करवाता है मनमौजी जो है। इसकी रीति–नीति का भी न ठोर है न ठिकाना कभी हीरो को विलेन का पार्ट पकडा देता है तो कभी विलेन को हीरो का अभिनय।

कुछ भी हो सृष्टि का हर एक प्राणी उसके इशारों पर ही नाच रहा है विविध अभिनय कर रहा है

इसलिए किसी जीवविशेष का आपत्तिजनक बर्त्ताव देखकर यदि हम यह सोच ले यह तो फिल्म के डायरेक्टर–नाटचमडली के सूत्रधार जिसका नाम है **सर्व श्री कर्मसत्ता,** ने उन्हे यह रोल दिया कि तुम प्रतिकूल बर्ताव करो। जब तक वह कट् नहीं कहता तब तक वे उस रोल को अदा करते ही रहेगे हकीकत तो दूसरी ही है । हम तो अनादिकाल से मित्र ही है । इसलिए वर्त्तमान के इस व्यवहार को मुझे बहुत महत्त्व नहीं देना चाहिए बस यदि हम अन्य विचारधाराओं के भँवरों में न फस कर इसे अपनाते है तो आनद ही आनद है। सामने वाले व्यक्ति पर न होता है क्रोध न वैर न सक्लेश की परपरा क्योंकि मन को हमने मना लिया 'यह तो ड्रामा है' ।

मान अपमान सब समान

और, इसी तरह जीवन एक निश्चित क्रम से चलता जा रहा है। हमने मान लिया विश्व एक रग मच है । बस, यही सोच हमारी सुखचैन की चाबी जाती है । प्रसग कैसा भी आ जाय दुख नहीं लगता । नाटक में जिसे गाली है अपमान सहना है त्रास के तीखे तेवर ढोना है वह यही सोचता है अरे, यह तो नाटक। दु ख काहे का दु खी हुए बिना । यह सब मै हसते मुह सहता हूँ एग्रीमेन के मुक्के और पब्लीक के हर एक धक्के कभी अपमान तो कभी सम्मान फिर भी मै सब में समान रहता हू तभी तो मुझे डायरेक्टर–सूत्रधार भरपूर पैसे देता है ऐसा मानने से वह सदा हसता है गाली–वाली, मान –अपमान उसके मन कुछ भी नहीं उसे गाली सुनने से न एतराज होता है न दु ख ।

इसी प्रकार कोई हमारा अपमान भी करता है तो भी हम हल्के से ले लेते है अरे, यह दुनिया तो नाटक है इसका दु ख काहे का लगाना । दुखी हुए बिना सब कुछ हसते मुह सहन करुगा तो अपूर्व निर्जरा होगी . अपार पुण्यराशि

की सपत्ति मिलेगी और सद्गति की परपरा के द्वारा अनत सुख का शाश्वत धाम मोक्ष मिलेगा . ऐसे सुदर और सात्त्विक विचार हम यदि आज से ही करने लगे तो अपमानादि सहन करना हमारे मन सहज हो जायेगा हा इन्हीं विचारों के बूते महात्माओं ने प्राणान्त कष्ट सहे थे न ॥

लगता है यह पढकर..

आप सहसा बोल उठे होगे – भाड में जाए ऐसी शत्रुता जिसने मेरी सद्गति की मिट्टी पलित्त कर दी अमनचैन को मटियामेट कर दी आइन्दा शत्रुता करनी है तो करुँगा शत्रुता पर ही और मैत्री को गले लगाऊँगा सच, शत्रुता के ताप से आकुलचित्त को सुस्ताने के लिए उपलब्ध है घनी और ठडी छाव जिसका नाम हे मैत्री

गूज रहा होगा वह स्वर अब भी मनमस्तिष्क में

"सर्वे ते प्रिय बान्धवा न रिपुरिह कोपि"

प्रेम मैत्री को टिकाना हो तो मनमे चल रही कल्पनाओ पर कडा अकुश लगाओ..... कट्रोल लाओ। छोटी सी बात का बतगड बनाने मे हमारा मन माहिर है । व्यक्तिविशेष का एक छोटा सा विपरीत आचरण और हम कल्पनाओं के बहकाव मे आ जाते है । कल्पनाए हमे व्यक्ति के सही रूप या बात की तह तक जाने नहीं देती । कल्पनाए हमे उल्लू बनाती हे . और सामने खडे आदमी को ज्यादा बिगडा हुआ बताती हे . जिससे हमारे और उनके सबन्धों मे तीराड, विस्फोटक परिस्थितियॉ . फिजूल का तनाव आदि पैदा हो जाते है। वास्तविकता इतनी नहीं होती जितनी हमारी कल्पनाए हमे चित्रित कर बताती है वैश्विक बनती बिगडती परिस्थितियो का सही हल निकालने के लिए जरुरी है कल्पना की विषैली आँखो को मूदकर मैत्री का अवलम्बन किया जाय....

5 जिस खून में मैत्री बहती है.....

बहुधा लोग ऐसे कई अनुभवों को अपने जीवन में देखते-गुजरते चले आते है कि

दो भाईयो के बीच वैमनस्य हो गया। कभी-कभार तू तू-मैं मैं जैसी स्फोटक परिस्थितियॉ भी खडी हो गई । फिर भी जब पडौसी से लोहा लेना होता है, तब दोनो भाई अपना आपसी मनमुटाव भूल जाते है और एक होकर पडौसी को फाइट देते है उसके चक्के छुडवा देते है। क्योंकि वे इस बात को खुब अच्छी तरह से जानते है मानते है और पहिचानते है कि पडौसी हमारा बडा दुश्मन है । उसको मजा चखाना हो छठ्ठी का दूध याद दिलाना हो तो आपसी वैमनस्य को भूलकर एक होना ही पडता है ।

आये दिन होता है

बबई के चाली सिस्टम के सी वार्ड के मकानों में बात-बेबात पर सघर्ष होता देखा जा सकता है। जगह और पानीके लिए आमने-सामने आ जाते है । यह रामायण रोज की है । परतु कभी-कभार वहाँ पर एक विचित्र दृश्य भी देखने को मिलता है । मकरसक्रान्ति के दिनो में नजर आकाश पर गढी है पॉव भूतल टिके है । ये कटा वो काटा और दूसरी छतवालों से मारामारी शुरु आपसी को भूल कर एकजुट हो ये पासपडौसी दूसरों को मजा चखा देते ये वे ही पडौसी है जो सुबह-शाम नल-पानी आदि को लेकर आस्तीन चढा थे । एक दूसरे के अजर-पजर ढीले कर देते थे ।

इसी प्रकार झगडने वाले ये लोग जब किसी और गली-मुहल्ले वालो से लोहा लेना होता है तब एक हो जाते है। और वापिस जब किसी अन्य शहरवालों से भीडत होती है तब पुन अपना आपसी वैर-वैमनस्य भूल कर एक साथ कूद पडते है । अन्यराज्यों के साथ सीमा या नेहरो का प्रश्न खडा होता है, तब परस्पर विवादवाले वे ही शहरवाले स्वकीय राज्यके लाभार्थ एक आवाज और बुलद हौसलेसे प्रयास करते हैं ।

सीमाप्रश्न को लेकर एक दूसरे को फाडखाने पर उतारु महाराष्ट्र और कर्णाटक जैसे राज्यो के जवान सरहद पर एक होकर पाकिस्तान की दूम सीधी करने की कसम खाते है ।

एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए भयकर एव घातक शस्त्रसरजाम करनेवाली महासत्ताएँ-अमरीका और रशिया भी मानवजाति के ऊपर विनाश के बादलों को मडराते हुए देखकर दो कदम पीछेहठ करते है। प्रक्षेपास्त्रो पर नियत्रण करने के लिए शिखरवार्त्ता करते है । ऐड्स को मातहत करने के लिए एक दूसरेसे हाथ मिलाते है । साथमें बैठकर विचार-विनिमय करते है।

इन सभी रोजिदा अनुभवों से हम यह निचोड निकालते है कि जब कभी कॉमन बडे शत्रु से फाइट करनी हो तब छोटे शत्रुओं को अपनी आपसी शत्रुता को ताक पर रख कर मित्रता-सगठन के बूते आगे बढना पडता है तभी जीत हासिल की जा सकती है, वर्ना नहीं. सुना भी जाता है चाणक्यनीति में *"शत्रु का शत्रु अपना मित्र ।"*

अध्यात्म का चश्मा. .

अब इसी अनुभव को अध्यात्म का परिप्रेक्ष्य रख कर देखें सोचें अनुभवें

सपूर्ण मनुष्यजाति को खतरे मे डालने वाले ऐड्स जैसे असाध्य रोगों को पराजित करने के लिए मानव जाति एक टेबल पर बैठती है । उस समय वे अपने आपसी वैर वैमनस्यों को मानों कोसो दूर छोड के आ गई हो । और मित्रता का पूरा वातावरण खडा हो जाता है । एक दूसरे को सहाय करने की तत्परता उनके मुखकमलो पर तैरती रहती है

ठीक उसी तरह, *सपूर्ण जीवसृष्टि का एक कॉमन शत्रु है जडसृष्टि-कर्मसत्ता।* हर एक सचेतन प्राणी को जन्म-जरा मृत्यु-रोग-शोक अनिष्टसयोग-इष्ट वियोग जैसी भयानक दु ख की परपराओं मे जकडनेवाली कोई हो तो वह है कर्मसत्ता। इस कर्मसत्ता बेचारे जीवकी कैसी भयकर दुर्दशा-अवगति करती है ?

कर्मसत्ता का वैर१॥

स्कूल मे शिक्षक को क्या पता एक होनहार लडके से यूहि वैर बध गया। बात-बेबात पर बेचारे को बेहाल कर देता क्लास में थोडा लेट हो जाय होमवर्क न करके आए थोडी सी धींगामस्ती कर दी या प्रश्न का जवाब सही नही दिया कि देख लो मजा । इतनी पीटाई करता कि उसे अपनी नानी याद आ जाती ॥ दूसरे विद्यार्थियों को उन्हीं अपराधो की सजा हल्की फुल्की नहीं

हसा । तू झील

जैसी की जाती परतु जिस पर नाराजगी का कलश ढुल गया उसकी तो समझो सिट्टी गुम । कडक-से कडक सजा फटकार देते है ।

कर्मसत्ता की भी जीवसृष्टि से भयकर शत्रुता बधी हुई है । जीव थोडी सी भूल करता है और उसके लिए कडी से कडी सजा तैयार है । राई-रत्ती भर सजा भी वह कम नहीं करती ।

बिचारा वह विधवापुत्र । मेहनत-मजदूरी कर आया और घर में रोटी नहीं देखी । भूख से वह होशहवास खो बैठा ज्योंहि काम से थकी-हारी मॉ ऑगन में आयी त्योंहि वह अपनी लगाम भूल गया और बोल उठा → "कहॉ तू सूली पर चढने गई थी पता नहीं तेरा यह पूत भूखों मर रहा है" । बस, एकसैकण्ड की इस भूल को कर्मराजा ने रज का गज बना दिया दूसरे भव में उसी सर्ग-अरुणदेव को अकारण ही सूली पर चढना पडा । चद्रा-मॉ भी अपना विवेक-सयम सतुलन खो बैठी और वह भी बोल उठी → कहॉ तेरे हाथ कट गए थे ? छीके पर तो रोटी टॅगी लेते कितनी देर थी ? और भवातर में उसे हाथ कटवाने की भीषण सजा मिल गई ।

बिचारा वह पुरोहितपुत्र । दीक्षा का पालन तो सुदर किया सिर्फ इतना ही मन में सोचा → "गुरुभगवत ने दीक्षा दी बहुत अच्छा परतु जबरन दिया यह अच्छा नहीं किया ।" बस, इतना छोटा-मामूली सा गुरु के प्रति दुर्भाव और मेतारज के भव में दुर्लभबोधि की सजा पकडा दी

याद आती है वह नादान महिला । देवरानीके आभूषणों को उसने चोरी कर पचा लिए चोरी पकडी न गई इसलिए दुनिया की अदालत से वह छूट गई मगर कर्मसत्ता की अदालत इस अन्याय को कैसे बरदाश्त करती ? उसने तो किसी कोर्ट ने किसी भी चोर को न की हो ऐसी क्रूर सजा सुना दी देवानदा के भव में तीनों भुवनों में अनुपम, अमूल्य और अद्भुत रत्न भगवान महावीर गर्भहरण हो गया ।

चावल जितनी कायावाला बिचारा तण्डुलिया मत्स्य । मूह फाड कर बैठा हुआ अलमस्त मगरमच्छ के मुख से तरगों के साथ हजारो छोटी मछलियों को क्षेमकुशल बहार निकलते हुए देखता है और मन से मात्र विचार करता है → *"ओह! यह कैसा मूर्ख ! मै जो इसकी जगह पर होता तो एक को नहीं छोडता!"* और कर्मसत्ता उस छोटे-से प्राणी को लेकर सातवीं नरक के दरवाजे खटखटाती है बिचारा जीव एक छोटी-सी भूल और **33** सागरोपम की भीषण यातना।

पग-पग पर आत्मा की भयकर कदर्थना और क्रूर मजाक करने वाली यह कर्मसत्ता क्या आत्मा की भयंकर शत्रु नहीं है ?

इसलिए सृष्टि के प्राणिमात्र का भयकर से भयकर और बडा से बडा कॉमन शत्रु-कर्मसत्ता है । यदि दु खो से मुक्त होना है तो हमें इस कर्मसत्ता पर विजय प्राप्त करनी ही होगी ।

परम शाति-अमन का गुर

इस शत्रु को यदि सचमुच मातहत करना है तो यह जिनका शत्रु है वैसी सपूर्ण जीवसृष्टि से मित्रता बाधनी ही पडेगी आपसी वैर-वैमनस्यों को ताकझाक कर इस चाणक्यनीति का सहारा लेना ही पडेगा

और

जैसे एक मुहल्ले वालों की दूसरे मुहल्ले वालों से किसी प्रसगवश भयकर झगडे की नौबत आ जाती है । तब जिसके हाथ में जो आया वह उठाकर दौडता है लाठी पत्थर इट सोडावॉटर की बॉटल आदि। मारो-काटो चिल्लाती हुई एक भीड दूसरी भीड से टकराती है इस धक्का-मुक्की में बहुधा गिरना पडना अपने ही साथियों की चीजों से खरोंचे आना पॉव छिल जाना खून निकलना यह सब नगण्य बातें कहलाती है । जानता है हर एक व्यक्ति कि "अरे भाई यह तो अपना ही आदमी है । जानबूझ कर थोडे ही अपना आदमी मुझे मारता है ? थोडी बहुत चोट आ भी गई तो क्या ? और यदि इन छोटी-मोटी चोटों को लेकर हम आपस में ही लड मरेगे तो सामने वाली पार्टी बहुत आसानी से हम पर चढ बैठेगी " इस प्रकार दगे-फसादों में कभी कभार अपनों से भी लग जाए तो भी मन मना लिया जाता है हसते मुह सह लिया जाता है चूकि वहाँ अपनापन उभर रहा है

अपनेपन का चमत्कार

ठीक, उसी प्रकार हमारे जीवन में इस अपनेपन का चमत्कार निहारना है।

जगत मे मुख्यतया दो पार्टियॉ है । एक ओर खडी है समस्तजीवों की पार्टी और दूसरी ओर है जडपुद्गलों की (कर्मसत्ता) पार्टी । हिन्दुस्तान और पाकिस्तान ही देख लो दोनों की अपनी अपनी सरहदें है। कोई भी जीव जड को अपनाने की बालिश चेष्टा करता है और जड उससे दूर भागता रहता है। किसी भी पौद्गलिक वैभव की आसक्ति करने वाला-अपने दिल में उस वैभव को बिठा देनेवाला जीव, कदाचित् उसके लिए अपने प्राणों का भी बलिदान कर दे तदर्थ शहीद भी हो

हसा । तू झील

जाय, फिर भी परभव में वह वैभव साथ आता नहीं है बल्कि वह आसक्ति उसे नाकों चना चबवा देती है। इसलिए यह अनुमान लगाया जा रहा है कि जडवस्तु सर्वजीवों की शत्रु पार्टी है । चूकि जो पेट में पैठ कर पॉव पसारे जिसको अपने में प्रवेश कराने पर भयकर हानि को सिर ढोनी पडती है, वह शत्रु ही हो सकता है ।

जिसको भी इस जडपुद्गलकर्मसत्ता रूप विपक्ष पार्टी पर जीत हासिल करनी है, जो एतदर्थ प्रयत्नशील है वह कभी किसी जीव से अपमानित या इजाग्रस्त हो भी जाय तो वह उसे क्षतव्य गिनेगा । अपनी ही पार्टी का मेम्बर है न? विचारा अज्ञान है तभी ऐसा कर रहा है । जानकार व्यक्ति ऐसा करता ही नहीं और इसका यह वर्त्तन भी ठीक भीड-भाड में एक दूसरे के ऊपर पॉव गिरना जैसा है । बस इतनी सी बात के लिए यदि मैं उसे शत्रु मान लूँ और उससे लडना-झगडना शुरु कर दूँ तो कर्मसत्ता से लोहा लेने की बात भी विस्मृत हो जाएगी एव यदि हमारी पार्टी में ही उथल-पुथल टटा-फिसाद हो जाएँ तो विपक्ष कर्मसत्ता की तो बासो उछलने लगेगी ।

यदि इस प्रकार के विचारों के उद्गम को अपने मस्तिष्क में स्थान दिया जाय तो शत्रुता के काले कलुषित भावों से बचा जा सकता है। नींव इस बात की दृढता से भर लेनी चाहिए (**"जगत के प्राणिमात्र मेरी ही पार्टी के सभ्य है...। और कर्मसत्ता ही सबसे और सभी का खौफनाक दुश्मन है"**)इन दोनों बातों में चोली-दामन का साथ है। द्वितीय बात को मन में जमा ली कि पहली बात को अपने आप टिकने के लिए दो गज जमीन मिल जाती है ।

और ,

कर्मसत्ता के सामने जो जग खेलने के लिए रणभूमि में कूद पडा है उसके । वैसे भी हर एक जीव मित्र रूप ही है । क्योकि अनुकूल वर्त्तन करनेवाला मित्र कहलाता है तो प्रतिकूल वर्त्तन करनेवाला व्यक्ति परम मित्र कहलाना ,, । वह अपने प्रतिकूल आचरण से हमारे कर्मो का नाश करवाता है अत ' का नामोनिशॉ मिटाने में वह अपना अपूर्व योगदान देता है । साधक के मन **बाह्य शत्रु ही सबसे बडा मित्र है** । बाह्य शत्रुओं ने यदि परीषह-उपसर्गो को खडे नहीं किए होते तो कर्म कैसे कटते ? अपने कार्य में जो सहायक बनता है वह तो परम मित्र ही होता है ।

तभी तो

❖ **स्कदकाचार्य** के 500 शिष्यों ने **पालक** को शत्रु नहीं माना परममित्र माना तो उन्हे केवलज्ञान मिल गया ।

☆ चमडी उतारने वालों को ऐसी ही कोई अपूर्व विचारधारा में **खधक ऋषि** 'भाई' का मीठा सबोधन देते है → *"भाई! तुम्हारे हाथ को तकलीफ न हो वैसा मै खडा रहूँ.."*

☆ सोमिल श्वसुर को **गजसुकुमाल** कर्म खपाने में अपूर्व सहयोगी मान रहे है सिर पर मिट्टी की पाली में धधकते शोले उडेल दिया तो भी सोचा ☞ *"अरे, यह तो मै जमाई जो हूँ अच्छा काम कर रहा हूँ मुक्तिरमणी का वरण कर रहा हूँ श्वसुरजी ने आकर यह तो शाबाशी दी है लाल चुनरी की पघडी मेरे सिर बाधी है"* बस, इन सात्त्विक विचारों ने काम फतेह कर दिया केवलज्ञान हो गया कर्मसत्ता को दूम दबा कर भागना पडा

दुन्यवी व्यवहारों में ही आकठ डूबा हुआ और तत्त्व को नहीं समझा हुआ व्यक्ति भले अपने 25-50 पुरजन-परिजनों में ही अपनेपन का भान करे और दूसरों को वह भले पराये माने मगर जो व्यक्ति तत्त्व को समझा है कर्मसत्ता के त्रास से भयकर सत्रस्त है धर्मसत्ता की शरण-दामन लेकर जिसने कर्मसत्ता को चेलेंज फेंकी है उसको तो यह मानना ही चाहिए कि *जीव मात्र मेरे मित्र है ।* किसी भी व्यक्ति में परायेपन की नजर नहीं होनी चाहिए ।

युधिष्ठिर का गणित ग्राह्य

युधिष्ठिर का वह गणित काम में लेना चाहिए ।

दूर्योधन की पत्नी भानुमती ने विनती की → *"दुर्योधनादि को किसी व्यक्ति ने बदीवान बना दिए है । आप उन्हे छुडवाइये मै सहाय की भीख माग रही हूँ "*

भानुमती कि बात को सुनते ही युधिष्ठिर खडा हो गया भीम और अर्जुन इस बात पर उनसे सहमत नहीं थे जब दुर्योधन अपना शत्रु ही है तो क्यों उसे दुख से छुडवाया जाय अपने पाप आप भोगेगा ।

तब युधिष्ठिर कहते है → *घर में भले हम पाच ही है मगर जब कभी बाहरी शत्रु का आक्रमण होता है तब हम पाच नहीं* पूरे एकसौ पाच है। *दुर्योधन आदि आखिर हमारे भाई ही है ।*

और दुर्योधन वगैरह को मणिचूड विद्याधर से छुडवा दिए । यह गणित था युधिष्ठिर का

हसा । तू झील

जब जनता पार्टी आई थी

श्रीमती इन्दिरागाधी करीबन 16 साल तक प्रधानमत्री की कुर्सी पर आसीन रही उस बीच ढाई वर्ष तक श्री मोरारजी देसाई की जनता सरकार राज्य सिहासन पर आई । जनता पार्टी की जीत हुई उसका मुख्य कारण इदिरा सरकार के द्वारा लदी गई आपत्कालीन मीसा भयकर महॅगाई आदि स्थितियॅा जनता त्राहि त्राहि पुकार चूकी थी। इसलिए जनताजनार्दन ने नए चुनावों में इन्दिराजी का स्थिर सिहासन अस्थिर कर दिया उसकी सरकार को हटना पडा । जनता सरकार आयी और हर चीज सस्ती हो गई । ६ से ७ रूपये पहोंची हुई सक्कर ढाई रुपये की हो गई । अन्य चीजों में भी भावों को घटाया गया महॅगाई का दानव काफी हद तक वश में आ गया इतना हुआ फिर भी जनतासरकार ने अपने पाच वर्ष तो पूरे नहीं किए, मध्यसत्र चुनाव करना हुआ और कोंगी के हाथ भयकर पराजय

ऐसा क्यों ?

- इसलिए कि एकता की नींव हिल गयी
- इसलिए कि कुर्सी की लालसा ने हर एक को विचलित कर दिया भीतर ही भीतर आग लग गई

चौधरी चरणसिह के मन में हुआ मैं प्रधानमत्री बनूँ

जग्गुबाबु का भी यही विचार था–

राजनारायण भी इन्हीं में अपना राग अलपते

और उधर मोरारजी देसाई प्रधानमत्री बने हुए तो थे ही

एक तथ्य को सभी भूल गए कि → हमारी मुख्य प्रतिस्पर्द्धी पार्टी काग्रेस लडना तो उसीसे था मगर लडने लगे परस्पर एक दूसरे की टाग पकडकर का सिल–सिला शुरु हो गया घर फूककर तमाशा हुआ सभी बछिया कहलाये

पुन इस बार

पुरानी भूल को नहीं दोहरायेंगे इस नियम के बावजूद मोर्चा सरकार जडे हिलने लगी है ताऊ ने अपने कारनामें किए और भाजप ने अपने वी कहते है कि मैं कुर्सी खाली करने को तैयार हूँ राजीव आ कर अपना स्थान जमा सकते है जनता धर्मसकट में है उसकी मन स्थिति साप छछूदर सी हो गई है न उसे निगलते बनता है न उहलते निगले तो मौत और उगले तो अधापा । मुख्य शत्रु–विपक्ष को भूलकर आपसी झगडे से बाज नहीं आते उसीका

यह परिणाम है ।

याद रखिए → कॉमन शत्रु के सामने सभी को एक होना ही पडता है अन्यथा विजय की बात हवाई किल्ला-सी होगी

इराक के सद्दाम बाबु को सद्बुद्धि देने के लिए बुश - गोर्बोचेव दोस्त बन गए ।

महत्त्वपूर्ण बात

"मेरा मुख्य हरीफ कर्मराजा है . कर्मसत्ता है, अन्यान्य जीव नहीं" इस महत्त्वपूर्ण बात को साधक भूल जाएँ तो महान अनर्थ हो जाता है सुन्दर मानवभव और साधना से दूर सुदूर भटकना पडता है ।

"पॉव के नीचे मेढक फना हुआ, उससे बधा हुआ कर्म मुझे परेशान करनेवाला है बार बार याद दिलानेवाले ये बालमुनि नहीं दडा मारना है तो इसी कर्म को प्रायश्चित द्वारा मारु बालमुनि को नहीं" इस बात को भूलने का क्या खराब परिणाम आया यह तो जगप्रसिद्ध है । साधु चडकौशिक सर्प बन गया ।

आत्मा के उपर चिपके हुए ये कर्म तो आत्मा पर उपसा हुआ फफोला से है । मानवपीलनयत्र में पीसनेवाला पालक तो उस फफोले को नश्तर से काटनेवाला सर्जन डॉक्टर है । अत महाउपकारी है वह तो। इस विचारधारा के जरिए पाचसौ महामुनियों को कर्मसत्ता पर सपूर्ण विजय मिली। और वे सभी ससार से सदा के लिए मुक्त हो गए ।

जबकि पालक को शत्रु के ऍगल से देखने वाले स्कधकाचार्य क्षमा का पाठ भूल गए। अत न रहा चारित्र और न रही सद्गति-शिवगति। उपर से ससार परिभ्रमण चालू रहा ।

क्रिकेट मे जीत कब?

आजकल क्रिकेट की हवा चली है। उसमें भी यह सिद्धात लागू पडता है। चान्सलेस भव्य इनींग्स खेलने वाले धुआधार बेट्समेन, कातिल स्पेल वाले नामाकित बोलर, ओर टाइट फिल्डींग आदि सब कुछ है फिर भी यदि आपसी वैर-विरोध के वायरसने एकता-अखडता की ऐसी-तैसी करने का श्रीगणेश कर दिया हो तो उस टीम को मुह की खानी पडती है। अर्थात् जिस टीम में टीमवर्क न हो खेलाडी एक-दूसरे से तू-तू, मैं-मैं के कारण महाभारत की अक्षौहिणि सेना के दॉव-पेच खेलने जा रहे हो वह टीम जीत नहीं सकती ।

और कदाचित् एक से एक वढकर खिलाडी न भी हो फिर भी यदि पार्टीस्पीरिट

हसा । तू झील

हो, तो वह टीम जीत शकती है ।

इसी प्रकार तप त्याग, स्वाध्याय आदि सब कुछ ए-वन है मगर अपनी टीम रूपी सर्वजीवों के प्रति दिल में मैत्री नहीं है बल्कि आपस में ही एक दूसरे को हराने की की बाजी लगी हुई है काटने की बात है तो याद रखिए कर्मसत्ता से लोहा लेना महँगा पडेगा जयश्री की फूलो की माला की बजाय पराजय की चप्पल की माला तैयार है इसीलिए सर्वजीवों को अपनी पार्टी मानना जरुरी है।

भ्रान्ति का भूत भगाओ

अनादिकाल से मोहराजा ने इस आत्मा की ऐसी स्थिति कर रखी है कि न पूछो बात। उसीकी बदौलत यह भ्रान्ति के भूत का शिकार बन बैठा है इसलिए जडपार्टी में अपनत्व देख रहा है और जीवपार्टी में परायेपन निरख रहा है । उसकी परखशक्ति मोह ने इतनी कमजोर बना रखी है कि जीव को वह शत्रुपार्टी ही मान रहा है ।

तभी तो

जड की ओर से कैसी-भी छोटी-मोटी परेशानी खडी हो जाएँ, वह उससे उद्विग्न-विरक्त नहीं बनता किन्तु किसी न किसी जीवकों ही प्रतिकूलता को खडी करने में जवाबदेह गिनकर-दोषित सिद्धकर उस जीवके प्रति ही द्वेष करता है।

पथ पर चलते वक्त किसी पत्थर का ठेका लग जाय तो भाईजान गाली-गलौज की शब्द-सपदा बक जायेंगे "सा लोग भी कैसे कैसे होते है? जहॉ-तहॉ पत्थर फेंकते सोचते ही नहीं सब के सब इडियेट है ।"

चोट आई पत्थर से और महाशय दोष दे रहे है जीवों को कमाल है।

लक्ष्मी चली जाती है। करोडपति का 'क' गुल हो जाता है । ऐसे समय को सोचना यह चाहिये था कि → सचमुच लक्ष्मी चचल है उसका ही है वह कब चली जाएँ पता नहीं कब दोनों लाते मार कर अपना नाम सार्थक कर दे पता नहीं"। मगर सोचते क्या है → "ओह। दगाबाज ने मुझे अपने चगुल में फसा दिया पार्टनर ने विश्वासघात किया इसलिए कगालियत मिली । लोगों ने मेरा धधा तोड दिया ।"

इस प्रकार, वह हर प्रतिकूलता का जवाबदेह किसी न किसी जीव को पकड ही लेता है होली का नारियल बना ही देता है । और उन-उन व्यक्तियों पर कोप करता हुआ वैरवृत्ति बाध लेता है ।

उस वक्त वह ऐसा विचार नहीं कर पाता कि → चलोजी एक बार यह

बात मान भी ली सामनेवाले व्यक्ति ने जानबूझ कर मुझे परेशान किया है मेरे लिए प्रतिकूलताएँ खडी की है, तो भी उसे गौण करना चाहिये क्योंकि मुझे तो कर्मसत्ता पर जीत प्राप्त करनी है आपसी झगडे-टटे में उलझ जाऊँगा तो शत्रुपार्टी को कैसे हरा पाऊँगा ? और चूंकि कर्मराजा मेरा सबसे बडा दुश्मन है और सामनेवाले जीव का भी वह दुश्मन है तो *'मेरे दुश्मन का दुश्मन मेरा मित्र'* इस हितकर गणित से मैं उसे मित्र मानू, उसीमें मेरा भला है। नहि तो कर्मसत्ता मेरे उपर हावी हो जाएगी मुझे बरबाद कर देगी। जैसे कि पहिले बता दिया गया-किसी ने गाली दी भद्दे शब्द कहे किसीने मेरी प्रिय वस्तु को तोड दी फोड दी किसीने मेरे यश पर कालिख पोत दी यह तो सब चलता है चूंकि मेरी पार्टी वालों ने किया है जैसे शत्रु का सामना करने हेतु जा रहे मुहल्लेवालों का भीड भाड में घर्षण-पीडन होता है उसी प्रकार । इस छोटी-सी नगण्य बात के लिए आपस में भीडना मेरे लिए ही हानिकारक है "

अथवा यह प्राणी ऐसा भी नहीं सोचता कि → यह सब कर्मसत्ता के द्वारा रचा गया नाटक है । उसको सूत्रधार ने वैसा रोल दिया, इसीलिए वह ऐसा आचरण कर रहा है ।

जड के लिए व्यक्ति इस विचारधारा को अपना भी लेता है जैसे शरीर बारबार रोगग्रस्त रहता हो व्यक्ति को परेशान करता हो तो साधना की कुछ भूमिका पर आरूढ हुआ व्यक्ति यह सोच भी लेता है *'मेरा भाग्य ही ऐसा कि मुझे शरीर अच्छा नहीं मिला'*

परतु जब उसे स्वजन-परिजन-पुत्र-परिवार के किसी सभ्य की ओर से बारबार परेशानी आती है उस वक्त वह अपनी विवेकबुद्धि से समाधान नहीं कर पाता कि मेरा भाग्य ही ऐसा फूटा हुआ है इसलिए मुझे ऐसी कर्कशा पत्नी मिली है ।

जड की ओर से आनेवाली प्रतिकूलताओं में समाधान कर लेना फिर भी सरल है परतु जीव की ओर से आनेवाली एक रत्तीभर प्रतिकूलता में भी समाधान करना इतना सरल नहीं ।

जल्दबाजी में दौडनेवाला इसान यदि किसी लकडी या लोहे की सलाकों से चारो खाने चित्त होकर पड जाएँ, तो व्यक्ति मन ही मन समाधान कर लेता है "मै ही देखकर न चला इसलिए गिरा "

मगर पॉव पसार कर बैठे हुए व्यक्ति के पॉव से ठुकरा कर अगर वह

हसा । तू झील

गिर गया तो यही समाधान नहीं ढूढ पाता उपर से चार बोल मिजाज से कह कर जाता है → बीच रस्ते में पॉव पसार कर भी बैठा जाता हे क्या ? विलकुल बदतमीजी है इत्यादि न जाने कितने शब्द–अपशब्दों की झडियॉ लगा देता है। इससे क्या यह उजागर नहीं होता कि हमारा लगाव–लगन जड की ओर ज्यादा है.. **जीव की ओर कम है या विल्कुल है ही नहीं?**

यह खोज महत्त्वपूर्ण है । इस विषमता का आधार प्राणीमात्र है । प्राय सभी में यह सायकोलोजिकल इफेक्त व्यक्त–अव्यक्त रूप से पडी रहती है । तभी तो व्यक्ति को जड की अनुकूलता में जितनी हार्दिक खुशी होती है उतनी जीवों की अनुकूलता पर नहीं

हम जडभक्त है या जीवभक्त

भोजन में चटनी बनाई । आप भोजन करने वैठे मुह में डालते ही पानी–पानी हो गये वाह। कैसी चटनी बनी है । मगर उसी समय क्या चटनी को बनाने वाली पत्नी की महत्ता दिल से महसूस होती है?

जब–जब पुद्गल की अनुकूलता मिलती है तब तब भीतर ही भीतर जो आनद की फिलींग होती है वैसी ही फिलींग उस पौद्गलिक अनुकूलता को खडी करने वाले जीव के प्रति उत्पन्न नहीं होती ।

इससे विपरीत एकाधबार भी यदि चटनी में गडबडी हो गई तो गुस्सा किस पर आयेगा ? चटनी पर या पत्नी पर ? अरे, बिचारी पत्नी को इतना ढेर सारा सुना देंगे कि बस देखते ही बनता है ।

हर दिन ढग से काम करनेवाला नौकर यदि एकाध बार भी गफलत खा तो जली–कटी सुनाने वाला इन्सान हर दिन कुछ न कुछ आफत का सिरदर्द करने वाली अपनी देह पर कोपायमान नहीं होता ।

वर्षो तक पति की हर एक इच्छा को स्वकीय इच्छा मान कर चलने ।। सुशीला पत्नी बस सिर्फ एक बार भी पति की इच्छा के विरुद्ध चली गयी ५वा। तो पति को सिर्फ कल्पना खडी हुई कि → "पत्नी मेरे विरुद्ध इच्छा वाली है" तो भी उसके बारह बजाने वाला पति, शरीर–व्यापार के विषयमें सब कुछ अपने ऊपर ओढ कर चला लेता है ।

शरीर इच्छाविरुद्ध बरत रहा हो अर्थात् रोगी बन जाता हो या व्यापार इच्छाविरुद्ध अर्थात् मुनाफा के बदले लोस में चल रहा हो तो उस ओर लोग अपना ध्यान ज्यादा बटाते है परतु कोई स्वजन इच्छाविरुद्ध चलने लगे तो उसकी

ओर प्रेम बढा कर ज्यादा ध्यान देने की बजाय प्रेम घटाता क्यो होगा ? उपेक्षापूर्ण दृष्टि से क्यो देखता होगा ?

"मेरा कहा हुआ मानता नहीं है मनमानी करता है अपनी खिचडी अलग पकाता है" इस बात का पता जिस दिन लगता है उसी दिन से उस पुत्र के प्रति वात्सल्य में ज्वार की जगह भाटा आने लगता है क्या यह बात अनुभवसिद्ध नहीं है ? *'मेरा लाल सुखी रहे'* तदर्थ जो प्रयास पहले चालू थे उनमें भारी कमी नहीं आती?

कैसी भयकर भूल!

यह और इस प्रकार के और भी अपने कई रुख है उन सबका अध्ययन करेगे तो पता चलेगा कि सभी में एक बात जरुर प्रतिबिम्बित है *"जड के प्रति अपनी आत्मीयता "* अर्थात् जड के साथ हमने हमारा सबन्ध अत्यत गाढ बाध रखा है हमारा आकर्षण उसके प्रति इतना गहरा है कि हम हमारी विश्वसनीयता का पूरा कलश उसी पर उडेल देते है । कुल मिलाकर हम जड की पार्टी को ही हमारी अपनी पार्टी तय कर चुके है ।

इसके सामने, जीवों की पार्टी को हमने विपक्ष–ओपोजीग पार्टी मानी है इसलिए हमें न तो उनके प्रति आकर्षण है न उनके गुणो के प्रति यदि थोडा बहुत आकर्षण किसी जीव के प्रति हो तो भी वह उसकी पौद्गलिक समृद्धि के कारण ही ।

पुद्गल और जीव के प्रति हमारे रुख में यह जो डिफरेस है उसके कारण मस्तिष्क में एक अजीब गणित स्थान लेता है ।

प्रेम का गणितशास्त्र जूदा है

यह एक ऐसा गणित है जिसका आविष्कारक कौन है ? कब यह अस्तित्व में आया ? क्यों आया ? कुछ पता नहीं । किस स्कुल–कॉलेज–युनिवर्सिटी में इसका पठन–पाठन होता है? पता नहीं । कोई टीचर–वीचर कक्षा में या ट्युशन क्लासेस मे पढाते हे? सुना नहीं । कोई पब्लीशर इसे टेक्स्टबुक के रूप से प्रकाशित करता है? कहीं पढा नहीं ।

फिर भी एक बात निश्चित है आदमी जब से इस दुनिया में पहली बार अपना ऑख खोलता है तभी से वह इस सूत्र को पढा हुआ ही होता है ।

"अपनापन जितना अधिक, उसकी भूल उतनी अधिक क्षम्य..!!"

अग्रेजी मे कहावत हे

हसा । तू झील

When the love is thick fault is thin.
When the love is thin fault is thick.

यह है प्रेम का अजीब गणित ।

जब प्रेम गाढ होता है तब भूल छोटी लगती है । और जब प्रेम छिछर होता है तब वही भूल बडी बहुत बडी लगती है ।

आपका अत्यधिक कॉच का सुदर नकशीदार झाडफानूस यदि यकायः आपके किसी नौकर से फूट जाय तो क्या दड करेगे? यदि विनयशील पुत्र टूट जाय तो क्या सजा फरमायेंगे? प्रेम की दिव्यमूर्ति पत्नी से चूर-चूर हो जा तो क्या शिक्षा करेगे ?

और यदि आप जी हॉ, आप यह पाए कि आपके ही हाथों से उसव नामोनिशॉ मिट गया बोलिये क्या सभी गुन्हेगारों को एक ही न्याय मिलेगा या कुछ डिफरेस होगा?

नुकशान समान है परतु सजा में फर्क है ऐसा क्यों ?

जवाब स्पष्ट है नौकर की भूल जितनी अक्षम्य लगती है, उतनी पु की नहीं पुत्र की लगती है उतनी पत्नी की नहीं और पत्नी की लगती है उतनी व्यक्ति की अपनी भूल अक्षम्य नहीं लगती। यह एकदम स्वाभाविक है अरे, अपने से जो टूट जाऍ तो कदाचित् हृदय में दु ख जरुर लगता है मग मै अपराधी हूँ दण्डनीय हूँ सजापात्र हूँ ऐसा लगता ही नहीं ।

यही बात प्रस्तुत मे है

पुद्गल के ऊपर राग इतना गाढ है कि वह हजार गुनाह करे माफ है। वह लाख प्रतिकूलताऐं खडी करे उसकी भूल ही नहीं दीखती है, अत उस पर . या क्रोध उत्पन्न नहीं होता

जबकि

आज दिन तक जीव के ऊपर वास्तविक प्रेम-मैत्री उत्पन्न ही नहीं हुई इसलिए उसकी एक भी भूल आदमी सह नहीं पाता। प्रत्युत उस पर आग उगलने लगता है भयकर द्वेष करने बैठता है ।

१४४४ ग्रन्थों के रचयिता आचार्य *श्री हरिभद्रसूरिपुगव* ने अपने *अष्टक प्रकरण* में प्रतिपादन किया है-

"राग, जीव और पुद्गल दोनों की ओर होता है, जबकि द्वेष जीव पर ही होता है. पुद्गल पर नहीं"

इसमें भी जो बात लिखी गई है कि "जीवो पर राग होता है" वह भी पौद्गलिकरागके कारण ही हो, ऐसा लगता है ।

अर्थात् सही ढग से सोचा जाएँ, तो एक ही बात नजर आती है

पुद्गल पर राग . जीव पर द्वेष

इसी तथ्य में जीव की अनादि की चाल-चलन का नग्न प्रतिबिम्ब पड रहा है। अत जैसे कि पूर्व प्रकरण मे कहा जा चुका है इस अनादि की चाल को परित्याग कर नए सिद्धातों के परिवेश में ढाचे में अपने को ढालना है

"जड पर द्वेष=वैराग्य. जीव पर राग=मैत्री .."

पुद्गल का आकर्षण हटाए बिना जीव के प्रति आकर्षण पैदा नहीं हो सकता।

बाकी जिसका स्वभाव बिल्कुल ही विपरीत हो, ऐसे जडपुद्गलो के साथ सबन्ध टिकेगा भी कैसे?

एक भाई दानवीर हो और दूसरा हो मक्खीचूस एक हर एक बात में उदार रुख अपनाता है और दूसरा हर बार अपनी अनुदारवृत्ति का परिचय देता है । छोटी-छोटी बातों में भी अपने ओछापन से बाज नहीं आता है । एक भाई धर्म की तीव्ररुचिवाला है तो दूसरा धर्म के प्रति भयकर द्वेषवाला ।

ऐसे बिलकुल विपरीत स्वभाववाले दो भाई एक घर में कदाचित् साथ मे रहते भी हो तो वह सबन्ध कच्चे सुत-सा होगा कब टूट जाय कह नहीं सकते । अर्थात् किसी-न-किसी दिन तो उनका सबन्ध टूटने वाला ही है ।

इसी प्रकार जीव और जड ये दोनों बिलकुल विपरीत स्वभाव वाले है।

☆ जीव अमूर्त्त है न उसमें रूप है, न रस न गध है, न स्पर्श ।

✧ जबकि जडज्ञ मूर्त्त है उसमें रूप भी है और रस भी गन्ध भी है और स्पर्श भी।

☆ जीव नित्य हे शाश्वत है।

✧ जड अनित्य है नश्वर है।।

☆ जीव चैतन्य से स्फूरायमान है

✧ पुद्गल सर्वथा ज्ञानशून्य जड है ।

अब सोचने जैसी बात है एक है पूरब, दूसरा है पश्चिम इन दोनों का मेल हो भी तो कैसे ? और हो भी जाय तो टिकेगा कब तक ? आज नहीं तो कल टूटेगा जरुर। और आत्मा जितनी जितनी उस जडको चिपकने के लिए जायेगी उतनी ही उसकी दुर्दशा क्या नहीं होगी ? अत ज्ञानी चीख-चिल्लाकर

हसा । तू झील

कहते है ➛ भैया । पुद्गल का आकर्षण तोडो जीवों से मैत्री जोडो । अब समझदार हो जाओ और पुद्गल को ओपोजपार्टी मानो और जीवों को अपनी पार्टी मानो ।

किसी भी जीव की ओर से परेशानी-प्रतिकूल बर्त्ताव हो तो let go का सुवर्ण पकडो चूकि यह बर्त्ताव अपनी ही पार्टी के व्यक्ति के द्वारा हुआ है । बस, यह सोचा नहीं कि आपका सिर बरफ जैसा ठडा बन जायेगा न झगडा होगा न टटा शत्रुता के भाव ही जल-भुन कर राख की ढेर में परिवर्त्तित हो जायेंगे।

कहते है न? *"United we stand, Divided we fall"* – *"सप त्या जप"*–*"सहति कार्यसाधिका"* ज्ञानी पुरुष यही कहते है ☞ जीवों के साथ सघर्ष को नहीं मैत्री को विकसाओ सुमेल खडा करो तो ही कर्मसत्ता के छक्के छुडवा सकोगे । जीवों के साथ यदि कुमेल होगा तो आपको मुहकी खानी पडेगी । तभी तो गाना है

जिस खून में मैत्री बहती है
उस खून में शक्ति रहती है

एक कहानी सुनाऊँ?

पिता शय्या पर मरणासन्न थे । मौत कब आधमके और जरा से जर्जर काया को कवलित कर ले कहना कठिन था । परतु पिता के चेहरे पर व्यथा की कथा स्पष्ट प्रतिबिम्बित थी । प्राण परलोक की ओर प्रयाण नहीं कर रहे थे । पुत्र विनीत और पितृभक्त थे । उनसे रहा न गया सहा न गया। पूछ बैठे, "पूज्य पितृवर । आप क्यों व्यथित है ? क्या आपको कुछ कहना है ? या आपकी कोई इच्छा-विच्छा बची-खूची है क्या ?

पिताजी बुद्धिमान थे । पुत्रों को शिक्षा देना चाहते थे परतु निराले ढग नपीतुली आवाज में बोले ☞ "प्यारे पुत्रो । एक काम करो सामने जो है उसमें से लकडी की गठरी उठा लाओ "

चारों आज्ञाकित थे । उठे दौडे और पलक झपकते ही गठरी हाजिर की। ने कहा ☞ "अब इस गठरी के दो टुकडे करो" सब ने कोशिश की किसी से बात न बनी। दाल न गली सो न गली ।

अब पिता ने मुस्करा कर आर्डर दिया ➛ *'गठरी खोल दो और एक-एक लकडी तोडो'*

लडकों ने हाथ में ली कि चट यह टूटी वो टूटी बस सबकी सब टूट कर दो हो गई ।

पिता ने सुनहरी सलाह दी ➛ याद रखो । जब तक तुम चारों भाइयों

मे एकता होगी तब तक कोई तुम्हारा बाल बाका नही कर पाएगा और जिस दिन तुमने अलग-थलग अपनी खिचडी पकानी शुरु की उसी दिन तुम्हारा विनाश है । यह इस पर से समझ लो ।

अनुभवी आदमीकी यह बात हमें भी हमारी डायरीमें नोट कर रखनी है।

जीव यदि मैत्रीभावना से सारी जीवसृष्टि से जुडा रहता है तो मजाल है कर्मसत्ता की वह जीव को तग कर सके।

और ठीक इससे विपरीत यदि जीव शत्रुता की दीवार खडी कर सपूर्ण जीवसृष्टि से अलग-थलग हो जाय तो विश्व में ऐसी कोई हस्ती है जो बिछुडे हुए उसे कर्मसत्ता की मार से बचा सके ॥ इसलिए पुन गुनगुनाइये

जिस खून मे मैत्री बहती है!

उस खून मे शक्ति रहती है!!

समुद्रमथन करने पर जब अमृत और झहर दोनों बहार आये, तो शकरजी ने कहा दुनिया को अमृत दीजिए और मुझे झहर.. मैं झहर पी जाउगा ।

जो स्वयं झहर पी कर दुनिया को अमृत देता है वह शंकर=भगवान बन जाता है । सगम के घोर उपसर्गों को सहन करके भी श्री महावीर प्रभुने तो सगम को करुणा ही दी थी न ।

मुझे क्षमा, प्रेम और मैत्री का अमृत चाहिए, लेकिन मैं तो क्रोध और वैरका झहर ही दूगा .. ऐसा करनेवाला शकर नहीं होता, सर्प ही होता है जो दूध पी कर झहर बरसाता है ।

याद रखना चाहिए - शकरजी को ही दुनिया का प्रेम और पूजा मीलते है, सर्प को तो तिरस्कार और दडेही .

Divide and Rule
कर्मसत्ता की कातिल कुटिल नीति

हिन्दुस्थान के राजा कमजोर नहीं थे, बलवान थे । कायर नहीं, शूरवीर थे । निर्बल छोटी–सी सेना से नहीं, सबल शौर्यमपन्न सेना से परिवृत थे । उनके शस्त्रागार खाली–खम नहीं, भरपूर थे। युद्धकौशलसे अनभिज्ञ नहीं पूरे जानकार थे।

फिर भी

हजारों किलोमीटर दूर से बहुत थोडी सख्या में आये अग्रेज विजयी कैसे हुए? किस बल पर उन्होंने समुचे भारत को गुलामी के बन्धनों में जकडा? उनका सैन्य और शस्त्रसरजाम की ओर देखा जाय तो हाथी के सामने चींटी और विशाल हिमालय के सामने राई–रत्ती बराबर भी नहीं थी। ऐसी परिस्थिति में सामान्यत विजय के चान्सेस १0% भी नहीं थे। फिर भी वे जीते यह fact है ।

आखिर किस बल पर?

शत्रु पर फतेह पाने का गुर

अग्रेजों ने जिस सूत्र का आधार लिया वह था

'Divide and Rule' परस्पर भेद करो जिससे वे आप्स में लड–झगड कर शक्तिहीन बन जाएँ, फिर उन पर शासन करो ।

इस कातिल भेदनीति के बलबूते मुट्ठीभर अग्रेजों ने हिन्दुस्थान के जोरावर ।हें को कम्मर से झुका दिया और हिन्दुस्थान का हर रूप से शोषण किया।

ज्ञानीभगवत कहते हैं ☞ कर्मसत्ता बलवान नहीं है । कर्म की शक्ति ७ढ ।२ है जीव की शक्ति । कर्मसत्ता अपना पूरा जोर लगाकर भी यदि किसी ।व पर टूट पडे और उस जीव को सूक्ष्मनिगोद की अपर्याप्त अवस्थायुक्त भव में भी धकेल दे तो भी वह कर्मसत्ता जीव के मूलभूत ज्ञानगुण का सर्वथा नाश नहीं कर सकती । अक्षर के अनतवें भाग जितना ज्ञान तो जीव में विद्यमान रहता है । *'निच्चमुग्घाडिओं'* । यदि उसका भी नाश हो जाय तो जीव और जड एक हो जाते ।

जब जीव अपना प्रकृष्ट पुरुषार्थ प्रगट करता है और पूरी ताकातसे कर्ममत्ता

पर टूट पडता है क्षपकश्रेणि पर आरूढ होते वक्त

शास्त्रकार भगवत फरमाते है कि → उस समय वह जीव शुक्लध्यान की ऐसी प्रबल आग प्रगट करता है कि उसमें अपने ही नहीं, परतु यदि इस सृष्टि के अनतानत जीवों के कर्म उसमें सक्रान्त हो जाय, तो वे भी सभी जल-भुन कर खाख हो जाय । परतु अफसोस । एक जीव के कर्म दूसरे में सक्रान्त होते ही नहीं अत उसी जीव के कर्म नष्ट होते है ।

बलवान है फिर भी

इस पकार यदि सोचा जाएँ तो एक बात स्पष्ट उजागर हो आती है जीव कर्मसत्ता से कई गुना अधिक बलवान है ।

फिर भी जब तक यह जीव चरमावर्त्त की योग्य भूमिका को प्राप्त नहीं करता है तब तक तो इस पर कर्मसत्ता का ही राज चलता है । निर्बल बैल जैसे इस जीव को कर्मसत्ता जिस तौर-तरीके से नाच नचाती है उसी प्रकार नाचना होता है । चरमावर्त्त का काल भी बहुत लबा है अनत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी। इसका अनतवाँ भाग जिसमें जीव आराधना साधना और जागृति लाता है उस नगण्य काल (अनत की अपेक्षा से) को छोडकर शेष चरमावर्त्त काल में भी कर्मसत्ता सजग रहती है । किसी-न-किसी छिद्र को खोज निकाल कर वह जीव पर टूट पडती है और कई तरह से परेशान करती है । सबल जीव पर अबल कर्मसत्ता अपना राज्य कर सकती है उसका एक कारण यह भी है कि वह Divide and rule की रीति नीति अपनाती है । जीवों में परस्पर मैत्री-एकता न हो इसलिए शत्रुता की एक भयकर दीवार खडी कर देती है यह कर्मसत्ता । और फिर मजे से राज करती है ।

जिस प्रकार अग्रेजों ने हिन्दुस्थान के राजाओं को छोटी बडी लालच दी। सहाय करने की तैयारी बताई । और परस्पर लडाया । तदनन्तर उनके लिए मार्ग आसान था । ईस्ट इण्डिया कपनी ने इन बिछुडे हुए अकेले-अटुले राजाओं को देखते ही देखते हाथ में लेकर मसल दिए-निचोड दिए ।

कर्मसत्ता भी इस विद्या में पारगत है । उसने न अग्रेजों को छोडा न भारतियों को न घोडे को न गधे को जीवमात्र पर अपना झडा लहलहा दिया । ठीक अग्रेजो की तरह कर्मसत्ता भी कुटिल नीति अपनाती है ।

थोडी सी लालच दी और जीव आ गया मुट्ठी में लालच भी कई प्रकार के इसने खडी कर रखी है किसी को धन की किसी को सत्ता मान सम्मान

हसा । तू झील

की। किसी को पाच इन्द्रिय के वैषयिक सुखों की तो किसी को समाज में स्थान-प्रतिष्ठा यशकीर्ति आदिकी *'लालच बूरी बलाय'* जीव उसकी लालच में फस जाता है

"देख । यदि तू उसे सीसे में उतार देगा तो तुझे यह फायदा मिलेगा तदर्थ जो भी बुद्धि, बल आदि सामग्री की आवश्यकता रहेगी उसकी पूर्त्ति मैं कर दूगी" ऐसी प्रेरणा करती है कर्मसत्ता और बिचारा मूढ जीव । उसकी मनलुभावनी बातों में आ जाता है । उसी मुताबिक अपना व्यवहार बनाने का सकल्प करता है। और फिर देखता है जो बीच में आयेगा उसकी ऐसी की तैसी कर रखूगा अपनी ही पार्टी के सभ्यरूप अन्यजीव यदि धन आदि के सुखों की प्राप्ति में विघ्नभूत बनते हो तो अपनत्व को ताक पर रखकर कट्टर शत्रुता उनसे बाध लेता है। कर्मसत्ता की तो पाचों उगलियॉ घी में वह अब आराम से उस जीव को अपनी मुट्ठी में भींस लेती है जीवों में परस्पर शत्रुता तो खडी हो ही गई है न उस आसमानको छूनेवाली दीवारको फादे कौन ?

मोहराजा की यह कैसी चालबाजी । जिसके बूते वह जीव को कैसा महामूर्ख बना देता है? जो चीज न अपनी है और न अपनी होनेवाली है उस के लिए जीव आपस में लड मरते है । छुट्टियों में ट्रेन की मुसाफरी कर रहे है सेठजी कुटुम्बकबीला साथ में है । भयकर भीड भाड में अन्य पेसेन्जरों के कारण धक्का-मुक्की होती है और पागल सेठ अपने ही कुटुम्बीजनों से हाथापाई करने लगते है । जीव भी ठीक वैसा ही मूर्ख है दो दिन का जीना गुनाह होता है जडवस्तुओं का खान-पान आदि का हाथापाई करता है अपनी ही पार्टी के सभ्य जीवों के साथ शत्रुता वैमनस्य खडी कर लेता है अरे मूर्ख । दूसरे पेसेन्जर तो आया-राम गया-राम , उनके कारण स्वजनों से मत भीड जिदगी स्वजनों के साथ गुजारनी है जीवो के साथ गुजारना है क्षणिक पौद्गलिक सुख तो आज है कल उनके कारण अपने स्वजन जैसे जीवों के साथ कलह करना यही तो महामूर्खता ज्ञान-दर्शन-चारित्रादि आत्मगुणों के कारण कभी भी किसी भी जीवके साथ नहीं होती, कम-अधिक पौद्गलिक चीजों के कारण ही होती है ।

कम-ज्यादा, अच्छा-बूरा देना यही तो जीवों में परस्पर शत्रुता खडी करने का कातिल शस्त्र है कर्मसत्ता के पास

कच्छ के दो राजवी वशों मे वैर

कच्छ के उज्जवल इतिहास में **मदुआ** और **भाद्राम** नाम के दो भाई की बात आती है । उदात्तचरित्त उन दोनों के नाम से दो वश चले। उन दो वशों

में अनुक्रम से **आजी** और **पुनराजी** नाम के दो भाई जरकाछा में मेलजोल से राज्य करते थे । वे दोनों अत्यत तेजस्वी और बहादूर थे । जरकाछा में दुष्काल पडा। अपार पशुधन नष्ट होने लगा । जीना दुभर हो गया । अत दोनो भाई अपने विपुल पशुधन को लेकर पजाब की ओर निकल पडे । कई स्थलों में अपना पराक्रम बताते हुए वे सियालकोट तक पहुँचे ।

यद्यपि सियालकोट के राजा **सोरसीपीओ** के पास अधिक सशक्त सैन्यबल था, फिर भी इन दोनों भाइयो के आगे वह पगु साबित हुआ । राजा पराजित हुआ और भागकर काबुल के पादशाह की पनाह ली । पादशाहने फौरन कहलाया "सियालकोट को छोड जाओ या शाही सैन्य से भीडने की अपनी पूरी तैयारी कर लो" आजी और पुनराजी घबडा गए । पादशाह से टक्कर लेने की स्थिति उनमें न थी । और यदि भीड भी जाय तो बापदादो की बपौती-सा मुल्क जरकाछा से हाथ धोना पडे, वैसी भी नौबत आ सकती थी । अपना मुल्क खोना पडे, वैसी उनकी इच्छा नहीं थी । और जरकाछा में दुष्काल भी पूरा हो गया था । वहाँ की प्रजा भी इन्हे बहुत याद करती थी । और यदि सियालकोट को पकड रखा तो *'लेने गई पूत और खो आई खसम'* जैसी स्थिति स्पष्ट थी । अत अब क्या किया जाय इस चिन्ता में डूब गए। अत में फैसला किया कि आजी ५०० श्रेष्ठ बछडों को लेकर पादशाह के चरणों में नजराना धरे और फिर पादशाह की हुकुमत स्वीकार करनी । चूकि दूसरा कोई चारा नहीं था। निर्णयानुसार आजी काबुल पहुँचा ।

नजराना देखकर पादशाह फिदा हो गया। "बोलो तुम्हारी क्या इच्छा है" पादशाह ने पूछा । आजी ने कहा → 'आपकी मीठी नजर ।' वैसे भी पादशाह ने पहिले सुन रखा था इन दोनों के पराक्रम-शौर्य की बातों को। सोरसीपीया को हरा दिया यह भी कोई मामूली-सी बात नहीं थी। आजी की जीवत तेजस्विता भी नजरो से देख ली थी । इससे पादशाह को प्रतीत हुआ कि कब ये दोनों भाई मेरे विघ्न रूप बन जाय ? कहा नहीं जाता । अत साँप मरे नहीं और लकडी टूटे नही ऐसी चाल-युक्ति उसने सोच ली, इन दो भाइयों के बीच में कुसप कर दू तो ही ये दोनों आपस में लडा मरेगे। लेकिन, इन दोनों में कुसप कैसे किया जाय यह भी एक प्रश्न था, परस्पर अत्यत स्नेह और विश्वास वाले जो थे, लेकिन पादशाह ने इसका भी जवाब सोच लिया कि, दोनों उत्तम बलवान है दोनों के पास एक समान सैन्यबल और पशुधन है । अत यदि दोनों को एक समान भेंट

हसा । तू झील

दूगा तो मेरा इरादा कामयाब नहीं होगा । परतु एक को कम दूसरे को ज्यादा दूँगा तो जरुर उनमें अनबन होगी.।

इस प्रकार मन में तय कर आजी को देने के लिए अत्यत कीमती भेंट तैयार करवाई और पुनराजी के लिए कम कीमती तैयार करवाई । भेंट लेकर आजी लौटा ।

सियालकोट पहुँचकर उसने दोनों भैंट पुनराजीको बतायी। पादशाह की बाजी कामयाब हुई। पोशाकों को देखकर पुनराजी के मन में शका का कीडा रेगने लगा। उसने आजी से पूछा → अपन दोनों एकसमान है न तुमने मुझसे ज्यादा पराक्रम किया है न मैंने तुमसे। तो फिर पादशाह ने उपहार में ऐसा फर्क क्यों रखा? आजीने सरलता से कहा, → 'देख भैया। पादशाह ने ऐसा क्यों किया? यह तो मैं भी समझ नहीं पाया हूँ । मैं तो सिर्फ जो दिया वह लेके आया हूँ ।

आजी की बात पुनराजी के मन का समाधान नहीं कर पाई । उसको लगा "जरुर इसने मुझे कम पराक्रमी साबित किया होगा और अपनी बडाइयाँ हॉकी होगी वर्ना यह भेदभाव हो ही नहीं सकता "

उस समय तो वह कुछ नहीं बोला परतु दोनों के बीच वैमनस्य की रेखा खींच गई । कच्छ का इतिहास कहता है कि उन दो भाइयो के बीच भयकर वैर खड़ा हुआ और दोनों का राज्य बटा गया । दोनों पक्षों में भयकर खुन-खराबा और अपार क्षति हुई । दोनों के बीच घमासान युद्ध हुआ और आजी की मौत पुनराजी के हाथों हुई । इतना ही नहीं परतु दोनो वशों में वह वैर चलता रहा।

मुझे क्यों नहीं? की उधम

पौद्गलिक चीजें कम ज्यादा देनी, यह एक कातिल भेदनीति है । जिससे वैर भी बध जाता है ।

- सीता रामचद्रजी को मिले और मुझे (रावण को) क्यों नहीं? इसी का सृजन हुआ है न।
- "सेचनक हाथी और दिव्य कुंडल हल्ल-विहल्ल के पास ही क्यों? राजा हूँ मेरे पास ही रहने चाहिए।" बस, स्त्रीहठ से प्रेरित इस हठाग्रह का मारा कोणिक अपने ही भाईयों को शत्रु बना बैठा करोडों आदमियों का जिसमें सहार हुआ उस रथमूसल और कटकशिला युद्ध की आग इसी पौद्गलिक विषमता की तीली ने ही भडकाई थी न?

अरे, गृहस्थों की क्या बात साधुता के उन्नत शिखर पर पहुँचे हुए साधकों

को भी यह विषमता सताना नहीं भूलती

'सिहगुफा के बाहर चार महीने तक मैंने निर्जल उपवास किए तो गुरुदेव ने मुझे सिर्फ 'दुष्करकारक' कहा और वेश्या के वहॉ रहकर षड्रसभोजन करनेवाले **स्थूलिभद्र** को 'दुष्कर-दुष्करकारक' कहा।" बस, इसी विचारधारा ने सिहगुफावासी मुनि के ऊपर अपना शिकजा कसा तो वे व्यर्थ ही महामुनि स्थूलिभद्र के हरीफ बन गए ।

वर्त्तमान में भी ऐसे दृष्टात कहॉ कम है!

बाप की सपत्ति का बटवारा करने में एक चीज आई । दोनों बेटे अड गए । इस चीज को तो मैं ही रखूगा । बात बढ गई । एक दूसरे से बोलना बध । एक-दूसरे के घर पर आना-जाना अरे, मुह की ओर ताकना भी बध। कभी-कभार तो हद हो जाती है दोनों भाई कोर्ट में भी आमने-सामने हो जाते है सपूर्ण बरबाद भी हो जाते है । कोर्ट में केस चलता रहे और वकीलों का पेट पलता रहे, सरकारी कर्मचारियों की जेबें गर्म होती रहे घर फूक कर तमाशा कर देते मगर भाई पर मुकदमा वापिस नहीं खींचते ।

अरे, जिस भाई के साथ एक मॉ की गोद में खेले-कूदे-पढे-लिखे बडे हुए कभी हमने उसके लिए मार-पीट-खरोंचे खाई कभी उसने हमारे लिए मार खाई अवसर आए एक दूसरे के लिए प्राण देने तक की बातें भी किया करते थे, वही भाई आज आखों में किरकिरीया-सा अप्रिय लगता है बीहड जगलों में शेर-चीत्तों के साथ रहना पसद आ जाता है मगर उस भाई के साथ एक रात भी हम एक छत के नीचे पसार करने के लिए तैयार नहीं है ।

दुनिया का हर एक इन्सान अच्छा लगता है और भाई लगता है खराब से खराब । दूसरा आदमी कदाचित् मुसीबत में आ फसे तो सहाय करने जैसी लगती है, मगर भाई जैसा भाई यदि किसी आफत में फस जाय तो किसी भी हालात मे सहाय नहीं करनी ऐसे विचार मनमस्तिष्क में घुमडने लगते हैं । उपरात ऐसे हीन विचार भी आ धमकते हैं ➡ 'उसको तो ऐसा ही होना चाहिए वह इसी योग्य है' ।

आहाहाहा । एक ही मॉं-बाप के दो बेटों के बीच भी पौद्गलिक नश्वर चीज के लिए कैसा वैर-विरोध । और फिर ? फिर तो एक परकीय चीज के लिए सगे भाई के साथ अबोला और तीव्र द्वेष वाले उस व्यक्ति को कर्मसत्ता बुरी रीत से परेशान करने में सफल हो जाती है ।

हसा । तू झील

आये दिन घर में रामायण–महाभारत की सीरियल चलती ही रहती है जिसके निर्देशक न रामानदसागर होते है न बी आर चोपरा। फिर भी नायक और खलनायक (विलन) का रोल बरोबर अदा किया जाता है। एक ओर होती है देवरानी और दूसरी ओर जेठानी फिर देखो दे धिनाधिन जेठानी फायरिंग का प्रथम राउड चलाती है–देवरानी को कीमती साडी क्यों दी? देवरानीजी कोई कच्ची गोली खाई हुई नहीं होती वह तो चिल्लाती है–जेठानी को नेल्लुर के नग वाला नेकलेस क्यों दिया ? बेचारे सास ससुर और जेठ–देवर की स्थिति देखते ही बनती है। कहते है भैंसा आपस में लडता है और बिचारे झाडों का कचूमर निकलता है आटे के साथ घुन भी पीसती है।

ये ही देवरानी–जेठानी के झगडे में कुटुम्ब भी पीसा जाता है, और हो जाता है कुटुम्बविभाजन।

अथवा कभी इस युद्ध में वैविध्य भी देखने को मिलता है।

"सभी देवरानी को प्रेम से बुलाते है, मुझे नहीं। उसके पीहर पैकावालों की आवभगती ज्यादा करते है, मेरे मैकावालों की नहीं उसने थोडा भी अच्छा काम किया हो तो उसकी भरपेट प्रशसा की जाती है, और जब मैं कुछ अच्छा काम करुँ तो कौन जाने प्रशसा करने में सब के सब एक साथ कजूस बन जात है" ये है देवरानी–जेठानी के झगडे की रूपरेखा। भाई–भाई में भी यादवास्थली जमती है → "पेढी में से बडे भाई पैसे ज्यादा उठाते है, और मैं कम, महत्त्व की बातो में उसी की सलाह ली जाती है, मेरी तो तूती भी नहीं बजने देते मानो उसीको सब आता है और मैं अनपढ निपट गवार हूँ वह मस्ती से दुकान के दो घटे लेट भी आए तो चलता है और मैं दो मिनट लेट आऊँ तो घुडकी मिलती है मानो डॉट–डपट सुनने के लिए ही मैं जन्मा हूँ दिनभर तरह काम मैं करता हूँ पैसे मैं लाता हूँ और प्रशसा उसकी होती है पर बैठा बैठा मक्खियॉ उडाता है और आलसी टट्टु की तरह गद्दी पडा रहता है"।

बस, विचारों में ऐसा ओछापन आया नहीं कि कुटुम्ब को भूकम्प सा झटका लगता है, और कुटुम्ब का भारत–पाकिस्तान की तरह दो टुकडे हो जाते है। जिससे अनेकविध परेशानियॉ घर–घर अपना अड्डा जमा चुकी है।

पहिले हिलमिल कर रहनेवाले जो कुटुम्ब आज विभक्त होकर एक दूसरे की बात को काटना अपना जन्मसिद्ध हक्क मान चुके है। दूसरे भाई के परिवार

में छोटी मोटी परेशानियों को देखकर जो आनन्दित होने लगे है। ऐसे अनेक कुटुम्बों का सर्वेक्षण यदि कोई खोजी व्यक्ति करेगा तो उसे इन सब रामायण-महाभारतों की नींव में एक बात सामान्यरूप से नजर आ ही जायेगी, भौतिक चीजें धन सपत्ति एव मान सम्मान आदिकी लेन देनमें विषमता ही सारे टटोकी जड है ।

मात्र कुटुम्बों में ही नहीं समाज-देश और दुनिया में भी यही सत्य छुपा हुआ नजर आयेगा । हर घटना के पीछे इसका सिक्रेट हेन्ड होगा ।

किस्सा दो दोस्तो का

वैसे काफी समय बीत चुका है। एक किस्सा पढा था किसी मेगेजीन में। पढते ही एक बारगी तो 'ऊफ' निकल ही जायेगा मुह से ।

इलाहाबाद की कोर्ट ऐतिहासिक कहलाती है। कई पूराने-पूराने महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक केस वहाँ चले है । और कई महत्त्वपूर्ण फैसले भी वहाँ इन्साफ के तराजू पे तूल कर आ चुके है । उसकी पुरानी ईमारत में कोर्ट के हॉल के प्रवेश द्वार पर दोनों ओर दो स्टेच्यु लगे हुए है । स्टेच्यु किसी दानदाता के नहीं, अपितु दो जमींनदारों के है । स्टेच्युओं के नीचे उन दोनों का इतिहास कुतरा हुआ है। वे दोनों मित्र थे । पास पास दोनों की जमीन जायदाद थी । एक बार थोडी सी जमीन के लिए दोनों के बीच तकरार हुई । दोनो उस जमीन पर अपना अपना हक जमाने की महेनत करने लगे । बात बढ गई । मामला बिगड गया । केस इस हाईकोर्ट में आया । अब बात जमीन की नहीं रही, नाक का सवाल हो गया। दोनों मे भयकर वैर ने भी मूर्त्तरूप ले लिया था । ख्यात वकीलों को रोके । और केस चलता रहा विवादास्पद जमीन के सिवा सारी जमीन जायदाद अदालत के चक्करों सफा हो गई । दोनों के परिवार बर्बाद हो गए । कगालियत के जीवत रूप बन गए ।

और जब कोर्ट ने फैसला दिया उस वक्त विजेता के पास सिर्फ वो जमीन का टुकडा हाथ लगा और पराजित के पास शून्य । इस इतिहास को लिखकर नीचे लिखा है

"इस वात को वरावर पढ लो और फिर इस अदालत मे आना हो तो आओ"

वोट फोर.

जब जब इलेक्शन आते है, तब तब कोंगी को पराजित करने के लिए दूसरे सभी विरोध पक्ष इकट्ठे होकर एक मोर्चा बनाने की कोशिश करते है। सभी

हसा । तू झील

बखूबी जानते है कि ➛ "यदि हम सगठित न होकर अलग थलग चुनाव लडेंगे तो मत विभक्त हो जायेंगे और उसमें कोंगी लाभान्वित होगी । यही कारण है हमारा पक्ष अकेले में सरकार रच सके उतनी बहुमति तो क्या, सबल विरोध पक्ष बन सके उतनी सीटे भी प्राप्त नहीं कर पायेगा । *"Union is strength सगठन ही शक्ति है । अत हमें सगठित होना जरुरी है।"* और सच ही जब सर्वोदयनेता जयप्रकाशनारायण आदि के अथग प्रयासों से विरोधपक्ष एक हुए तो कोंगी को हारना पडा। और सभी ने मिलकर आखिर सरकार भी रची । जिस जिस चुनाव में समझौता न हुआ और अपनी अपनी खिचडी अलग पकाई उसमें विपक्ष को करारी हार हाथ लगी। उस पराजय का विश्लेषण करते हुए फिर सभी एक सूर निकालते है ➛ हमारे मत विभाजित हो गए इसलिए कोंगी ने बाजी मार ली ।

इतना सब जानते हुए भी और पुन सगठित होने के प्रयास जारी होते हुए भी समझौता के करीब–करीब पहुॅचते ही गुड गोबर हो जाता है । अपने–अपने प्रत्याशियों को खडा करने की धून सवार हो जाती है। "यह सीट तो हमको ही मिलनी चाहिए और इतनी सीटे तो हमारे हक की है" की हवा जोर पकडती है और वापिस वो ही रफ्तार वाली बात आ जाती है। विपक्षो की एकता कागजी घोडें सी बनकर रह जाती है। बस, फिर तो त्रिकोण जग हो जाता है। कोगी के सामने दोनो विपक्ष अपने अपने स्वतत्र उम्मीदवार खडे करते है । एक दूसरे के विरुद्ध प्रचार करते है । परस्पर कीचड उछालना आम बात हो जाती है। और फिर करारी हार मिलती है किसी–किसी की डिपोजिट भी जप्त हो जाती है । चुनाव लडकर भी हाथ मलते रह गए अफसोस के साथ सोचते है ➢ "अर्र्र्र्र सीट के लिए आग्रह नहीं रखा होता और समझौता कर एकता कर ली होती सीट तो अधिक मिलती" ऐसा पश्चाताप करते है । "अब की बार चुनावी दिल को विशाल कर एकता और अखडता करनी ही" ऐसे मनोरथ मन में कुदकने लगते है। और वापिस जब चुनाव आता है उसी बात का होता है 'यह सीट तो मैं दूसरों को लेने नहीं दूगा' अथवा यह सीट पक्ष को मिले ? ऐसा प्रश्न न भी हो तो भी "पक्ष की टिकीट किसे मिले? मुझे ही मिलनी चाहिए अन्य को नहीं," इसी बात को, बतगड बनाकर असतुष्ट नामकी पैदाइश तैयार हो जाती है । और यह जमात सत्ता झपटने के लिए ऐसे पैंतरे रचती है कि तोवा तोवा । और फिर अपने ही पक्ष के सामने उम्मीदवार खडे हो आते है इन्हीं को देखकर व्यग्य कसा जाता है न । शेर बूढा हुआ

तो क्या हुआ शिकार मारेगा ही बदर बूढा हुआ तो क्या हुआ गुलाट तो खाएगा ही राजनेता बूढा हुआ तो क्या हुआ कुर्सी दिखी तो झपटेगा ही और प्रत्याशी असतुष्ट हुआ तो क्या हुआ पक्ष की कम्मर तोडेगा ही ॥

सगठन का विघटन ?

बस, **पौद्गलिक चीजों की विषमता** यही लगभग सारी दुनिया की सब से बडी खतरनाक विभाजक शक्ति है विघटन-विस्फोटनकारी बल है बारुद का गोला है आग का शोला है ।

इसी से विभाजन होता है । प्रतिद्वद्विता खडी होती है और आखिर विनाश भी इसीकी मौलिक देन है । जीवों की एकता-अखडता-सगठन को तोडने के लिए कर्मसत्ता भी इसी विघटनशक्ति को काम में लेती है । और वह शत-प्रतिशत कारगर होती है । कर्मसत्ता विजयी रहती है ।

किसी को ज्यादा मान-सम्मान दिलाती है तो किसी को कम किसी को सुन्दर सौभाग्य दिलवाती है, तो किसी को भयकर दुर्भाग्य किसी को माल-मिष्ठान्न, तो किसी को रुखा-सूखा भोजन, किसी को सुदर चीज तो किसी को भद्दी चीज, किसी को यश तो किसी को अपयश, किसी को सत्ता हथियाने का आनद तो किसी को सत्ता खोने का दु ख

यह सब कुछ कर्मसत्ता का कमाल है इसलिए जिस व्यक्ति को→ "मुझे यहाँ कम मान-सम्मान मिलता है, मेरी तो बिलकुल किमत ही नहीं मुझे कम या निम्न चीज दी और दूसरों को बढिया दी मुझे यश देते नहीं परतु दूसरों को देते है" ऐसे विविध कारणों से मन में जुदा होने का विचार आता है, तब वह "यह कर्मसत्ता की भेदनीति 'Divide and rule' का मैं बलि-बकरा बनकर स्वजनआदि का त्याग कर यदि उनका हरीफ बना तो परस्पर स्पर्धा खडी होगी शत्रुता के बीज बोये जायेंगे, कर्मसत्ता को बहुत फायदा होगा और मैं तबाह हो जाऊँगा" इत्यादि विचार करता है तो मन की उथल-पुथल शात हो जाती है । और यदि यह भी सोच लिया जाय कि "मेरा वैसा पुण्य नहीं उसका वैसा है इसलिए विषमता होगी ही फरियाद की बात ही कहॉ ?" तो तो सोने में सोहागा स्वप्न मे भी जुदा होने का विचार ही नहीं आयेगा । आया होगा भी तो इन शुभ विचारो को देख रफूचक्कर हो जायेगा।

और फिर ? न होगा विभाजन न होगा विघटन न होगी ईर्ष्या न होगा द्वेष न क्लेश न ककास न वैर न विरोध

हसा । तू झील

बस, सिर्फ मैत्री से उभरता हुआ हृदय रहेगा प्रेम की ठडी हवा समस्याओं के ताप से व्याकुल चित्त सुस्ताने के लिए स्वस्थता शाति समाधि की घनी और शीतल छाव इन्हीं घटकों से जीवन जुडा रहेगा और कर्मसत्ता को हार की करारी चोट खानी पडेगी ।

इसलिए जब कभी कोई अवाछनीय प्रसग खडा हो जाएँ और मन में विभाजित होने के विचार चुलबुलाने लगे और उधम मचाने की तैयारी करे, उस समय कर्मसत्ता की कुटिलनीति का शिकार बना न जाय, इसकी पूरी सावधानी बरतनी चाहिए । यही बात हर एक चैतन्यवत को हितावह है ।

"यहाँ मेरी प्रशसा कम हो रही है या होती ही नहीं" ऐसे अनुभवों से जिसे मानसिक सक्लेश खडे होते हो और जिसका मन किसी प्रकार की क्रान्ति या गदर के लिए तडपने लगे उसे चाहिये कि वह अपनी भोथरी समझ पैनी कर सिहगुफावासी मुनि के बूरे हाल नजर समक्ष रख ले ।

"अमुक गहना मुझे ही मिलना था, देवरानी को क्यों दिया ?" यह विचार रह-रह कर जिसे पीडा पहुँचाता हो वह सन्नारी यदि रथमुशल और कटकशिला के युद्ध को मानसपटल पर अकित कर ले तो स्व-पर के भयकर अहित से बच जाय इसमें भी कोई शका को स्थान है क्या ?

मुझे जो व्यक्ति भयकर अपराध और दोषों से भरा हुआ लगता है... उसी को मै प्रतिदिन 'नमो सिद्धाण' कह कर नमस्कार करता हूँ... और इस शक्यता को भी नाहीं नहीं कहा जाता कि पहिले वह आत्मोन्नति कर सिद्ध बन जाय....

तो फिर..... क्यों मै उसके प्रति वैरभावना रखूँ? आखिर क्यों??

7 कर्मसत्ता : कुदरती अदालत

एक सज्जन का पडोसी आफत की बला थी । तग कर रखा था उसने। कभी कुछ तो कभी कुछ परेशानियॉं खडी किए बिना उसका खाना मानो हजम ही नहीं होता था । झगडा-टटा उसकी प्रोटीनयुक्त खुराक थी । कभी ऑगन में कचरा उडेल देता तो कभी चाल के सार्वजनिकनल से पानी भरते वक्त पगडी उछालता रहता । रात को बारह बारह बजे तक दोस्तों के साथ शोरगुल मचाता टीवी, रेडियो, डेक बजाकर चाल की नींद हराम करता । हाथ जोडकर विनती करते-भैया । मेहरबानी करो थके हारे लोगो को चैन की नींद सोने दो । परतु उसके कानों में जू तक नहीं रेगती थी उलटा अपमान करता और गालियो बकता। जोर शोर से झगडा करना इसका अपना निजी शौक था । कभी कभार सज्जन की जवान बेटीकी मजाक भी कर देता । लबाड लफगों का अगुआ जो था । सज्जन इस पडौसी के कारनामे से सत्रस्त था ।

एक दिन ऐसे ही किसी कारण को लेकर कहा-सुनी हो गई । पडौसी को गुस्सा आया । "इसे एक बार बराबर मेथीपाक चखा दूँ" यह सोचकर वह हाथ में लाठी लाया । यह देख सज्जन का भी बॉयलर फटा । स्वरक्षण और भविष्य में इसकी सिरजोरी के आतक का सफाया हो जाय, इस हेतु वह भी प्रहार करने के लिए तैयार हो गया यकायक सज्जन से ऐसा मर्मघाती प्रहार हो गया कि वह पडौसी बेजान होकर गिर पडा लोगों ने तो इस रावणवध से खुशहाली मनाई ।

मगर

पोलिस आई । फौजदारी-खून का केस दाखिल किया गया । कोर्ट मे सज्जन को कटघरे में खडा किया गया। उसने अपनी सपूर्ण बात बयान की । कैसे कैसे वह तग करता था फिर भी सब कुछ शाति से सह लिया मगर जब वह लाठी लेकर मारने आया, तब मैं भी आपे से बाहर हो गया और ऐसा

हसा । तू झील

घातक प्रहार कर बैठा सुनवाई पूरी हुई कोर्ट ने सज्जन की बातों को सुनकर फैसला दिया । परेशानियाँ का जैसा वर्णन किया गया इससे अदालत उस व्यक्ति को बेशक सजापात्र गिनती है और यह भी मानवसहज है कि ऐसी परिस्थितियों में मनुष्य अपना सतुलन खो बैठता है । फिर भी कोर्ट इस सज्जन को निर्दोष छोड नहीं सकती, क्योंकि उमने कानून अपने हाथ में लिया है । चबल की घाटी में रहनेवाले भी इसी कद्र खून बहाते हैं । फूलन इसीलिए गिराहे में शामिल हुई थी और खूखार डकेत बन गई क्या ये सब निर्दोष हैं ?

अधा कानून ।

देश में कायदा–कानून और व्यवस्था बनाये रखना और उसे पालन करवाना यह काम कोर्ट का है । नागरिक का नहीं । सुरक्षाकर्मियों का है, पुलिसों का है । अन्य का नहीं । किसी भी नागरिक को किसी अन्य नागरिक से तकरार–परेशानी हो, तो उसे कोर्ट–सरकार को फरियाद करनी चाहिए । तब कोर्ट अपराध के लिए दण्डित करती है और नागरिक के जानमाल की सुरक्षा करती है ।

परतु पीडित नागरिक उत्पीडक को सजा नहीं कर सकता उसको अधिकार नहीं है चूकि यदि नागरिक ही दड देने बैठ जाय, तो उसका सीधा अर्थ यह होता है उसने कानून को अपने हाथ में ले लिया । इस प्रकार यदि हर इन्सान कानून में हस्तक्षेप करने लगे, तो देश में अधाधुधी फैल जाय । चारों ओर आतक का साम्राज्य खडा हो जाएँ । फिर सरकार देश पर कैसे शासन करे?

तो फिर ? हॉ, गुनहगार तो गुनहगार ही है। उसको तो कोर्ट सजा फटकारेगी ही । परतु जिस नागरिक ने कोर्ट के अधिकार को हथिया कर कानून और व्यवस्था बागडोर अपने कब्जे कर ली और गुनहगार को स्वय सजा करने लग जाय नागरिक भी कोर्ट की दृष्टि से गुनहगार है दण्डनीय है । इसीलिए इस को भी कोर्ट उचित सजा फरमाती है ।

प्रकृति की अदालत

कोर्ट या सरकार अपना जो मुख्य कार्य हो उसमें किसी ऐरे–गेरे व्यक्ति की दखल नहीं चाहती और यदि कोई उसमें हस्तक्षेप करे तो उसे सहन करने की बजाय उस नागरिक को दडित करती है ।

विश्व का तत्र भी कुदरत की सरकार चलाती है। तमाम जीवसृष्टि उसके प्रजाजन नागरिक है । उसमें कोई भी जीव कैसा भी अवाछनीय वर्त्ताव अन्य जीव के साथ करे तो उसे उचित दण्ड करने हेतु प्रकृति की सरकार ने कर्मसत्ता

नामकी कोर्ट स्थापित की हुई है ।

अर्थात् कोई भी प्राणी मिथ्यात्व का आसेवन आदि अयोग्य बर्त्ताव करे या अन्य पाणी को गाली गलौज अपमान आदि अनुचित रूप से पीडित करे, या कोई चोरी करे, खून-डकैती करे या किसी भी तौर-तरीके से तग करे तो कर्मसत्ता नाम की यह कोर्ट उस प्राणी के गुनाह को देख कर दण्डित करती है । और इसी रूप से 'कानून की ऐसी तैसी, कानून क्या करेगा?" बोलने वालो को दिन दहाडे तारे दिखाकर कायदा-कानून और व्यवस्था रखती है । जो बेगुनाह हो उसे इस अदालत मे अदल इन्साफ के जरिये बाइज्जत बरी कर दिया जाता है । मगर जो व्यक्ति परेशान या तग करने के बदल अन्य व्यक्ति को दण्डित करने के लिए निकल पडता है, कर्मसत्ता उसे माफ नहीं करती । उसे यह मजूर नहीं कि मेरे इस कार्य मे कोई व्यक्ति सिर खपाए या माथापच्ची करे । जो व्यक्ति कर्मसत्ता के अधिकार को हथियाने की बालिश चेष्टा करता है उसे भी वह अपराधी मानती है । और कभी तो गुनाह से भी इस हस्तक्षेप के अपराध को बडा और अक्षम्य मानकर कडक से कडक सजा फटकार देती है ।

कटु औषधपान

यह एक नग्न सत्य है। जिसको भयकर सजाओं को सिर पर नहीं उठानी है उसे इस सत्य को बरोबर घूट घूट कर पी लेनी चाहिए ।

इसलिए कोई व्यक्ति गालीगलौज दे, चार के बीच हमारी पट्टी उतारे कोई हमारी चीज वस्तु बिगाड दे मित्रों-स्वजनोंके साथ हमारे मीठे सबन्धों को तोडने के लिए नारदविद्या का प्रयोग करे आक्रोश करे मजाक करे मार मारे इत्यादि एक या अनेक रीति से तग करे तब, 'तू मुझे गाली देता है । मेरी भी जीभ कोई कटी हुई नहीं है मैं भी सुना सकता हूँ,' इत्यादि विचार कर उसके अपराध को स्वय दण्डित करने की भावना रखना यह भी कोई कम अपराध नही है उस वक्त ऐसा विचारने की बजाय यदि ऐसा सोचा जाय वह तो बिचारा अज्ञान है इसलिए गुनाह कर भी दे, तो भी मुझे उसे दण्डित करने की नई आफत मोल नही लेनी वर्ना कायदा और कानून के विषय मे हस्तक्षेप करने का अपराधी मै भी कहलाऊँगा । और उसकी सजा मुझे भी भुगतनी पडेगी' इत्यादि सोच-समझकर सहन करने मे ही मेरा भला है ।

हैरान करने वाले को मारना-पीटना यह काया से की गई सजा है । गाली-गलौज करना, कोसना, तू तू- मैं मैं करना वचन से की गई सजा है । दुश्मनावट

हसा । तू झील

के पौधों को मन ही मन उगाना पनपने देना आदि मन से की गई सजा है।

अपने हित को चाहने वाला बुद्धिमान इन तीनों को कार्यान्वित न कर उनसे कोसों दूर भागेगा । अर्थात् मन से भी शत्रुता नहीं करनी यह स्वहित के लिए महत्त्वपूर्ण चरण है । चूकि इतनी सी बात को भी कर्मसत्ता अपनी कार्यप्रणाली में रोडा मानकर रोडा डालने वाले की पूरी खबर ले लेती है और उस बेचारे जीव को भयकर दु खों की खाई में धकेलते हुए ससारभ्रमणा की भीषण सजा फटकार देती है । इसलिए यदि हमें इन भयानक दु खों से बचना है तो हमें एक बात दिल में कुतरा देनी होगी । किसी भी जीव के प्रति दिल में शत्रुता खडी न हो परतु मैत्री के शीतल झरनें बहते रहे, यही इच्छनीय है इसीमें स्व का और सर्व का हित समाया हुआ है ।

बाकी छोटी या बडी एक बार या अनेक बार सह्य या असह्य सकारण या निष्कारण की गई हैरानगति को समभाव से सहन न कर जो जीव मानो इन्साफ की अदालत के सर्वोच्च हौदे पर बैठा हो वैसे, अपराधी को दडित करने के लिए अपना सिर खपाना लगे या इसाफ की बागडौर हथियाने का निष्फल प्रयास करे फिर चाहे वह जीव दूसरी रीत से बहुत ही उच्च कोटि का आराधक क्यों न हो, साधुता का सुदर पालन करता भी क्यों न हो, कर्मसत्ता उसे भी माफी नहीं बक्षती । किन्तु उसे भी कटघरे में खडा कर भीषण में भीषण सजा दे देती है ।

No Exception ९

दो भाई थे । **कुरुट** और **उत्कुरुट** । ससार की आधि-व्याधि और उपाधि सत्रस्त हो कर दोनोंने दीक्षा ली । घोर तपश्चर्या के साथ चारित्र धर्म का श्रेष्ठरीति करने लगे । सयम और तप के बल पर उन्हे अनेक लब्धियाँ भी प्राप्त । ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए अनुक्रम से **कुणालानगरी** में आये । चातुर्मास लिए गाव बहार कायोत्सर्ग में खडे रहे परतु मेघदेवता रुठ गए । लोगों ने में मान लिया दोनों साधुओं ने बारिस बाध रखी है । अत लोग-बाग आ आकर उन्हे तग करते अपशब्द सुनाते । भयकर तिरस्कार-अपमान करते । कुछ बेहया लोग उन्हे पत्थर और लाठियों से प्रहार भी करने लगे । दोनों मुनिने अपमान और आक्रोश को तो सह लिया था । परतु जब कठोर प्रहार होने लगे तब उनका धैर्य जवाब देने लगा "अच्छा तो यह बात है ? हमारी तप से कृश काया को देखकर निहत्थे और निरपराधी हमें तग करने से बाज नहीं आते सोचते है 'ये दोनों

क्या कर सकते है । तुम लोगों को बारिस चाहिए न ?" मनोमन ऐसा विचार कर एक भाई क्रुद्ध होकर बोला-

"वर्ष देव। कुणालायाम् . हे मेघदेवता । कुणाला में बरसो "

दूसरे भाई का भी क्रोध धधक उठा ही था उन्होंने भी साथ दिया → *'दिनानि दश पच च"* मात्र एक दो दिन के लिए नहीं, पूरे पद्रह दिन ।"

तीसरा चरण पहेला भाई बोला → *"यथा दिने तथा रात्रौ"* दिन ही नहीं निरतर दिन रात बरसना ।

और अतिम चरण को पूरा करते हुए दूसरा भाई बोला → *"मुसलधारोपमेन च"* यह निरतर पद्रह दिन की बरसात मूसलधार हो Rain cats and dogs .

वर्ष देव ! कुणालाया, दिनानि दश पञ्च च ।
यथा दिने तथा रात्रौ, मूसलधारोपमेन च ॥

चारों चरण पूरे हुए । दोनो लब्धिप्राप्त महात्मा थे । इसलिए उनके वचन निष्फल नहीं जा सकते थे । अमोघ थे वे । उमडघुमड कर काली बदलियॉ गगन मे छाने लगी चमचमाती बिजलियॉ गिरने लगी । भयकर मेघगर्जना विनाश और विप्लव की आगाही करने लगी । और मेघदेवता टूट पडे । न आव देखा न ताव मूसलधार बारिस सारी नगरी को बहाने लगी । लोग त्राहि-त्राहि पुकार उठे खम्मा-खम्मा करने लगे मगर उनका काल उनसे रूठ चुका था । सपूर्ण इलाका डूब गया । और दोनो मुनि सातवीं नरक के रौरव दुखो के गेस्ट बन गये । कठोर साधना करके अनेक लब्धियों को प्राप्त करने वाले महामुनियों को भी कर्मसत्ता यह फैसला बेधडक सुना देती है-

'तुम निरपराधी थे यह बात सही है । लोगों ने असह्य पीडाओं से आपको तग किया यह भी सच है । मगर उन्हे दडित करने की अनधिकृत चेष्टा आपने की कानून को अपने हाथ मे लेने की भयकर अक्षम्य भूल की, इसलिए आप भी अपराधी है । अत जाइये सातवीं नरक की हवा खा आइये 33 सागरोपम की भीषण कारावास भुगतिए !

महान कौन ?

इसीलिए ज्ञानी भगवत कहते है ☞ 'सहन करो जो आये और जितना आये सब कुछ समभाव से सहन करना सीखो ईट का जवाब न पत्थर से दो न ईट से । जो वैसा करने गया कर्मसत्ता ने उसे कडक सजा दे रखी है वे बिचारे आज भी नरकादि मे त्राहि माम् । त्राहि माम् पुकार रहे है । अत

हसा । तू झील

प्रहार न करो सहन करो । प्रहार करनेवाला मारा जाता है सहने वाला महान कहलाता है ।

प्रहार करनेवाला हथौडा अल्पसमय में ही भगार में फेंक दिया जाता है। सहन करने वाली निहाई वर्षो तक स्थिर रहती है । प्रहार करनेवाला अस्थिर है प्रहार सहनेवाला स्थिर ऊखल स्थिर है दस्ता को ऊपर से नीचे तक बारबार गिरना पडता है । चोट करनेवाली शमशेर को बदलनी पडती है ढाल को नहीं "

खधकसूरि

कोल्हू में पेरे गए तो भी खधकसूरि के पाचसौ शिष्यों ने ऊँ से चू तक नहीं किया और वेदना को हसते मुह सह लिया । पापी पालक को सजा करने नहीं बैठे तो क्षपकश्रेणि पर आरूढ होकर केवलज्ञान प्राप्त किया मोक्षसुख के भोक्ता बनें ।

खधकसूरि ने पालक के ऊपर लेशमात्र भी क्रोध तिरस्कार द्वेष–फिट्कार आदि न बरसा कर और किसी भी प्रकार की बचाव की दलील या प्रतिक्रिया–प्रतिरोध न कर अपने प्राण से प्यारे ४९९ शिष्यों को भयकर रूप से यत्र में पेरे जाते हुए और मौत को आलिगन करते हुए देखें ।

अच्छे अच्छे समताधारियों को भी क्रोध से तमतमा दे ऐसे उस भयकर अन्याय को देख कर भी उन्होने अपना खून खौलने नहीं दिया सन्तुलन रखा दिमाग पर बरफ का हिमालय सा पहाड ला रखा ।

मगर

हॉ कभी कभी ऐसा भी हुआ करता है सागर को सकुशल पार करने वाले नदी में जा डूबते है ।

इतना सब कुछ सह लिया शाति से मगर

"भैया पालक । अब तक मैंने तुमसे कुछ भी नहीं कहा न प्रतिरोध ।। न कोई दलील की, परतु अब मेरी विनती को मान इस बालमुनि को इस ।ल्हू में तिल की तरह पेराते हुए मैं देख नहीं पाऊँगा इसलिए पहिले मुझे . दे फिर इस बालमुनि को पेरना हो तो पेरना, दया आए तो छोड देना "

इस विनती से पालक का हृदय पसीजा नहीं, चूकि उसे तो खधकसूरि को ज्यादा से ज्यादा पीडा पहुँचानी थी । ४९९ निरपराधी शिष्य को भी इसीलिए मौत के मुह में धकेले और इस बालमुनि को भी और उसके आनद का ठिकाना न रहा ४९९ को कोल्हू में पेरे खधकसूरि को वेदना नहीं हुई और इस बालसाधु

को पेरूँगा तो अवश्य वेदना होगी इसीलिए पालक ने सूरि को जवाब दिया "अच्छा, यह बात है । तब तो मैं इसीको पहिले पेरूँगा क्योकि मेरा मकसद ही यह है कि आपको में ज्यादा से ज्यादा मानसिक वेदना से तडपाऊँ" उसने ऐसा कहते हुए बालसाधु को खींच कर कोल्हू में डाल दिया .

उसकी इस जघन्य कोटि की नालायकी और अन्यायपूर्ण हरकत को देखकर खधकसूरि क्रोध से तमतमा उठे । उन्होंने इन्साफ का तराजू अपने हाथ में लेकर अपराधी को भयकर सजा फटकारने का सकल्प किया । "अन्यायी राजा दडक और पालकमत्री के इस भयकर कुकृत्य को तमाशा की तरह चुपचाप देखनेवाले इस नगर के तमाम लोगों के साथ इस राजा और मत्री का मैं नाश करने वाला बनूँ" । यह सकल्प अविचारित और अरमणीय था। दु साहसपूर्ण था। कर्मसत्ता कहाँ सो चुकी थी? उसने तो फैसला सुना दिया खधकसूरि को ।

"पाचसौ शिष्यों की तरह आपको भी कोल्हू में पेरा तो जायेगा ही, दुख भी वैसा ही सहना पडेगा मगर आप स्वय न्यायाधीश बन बैठे और सजा देने को बैठ गये तो आपको मोक्ष नहीं मिलेगा ससारभ्रमण की भयकर सजा आपको दी जाती है आपके ही निर्यामक वचनों से आपके ५०० शिष्यों ने यह भयकर भूल नहीं की तो उन्हे कैवल्य और मोक्षप्राप्ति की प्रेजेन्ट मिली आपको नहीं।"

भगवान महावीर ने क्या कहा?

विश्वविश्रुत विरलविभूति धीर-वीर-गम्भीर भगवान महावीर ने साडा बारह वर्ष की घोर तपश्चर्या के बाद जिस अद्भुत अपूर्व और अनुपम ऐसे केवलज्ञान कि प्राप्ति की उस केवलज्ञान रूपी अरीसे में श्रमण भगवान महावीर ने इस दुनिया को देखी कैसी थी वो दुनिया? राग से रगीन मोह से मलीन और द्वेष से दीन और हीन ऐसी दुनिया को देख कर परमात्मा ने अपने अनतज्ञान से उसका मूल देखा उसकी जडें देखी और उसमें पाया कि जीव अनादिकाल से कर्मसत्ता के न्याय में हस्तक्षेप कर रहा है इसीलिए उसे कर्मसत्ता दण्डित करती जा रही है उससे मुक्त होने का बस एक ही उपाय है और करुणासागर भगवत ने जीवमात्र को इस कर्मसत्ता के भीषण दण्डों से बचने के लिए उपदेश दिया

"मा कम्मबध करेह"

जो कुछ आये सहन करो सजा करने के लिए मत बैठो भयकर कर्म बाध लोगे फिर उसका दण्ड तुम्हे ही भुगतना पडेगा ।" अरे। सामने वाली व्यक्ति को सजा करने की व्यर्थ चिता में आप अपनी शक्ति और बुद्धि क्यों बरबाद

हसा । तू झील

करते हो छोडो चिता कर्मसत्ता की कोर्ट व्यापक है वह सदा जागरुक है। बिल्कुल बेखबर नहीं। चील की भाति उसकी नजर हर पल हर एक व्यक्ति पर और उसकी हर एक गतिविधि पर गडी हुई है। आपको फरियाद करने की मूर्खता करनी ही नहीं चाहिये। और फरियाद कर भी तो कितनी सकेंगे? आप फरियाद करेंगे भी तो किसकी? जिस का आपको ख्याल हो कि इसने मुझे तन से तग किया मारा-पीटा इसने मुझे वचन से बुरा कहा कोसा बस तन और वचन की ही आप फरियाद कर पायेंगे। वो भी आपको ख्याल हो तो ही मुह बाएँ कर आपको गाली देने वालों का शायद आपको पता न भी हो। मन से आपका सत्यानाश चाहने वाला व्यक्ति आपके इर्दगिर्द बैठा होगा तो भी शायद आपको पता न भी हो उसकी तो आप फरियाद नहीं कर पायेंगे? उसकी सजा क्या नहीं होगी? क्या उसे बेगुनाह मान कर्मसत्ता की कोर्ट रिहा कर देगी? नहीं। कदापि नहीं ॥

फरियाद भी नहीं

अर्थात् किसी ने गुप्त रूप से आपकी निन्दा की या कोई आपके लिए खराब विचार कर रहा हो टट्टी की ओट में शिकार खेल रहा हो तो उसे भयकर अशुभ कर्म बध ही गए तो फिर आपको फरियाद करने की जरुरत ही कहाँ रही? इसलिए जो कुछ भी आए, सहर्ष उसका स्वीकार करो उसे सुस्वागतम्-वेलकम कहो न आए तो भीड कम। मगर आ ही जाय तो वेलकम कहने में ही फायदा है *That which cannot be cured, should be endured* वैरभाव या गुस्सा तो कतई नहीं

'हाय हाय। मुझे ऐसा सहना ? ऐसा तो कैसे सहा जाय ? इत्यादि रूप हायतोबा या आक्रन्दन भी नहीं क्योंकि यह फरियादरूप है और फरियाद भी कर्मसत्ता झेलती नहीं है। मानो वह जीव को उद्देश्य कर कहती है "बच्चा। पता न भी हो तो भी तेरे प्रति किए गए अपराधों का पूरा लेखा-जोखा ढग से रख ही रही हूँ और इन्साफ के तराजू में तोल कर यथायोग्य भी फटकारती हूँ किसी भी व्यक्ति का कैसा भी अपराध चाहे वह छोटा या बडा सब कुछ मेरी पैनी नजर की मुट्ठी में है मेरा तत्र इतना सुघटित और सुव्यवस्थित है कि लाख कोशिश करने पर भी न मेरे से कोई बच पाया है न बच पायेगा। अपराधी के अपराध की सजा अवश्यभावी है। इतना सब कुछ होते हुए भी तुम मेरे उपर अविश्वास कर फरियाद करते हो ? अत तुम भी गुनहगार हो। ले तू भी सजा लेते जा ॥

प्रभु पार्श्वनाथ का पूर्वभव

पुरुषादानीय **पार्श्वप्रभु** का जीव **मरुभूति** । कैसा अनुपम आराधनापूर्ण श्रावकजीवन था उनका । **कमठ** को तो अपने किये का ही फल मिल चुका था देशनिष्काशन । मगर मरुभूतिको बात अखर रही थी ➛ "मैने राजा को कहा और मेरे उस बेचारे अभागे बडे भाई के लिए मुसीबत खडी हो गई न ? आखिर मेरे स्टेटमेन्ट पर ही राजा ने जजमेन्ट दिया अत मै उसके दु ख में निमित्त बना जब तक मैं उसके पास माफी नहीं मागूँगा तब तक मुझे चैन कहॉ?" और माफी मागने की इच्छा से मरुभूति कमठ के पावों मे गिरा । गुसैल कमठ ने उसके सिर पर पत्थर उठाकर पटक दिया। यकायक की इस आफत ने मरुभूति की सिट्टी-पिट्टी गुम कर दी असह्य वेदना से वह कराह उठा और सोचने लगा कि "हाय। मैं तो माफी मॉगने आया था और मुझे इतनी वेदना सहने की आई।" ऐसी फरियाद कर दी आर्त्तध्यान कर लिया । हाय दु ख, हाय दु ख करने लगा। कर्मसत्ता ने बेझिझक फैसला सुना दिया ➛ मुझे फरियाद सुननी ही नहीं है तू कितना भी आराधक क्यो न हो? एकबार तो तुम्हे जाना ही पडेगा पशुयोनि में फरियाद का फल भुगतो और जाओ हाथी बन कर रहो ।।

इसलिए ज्ञानी भगवत कहते है ➢ न कोई प्रतिकार न कोई प्रतिकार की भावना । "वह मुझे हैरान करता है" ऐसा मन पर लो ही मत । यावत् मै हैरान हो गया हूँ ऐसी फरियाद भी मत करो अर्थात् दूसरा कुछ भी मत करो जो आये सहन करो। सिर्फ सहन ही नहीं स्वीकारपूर्वक सहन करो मात्र स्वीकारपूर्वक ही नहीं, सहर्ष स्वीकारपूर्वक सहन करो फिर देख लो मजा कर्मसत्ता की ओर से सजा का तो नामोनिशा ही नहीं परतु बढिया से बढिया बक्षिस मिलेगी । भौतिक और आध्यात्मिक दोनों समृद्धियों का जोरदार ईनाम ।"

हॉ दुनिया मे भी आप यही सत्य अपनी सोलह कलाओं से पूर बहार मे खिला हुआ पायेंगे ।

❋ जो आम्रफल गर्मी सहता है वही पाता है मजेदार सुगध और माधुर्य की विशिष्ट समृद्धि ।

❖ जो हीरा एसिड मे उबल कर सान पर घिसता है वही चमकता है।

❖ जो पत्थर मार मार कर तराशा जाता है छेनी के आघातों को सहता है वही प्रतिमा बनकर जगत्पूज्य बनता है ।

माईकल एन्जलो को पूछा गया ➢ "तुमने यह सुदर मूर्ति बनाई है?"

हसा । तू झील

"नहीं नहीं" माईकल ने कहा "यह अपने आप सुदर बनी है चूंकि मेरे प्रहारो को इसने सहा है ।"

जड की समृद्धि उसके ऊचे प्रकार के रूप-रस-गन्ध-स्पर्श की प्राप्ति आदि है । अत्यत कर्कश स्पर्श वाले पत्थर भी ज्यों ज्यों घिसे जाते है त्यो-त्यों उनमें चिकनाहट पैदा होती है ग्रेनाइट की आत्मकहानी शायद इन्हीं प्रहारों के सहने की जीती-जागती निशानी है ।

यही बात जीव को भी लागू होती है । जो सहन करता है वह उत्तरोत्तर उत्तमोत्तम भूमिका को प्राप्त करता है। यही उसकी समृद्धि है ।

Pay the Price की थियोरी

कुदरत ने यह नियम अपना रखा है ☛ *Pay the price and gain it .* यदि आपको श्रेष्ठतम समृद्धियॉ चाहिए तो मूल्य चुकाओ और माल लो। न तो, कुदरत से उससे आप भीख मागकर ले सकते, न उससे आप चोर-उचक्कों की भाति छीनाझपट्टी से जबरन ले सकते। उसके सपूर्ण मूल्य को चुका कर ही आप प्राप्त कर सकते है । **वह मूल्य है "सहन करना "** सहन करना रूप इस पेमेन्ट को आप पे करते रहो और कुदरत आपको समृद्ध करती जायेगी ।

अरे, निगोद से लगाकर पृथिवीकायादि या बेइन्द्रियादिपन की प्राप्ति और उससे भी आगे चलकर पचेन्द्रियपना एव मानवभव की प्राप्ति किसके बूते? चूकि उन क्षुद्र जन्मों में न धर्म का ज्ञान होता है न अधर्म का अर्थात् सर्वथा विवेकहीन उन जन्मों से भी उत्तरोत्तर भौतिक समृद्धियॉ प्राप्त होती ही जाती है वह सब किसके बलबूते? तो कहना होगा अकाम निर्जरा से यह श्रेष्ठ भूमिका मिली है

हमने दु खों को सहन किया उसीका यह प्रभाव है ।

'सहन करना' यह तो जीव का अनादिकाल से सुखदायक मित्र है । ससार से लगाकर highest या श्रेष्ठ जन्मे तक जितना भी कम ज्यादा मात्रा मिलता है, यावत्, मोक्ष के निर्मल सुख की भी प्राप्ति होती है उन सबको वाला यदि कोई है तो यही मित्र है। सहन करने का मूल्य चुकाया नहीं कि कुछ-न-कुछ अनुकूल-इष्ट मिलेगा ही समझो । दुनिया में चाहे आपको पग-पग पर प्रामाणिकता का दिवाला फूकनेवाले-धोखेबाज जालसाझों की लगर क्यों न दिखी हो परतु कुदरत बडी ही प्रामाणिक है आपने उचित कीमत चुकती की कि होम डीलीवरी से माल आपको मिलेगा ही ।

निरी वास्तविकता

जब हमने तह की बात पहिचान ली तो किसी भी व्यक्ति या अव्यक्ति-जड की ओर से कैसी भी तकलीफ क्यों न आये उसे सहन क्यो न करे? क्यो हम प्रतिप्रहार करने जाय या वैसी भावना भी दिल में पनपने दे ? जो हमारे आराध्य देव है जिनकी हम रात-दिन पूजा अर्चना करते है उन श्रमण **भगवान महावीर स्वामीने** क्या कम सहन किया ?

राह पर चलते फिरते राहगीरों ने उन पर थूका सहन किया भिखारियों ने उन्हे तग किया लबार-लफगों ने पत्थरो से मारा गोपालक ने कान में कील ठोक दी भयकर वेदना हुई उन सबको सहन किया

आखिर क्यों? जन्म लेते ही १ लाख योजन के मेरु को कपित करने वाले ताकतवर भगवान उस गोपालक का सिर्फ हल्के हाथ से कान भी पकड लेते तो बेचारा अभागा चीख-चिल्लाकर मर जाता कील मारने की बात ही कहाँ रहती? ऐसा न कर भगवान ने अपना मस्तक स्तभ की भाति स्थिर रखा जिससे गोपालक को कील ठोकते हुए परेशानी न हो अर्थात् असह्य पहुँचाने वाले उस चरवाहे को सहाय की क्योंकि भगवान मन ही मन खुश थे कर्मों को खपाने का मेरा जो मुख्य जीवनध्येय है उसे हासिल करने में यह मुझे अपार सहायता कर रहा है, इसलिए मुझे भी इसकी सहायता करनी चाहिए। ऐसी उदात्त मैत्रीभावना से परमात्मा ने सहन किया ।

दीपक की भाति ससार में जलता है कोई-कोई
वृक्ष की भाति ससार मे फलता है कोई-कोई
सब प्रवीण है आदर्शों की बातों में, मगर
आदर्शों पर ससार में चलता है कोई-कोई

भगवान महावीर स्वामीने खुद सहन किया और फिर भव्यजीवों को कहा *"यदि मेरे शासन मे रह कर ससार से मुक्त होना है तो यह सूत्र अपनाओ "सहन करना न कोई प्रहार न कोई प्रतिकारा"* यह उनकी सिर्फ बातें नहीं थी क्योकि सिर्फ बातों से होता भी तो क्या है?

शायर ने ललकारा है-

"सिर्फ बाते बनाने से काम नहीं बनता
दिल की सच्ची लगन के बिना नाम नहीं बनता
चौदह साल वनवास में गुजारे बिना

हसा । तू झील

अपने आप कोई राम नहीं बनता"

भगवान महावीर स्वामीने अपने जीवन से यह सच्चाई पेश की सहन करने वाला जीतता है सहन करने वाला समृद्ध बनता है और सहन करने वाला महान कहलाता है यावत् कैवल्यलक्ष्मी को प्राप्त कर मुक्तिसुख का भोक्ता भी बनता हे अत सहन करो ।

परमदयालु परमात्मा क्रूर नहीं थे । स्वाश्रित भव्यजीव दु खी हो हैरान हो ऐसी करुणासागर भगवतकी इच्छा नहीं थी । परतु चमचमाते अनतज्ञान-केवलज्ञानरूपी आयने में उन्होंने यही निरी वास्तविकता देखी कि ➢ सहन करनेसे ही आत्मा की उन्नति है । प्रहार और प्रतिकार करनेमें तो अवनति है । तभी तो भगवान ने साधुओ को कहा ➙ ***'सहते इति साधु*** *जो सहता है वही साधु है । रे साधु! जिस दिन से तुने दीक्षा ली उसी दिन से तुझे इसे अपना जीवनमत्र बनाना है 'मुझे सब कुछ सहना है चिलचिलाती धूप हो या दतवीणा बजवाने वाली कडाके की ठडी गाली हो या अपमान बस, सब कुछ सहन करो विहार करो लोच करो (हाथो से बालो को नोचना), तपश्चर्या करो जिनाज्ञा के अनुसार कष्टमय जीवन यापन करो बाईस परीसह और उपसर्गो को सहन करो"*

जो भी आये बस agreed, no argue अर्थात् Agreement चाहिए, Argument नहीं । जो सहर्ष स्वीकारता है वही शासन में टिक पाता है प्रगति करता है और अनुक्रमेण ससारसागर से पार भी उतरता है ।

मुर्दा और आदमी

जो सघर्ष करने के लिए कमर कसता है वह डूबता है । जीता आदमी के सामने प्रतिकार करता है सघर्ष करता है इसलिए वह डूबता है । जबकि है क्योंकि वह प्रतिकार या सघर्ष की भाषा समझती ही नहीं । सागर उससे अठखेलियाँ करती है प्रवाह उसे इधर-उधर फेंकता है लाश अपनी मनमानी करने देती है जिधर बहाओ उधर वह जाने को उसकी रहती है, अत चाहे वह बीच समुद्र में क्यों न हो वह तैरती है भयकर से क्यों न टकरा जाय तो भी वह तैरती है और एक दिन वही लाश हो आती है । जीता आदमी और मुर्दा में बस फर्क इतना ही है । एक सघर्ष करता है दूसरा नहीं । अत एक डूबता है दूसरा तैरता है ।

ससार भी एक अथाह सागर है । जो जीव इसमें सघर्षरत है प्रतिकार-प्रतिरोध परायण है वह डूबता है। जो सघर्ष-प्रतिकार-प्रतिरोध प्रहार से विरत है

उपरत है वह तैरता है और पार हो जाता है ।

याद रखो... जो भी व्यक्ति प्रहार करने गया, वह शासन से बाहर हो गया और ससार की विशालजलराशि उसे अपने उदर में समा ही लेती है । बेचारा अभागा अपने पैरो पर आप ही कुल्हाडा मारने जैसी दुष्चेष्टा कर बैठता है ।

कौन साधु कौन धोबी

एक साधु पर देव प्रसन्न था । एक दिन की बात है । नदी की बालू पर धोबी ने कपडे सूखा रखे थे और साधु का उन पर पाँव आ गया। धोबी की मास्टरी थी गाली बोलने में । उसने तो अपना पूरा कोष आजमा दिया साधु पर मुह से गाली बके और हाथ से मारता जाय कपडे धोने की आदत जो थी। साधु को भी आया गुस्सा और उन्होंने भी दे धिना-धिन डिशुम-डिशुम चालू कर दी । आखिर मेच ड्रो हुआ । दोनों अलग हुए । बेचारे साधु की भी दुर्दशा थी । खूब चोट आयी । देव हाजिर हुआ । साधु ने फरियाद की → "अब तक कहॉ गायब थे? खास जरुर थी तुम्हारी, तब तुमने सहाय नहीं की । कितना याद किया मैने तुम्हे।"

तब देव ने कहा → अरे बाबाजी मै तो फौरन् आ गया था । मगर क्रोध का चडाल दोनों को स्पर्शा हुआ था आप दोनों पर पागलपन सवार था दोनों एक-दूसरे के सामने झुझारु बन कर लड़ रहे थे। अत धोबी कौन और साधु कौन? मै पहिचान नहीं पाया, इसलिए दो सुग्रीवों को लडते देख मदद करने के लिए आए हुए हनुमानजी की जो मानसिक दुर्दशा हुई थी वैसी ही मेरी भी हुई तो फिर मै मदद किसकी करुँ ? आप ही बताइये।

प्रहार का प्रयास किया तो देव का सान्निध्य-सरक्षण खोया, तो फिर पतितपावन श्री जिनशासन का सरक्षण कैसे मिलेगा ? क्या वह छूट नहीं जायेगा ? जिस व्यक्ति की सहन करने की तैयारी नही .उसका नबर शासन में नहीं लगता । उसे वहाँ प्रवेश नही मिलता । प्रभुदरबार के बाहर ही उसे बैठे रहना पडता है ।

एक काल्पनिक कहानी

एक श्रावक महाशय परमात्मा के मन्दिर में प्रवेश कर ही रहे थे कि पीछे से किसी ने टेर लगाई 'रुक जाओ।' देखा पीछे कोई नहीं था । पुन अदर प्रवेश करने गए वापिस आवाज आई 'रुक जाओ पहले मेरी फरियाद सुन लो' खूब गौर से इधर-उधर नजर घुमाई, कोई नहीं दिखा पुन पाँव उठाये पुन आवाज आई 'अरे । खडे रहो भाई। मेरे प्रति हो रहे भयकर अन्याय को रोको'

हसा । तू झील

श्रावक हैरान था ।

जरा ध्यान से देखा कमर से झुक कर ताका ओह । यह तो वे ही जूते बोल रहे थे जिन्हे वह बाहर उतार आया था । श्रावक हक्का-बक्का रह गया - 'जूते बोल रहे थे? कमाल है खैर।'

बोलो भाई । तुम्हे काहे का अन्याय हो रहा है?

आप मुझे बाहर उतार देते है प्रभु के दरबार में लेकर नहीं जाते । और मेरे ही जातिभाई-ढोल-ढोलक-नगाडे-खजरी आदि जो चर्म से ही बने हुए है उन्हे आप अदर ले जाते है कितना घोर अन्याय। आप ही कहो हमारा क्या कसूर ?

क्षणभर श्रावक उलझन में फस गया । फिर उसने कहा → अच्छा चलो तुम्हे मैं परमात्मा के मदिर में ले चलता हूँ परन्तु शरत एक तुम पहिले द्वार पर खडे रह कर अदर झाक कर अपना निर्णय ले लेना सचमुच हमें अदर जाना हैं या नहीं?' सजोगवशात् उसी वक्त मन्दिर में सध्याकालीन आरती चल रही थी । अत ज्योंहि उन्होंने अपनी नजर डाली तुरत ही निर्णय ले लिया "ना रे ना हमें अदर आना नहीं है।"

"क्यों?"

"देखो न । हमारे ही जातिभाईयों को कितनी मार पड रही है । इन नगाडों पर लकडी से कितनी जोरदार चोट की जा रही है इस ढोलक पर हथेली से प्रहार किया जा रहा है और खजरी पर बेकसूर थपेटे पड रही है हमें तो बाबा ऐसा कुछ सहना नहीं है "

जूते सहन करने को तैयार नहीं थे अत उन्हे परमात्मा के दरबार में नहीं मिला ।

ससार और शासन

प्रभु के दरबार में प्रवेश करना है? टिकना है? टिक कर आगे बढना एक अटल-अडिग निश्चय करो जब, जहॉ, जिस किसी की भी ओर और जैसा भी सहन करने को आये उसे सहन करो बिल्कुल -व्याकुलता नहीं क्रोध नहीं प्रहार नहीं "उसकी दो कोडी भी कीमत है और मुझे तग करता है? मैं उसका क्यों सहन करुँ?" नहीं ऐसी प्रतिशोध की भावना मन में उठनी ही नहीं चाहिए और यदि उठती भी हो तो परमात्मा श्रमण *भगवान महावीर* को नजर में लाओ । प्रभु के बल के विषय मे *श्रीसूयगडाग सूत्र* में कहा गया है कि → इस सपूर्ण चौदह राजलोक को

उठाकर अलोक में फूटबोल की तरह फेंक दे, इतनी ताकत होती है परमात्मा में। तो भी समता की सरिता या समदर परमात्मा ने कैसे-कैसों का कितना-कितना कैसा कैसा सहन किया?

उन्हीं प्रभु के शासन में हमें अपने पॉव गडाये रखने है तो परमात्मा के द्वारा दिया गया सूत्र अपनाना ही पडेगा

"अणुसोयो ससारो पडिसोयो तस्स उत्तारो"

बस, सब कुछ हमारे मनमुताबिक ही अर्थात् अनुकूल चाहिए कोई भी प्रतिकूल नहीं जिससे कुछ भी सहना नहीं पडे, ऐसी मन स्थिति ही तो ससार है और उससे विपरीत ही तो मोक्ष। अत जो कुछ भी प्रतिकूल आये आने दो वेलकम उसका भावपूर्ण हॉ मानो जिया-रजाक बैड की रमझट के साथ स्वागत कर रहे हो पूरा स्वागत करो चूकि यही प्रतिकूलताओं को आलिगन करने की मन स्थिति ससारसमुद्र से पार उतारनेवाली है। अमोघ उपाय है। यही जिनशासन है।

सहन करना वैसा बडा भी भगीरथ कार्य क्योंकि विश्वविजय से भी बडा कार्य है आत्मविजय जो *अप्पाण जिणई सो परमप्पा।* फिर भी इसे सहज-सरल बनाया जा सकता है, जरूरत मात्र है सत्त्व-लगन-धैर्य और स्थैर्य की उसमें भी कभी हम व्याकुल होकर प्रहार कर बैठने का पाप से कहीं बोझिल न हो जाय इसलिए निम्नप्रकार की विचारधाराओं का सिलसिला मन में जगाना यह एक श्रेष्ठ उपाय है

"मै प्रहार करने बैठूँगा तो वह अपराध गिना जाएगा कर्मसत्ता की कोर्ट-अदालत का चूकि यह एक प्रकार की दखलगिरी है, उसके कार्यकलापो में जिसे वह कदापि सहन नहीं करती और तदर्थ वह कठोर में कठोर सजा फटकार सकती है" बस, यह सजा की बात दिमाग कौधती है और आदमी पाप से अटक सकता है उसके लिए मोक्षमार्ग बिल्कुल निष्कण्टक बन जाता है

कहा भी है ***'आयकदसी न करेइ पाव'*** जो आतक को-अपाय को देखता है, वह पाप नहीं करता बात भी ठीक है आतकवादियों की जहॉ बन्दुक-स्टनगन-रिवोल्वर आदि तनी हुई रहती है हेन्डग्रेनेडों की हरपल थर्रा देने वाली आवाजे सुनाई दे रही हो वैसे समाचार सच्चे या झूठे कैसे भी मिले तो भी आदमी वहॉ पॉव रखनेकी हिम्मत नहीं करता आतक-अपाय ऑखों के सामने घूमता है न?

वास्तविक शत्रु : कर्म

बीहड जगल घनी झाडियॉ केसरी सिह ।

जगल का सम्राट निर्भीक और निश्चिंत बैठा था कि यकायक

सर्र्र्र् एक तीर घुसा कमर में और जगल का वेताज बादशाह क्रुद्ध हो उठा गर्जना कर ठीक उसी दिशामें छलाग लगायी जिस ओरसे बाण आया था

यह है सिहदृष्टि बाण की परवाह न कर बाण मारनेवाले को पकडना

नीरव रात्रि शहर की झुग्गी झुपडपट्टि कुछ कुत्ते मिल कर अपना राग अलप रहे थे भौं भौं कुत्तों की पूछ जैसे सो वर्ष तक सीधी नली में डालने पर भी टेढी की टेढी ही रहती है वैसे ही सो वर्ष तक उनका मुह बाध कर रखो फिर खोलो पहला कर्णकटु सगीत सुनने को मिलेगा भौं क्योंकि कुत्ते को भौंकना बडा ही प्रिय लगता है परतु अफसोस। आदमी को वह सुनना प्रिय नहीं है ।

हाँ तो, कुत्ता भौका और धर्र्र्र् पत्थर की चोट किसी व्यक्ति ने की । दृश्य विचारणीय था । बडे-बडे चितकों को चिन्तन की नई दिशा सुझानेवाला यह दृश्य था कुत्ता उस पत्थर को अपने पॉव से पकडकर जवडों में चवा रहा था निकलता था जवडों से पर वह सोचता था → "हाश । मार ली वाजी जो पत्थर है उसका यह खून निकल रहा है" वह उसे आनद से चूसता था यह देख हसना या रोना कुछ समझ नहीं वैठती थी यह है श्वानवृत्ति।

सिंह भी पशु है और कुत्ता भी मगर एक है बुद्धिमान दूसरा है बुद्धू ।

पशुसृष्टि में इन दोनों प्राणियों की विलक्षणता सहज ही सतह पर उभर आती है । सिह विचक्षण है वह समझता है कि तीर का क्या गुनाह? गुनाह तो तीर फेंकनेवाले का है । तीर विचारा वेदना क्या देगा वह तो हाथा मात्र है वेदना देनेवाला कोई और ही है और वही है सजापात्र तीर को काटना या नाखून से मारना यह तो स्वय दु खी होने का राजमार्ग है । कुत्ते में वैसी विचक्षणता

नहीं पाई जाती है । अत वह हाथा को अपराधी मान बैठता है और स्वय हैरान होता है । तरस आती है उसकी मूर्खता पर ।

विचक्षण जीव कौन?

इस जीवसृष्टि में भी वही जीव विचक्षण है जो अपनी हैरानगति के मूल कारण को खोजे तिरस्कार करना हो तो उसका करे परतु जो बिचौलिया निमित्त-हाथा हो उसका नहीं । किसी ने गाली दी किसी ने मानभग किया किसी ने चोरी की या बलजबरन् आपकी चीज हथिया ली इत्यादि हरेक प्रकार के कष्ट-त्रास में त्रास-तकलीफ देनेवाला तो बिचारा मात्र हाथा ही बना है ***मूल त्रास देनेवाला तो कर्म ही है*** । वृक्ष को छेदने में काष्टदड तो मात्र हाथा है छेदनेवाली तो कुल्हाडी की वह तीक्ष्ण धार ही होती है

जो जीव विचक्षण बन कर इस मूल-कर्म की ओर अपनी लाल आँख करता है वह उस मूलकारण-कर्म को दूर कर त्रासरहित बन सकता है ।

परतु जो जीव मूढ बनकर श्वानवृत्ति को अपनाता है अर्थात् → "गालीगलौज करनेवाले व्यक्ति की ओर लाल आँख करता है उसीको उत्पीडक मानकर सामने गाली देना ईंट से ईंट बजाना यह सब उस कुत्ते की मारनेवाले पत्थर को मुह मे चबाने जैसी क्रिया है जिससे त्रास तो दूर नहीं होता है । मगर और भी मुसीबत की बला खडी हो जाती है । सामनेवाले व्यक्ति के प्रति द्वेष-सक्लेश आदि के कारण अनेक अन्य मानसिक त्रास भुगतना पडता है कायिक ताप-पीडा होती है सो तो नफे में । सिहवृत्तिवाला प्राणी इन सक्लेशादि बलाओं से दूर ही रहता है, अत मानसिक पीडा-त्रास आदि का शिकार भी नहीं बनता है ।

रामचंद्रजी ने आज्ञा दी । आज्ञाकित सेनाधिपति **कृतांतवदन** अपनी फर्ज बजाने के लिए महासती **सीताजी** के चरणों में पहुँचा । बहाना दिया तीर्थयात्रा का । महासती सीता गर्भवती थी । परतु तीर्थयात्रा की लालच और पतिदेव की आज्ञा । वह रथारूढ हुई । भीषण जगल आया । शार्दूल की गर्जनाए और पुच्छास्फालन शेरदिलों को भी थरथरा दे वैसे थे । हरिणशावक वन की भीषणता पर पटाक्षेप करने की व्यर्थ मेहनत कर रहे थे भयकर भुजङ्गम कुंडलियों में बैठकर वन की भयानकता की सहज याद दिला रहे थे । ऐसे भीषण वन में जिसका नाम था सिहनिनाद बब्बर शेरो की गर्जनाओं के प्रश्रय में सीताजी को अकेली-अटूली छोड आने का आदेश था रामचद्रजी का । कृतातवदन सारथि नीचे उतरा । वह बोल नहीं पा रहा था । गगा-यमुना का नीर आखों से बह रहा था । आखिर कहना पडा मगर

हसा । तू झील

रोना उसका थमता नहीं था । तब भी याद है न। सीताजी स्वस्थ थी ➛ "अरे भाई । तुम क्यों दु खी हो रहे हो? तुम थोडे ही मुझे इस जगल मे छोड रहे हो । तुम तो चिट्ठी के चाकर हो । इसमें तुम्हारा लेशमात्र भी दोष नही है । तुम्हे तो अपने स्वामी की आज्ञा बजानी ही चाहिए । और तुम्हारे स्वामी का भी इसमें क्या दोष? उन्हे लोगो पर राज्य करना है । अत लोगों को सतोष हो वैसा करना चाहिये । और लोगों का भी क्या दोष? मेरे पूर्वभव के कर्म ही कोई ऐसे होगे जो उदय में आये है" *Get the real culprit* सही गुनहगार को पकडने की यह चिन्तनधारा कितनी उत्तम है महासतीजीकी ।

यह तत्त्वज्ञता है

जीवन की प्रथम उषाकिरण के साथ जो तत्त्वज्ञान की लालिमा उसने प्राप्त की क्या वह इस पल धोखा दे सकती है? तत्त्वता उसके चेहरे पर अपनी सोलह कलाओं से खिल उठी । उसीके बूते उसने अपनी नजर गहराई में डूबो कर उसे तह तक पहुँचाई और मूल बात का पता लगाया अत विपदाओं को सामने पाकर भी वह विचलित नहीं हुई। स्वस्थ थी वह । सेनापति के ऊपर भी कोई गुस्सा या अप्रीति का भाव उभर नहीं रहा है उसके मन में । अत उसे भी वह आश्वासन दे रही थी । रामचद्रजी के ऊपर भी वह पूर्ववत् निश्चल प्रेम रख रही है अत रोष–आक्रोश या तिलमिलानेवाला तीखा व्यग्य या मार्मिकता से सनी क्रूर वाणी न निकाल कर शुभसदेश कहलाती है ☞ "स्वामिन् । लोगों के कथनोपकथन से मेरा आपने भले त्याग किया । मुझसे भी सवाई स्त्रियाँ आपको मिल सकेगी । मेरे त्याग से आपके आत्महित में बाधा पहुँचेगी या आत्मोन्नति रुक जायेगी ऐसा कोई नियम नहीं है । परतु पतिदेव । मेरी आपसे हाथ जोडकर .. विनती है । यह तो लोगों की माया है । कल उठ कर जैनधर्म की भी दा करने लगेंगे । तो जैसे लोगों के कहने से आपने मेरा त्याग किया वैसे ोगों के कहने से जैनधर्म का त्याग न करे अन्यथा आपका महान नुकसान ोगा । चूकि इससे सवाया तो क्या, परतु समकक्ष भी कोई अन्य धर्म इस दुनिया में नहीं मिलेगा अर्थात् इसके त्याग से आपका आत्महित अवश्यमेव अवरुद्ध हो जायेगा अत इतना आप इस दासी की ओर से याद रखना "

मूल को देखों

"यह कैसा न्याय? मात्र एक ही पक्ष की बात को सुनकर सजा सुनानी। मुझे भी पूछ लेते । मेरी भी बात सुन लेते । अरे। एक सामान्य इन्सान भी गर्भवती

स्त्री को नहीं छोडता अरे, छोड भी दे तो उसके पीहर में छोडता है भरजगल मे नही परतु आप तो बडे राजा रहे न। अत जो मन में आया सो तडफड कर सकते है।" ऐसा कोई उपालम्भ या तीखा व्यग्य नहीं कसा। उल्टा दिया शुभ सदेश । इस हद तक का सौजन्य और उच्च मनोभूमिका को सीताजी किस बल पर टिका सके? अन्याय की कल्पना से ही उक्ता जाने का अभ्यासी जीव इतना उत्तम सत्त्व कैसे प्रगट कर सकता होगा? किसके बल पर दुर्भाव और द्वेष से बच पाता होगा? मूल को देखनेवाले के लिये यह सब कुछ शक्य है ।

"मात्र सेनापति या रामचद्रजी ही नहीं ये लोग भी सिर्फ हाथा–माध्यम है दु ख देने मे मूल तो मेरे कर्म ही है"

इसी विचारधारा के बलपर द्वेष के सक्लेश से सीता बच पाई । जो मुझे अपराधी दिखाई दे रहा है वह तो बेचारा कर्मसत्ता की अदालत के आदेशों को पालन करानेवाला एक कर्मचारी मात्र है ।

भुट्टो ने एक कप काफी पीकर जेलर को कहा था Finish it इलेक्ट्रिक चेयर पर राख की ढेर में परिवर्त्तित हुआ उस पाकिस्तान के सरमुखत्यार के मन मे रोष था तो जिया पर न कि बटन दबानेवाले उस जेलर पर

अपराध करनेवाले नागरिक को कोर्ट जो भी सजा फरमाती है उसे जेल के जेलर, सिपाही आदि अपनी फर्ज मानकर बजाते है । कैदी को जेल में ठूसते है । सजा के अनुसार सख्त मजदूरी करवाते है । हटर के सो–पचास फटके लगाते है । यावत् फॉसी के तख्ते पर भी चढा देते है । इलेक्ट्रीक चेयर पर भी बिठा देते है । मगर उस वक्त वह कैदी यह नहीं सोचता कि–कमाल है। मैने इस सिपाहीका क्या बिगाडा, जो मुझे यह फटके मारते है? मै तो मार नहीं खाऊँगा । वह मुझे मारेगा, तो मैं भी उसे मारूँगा ।"

कैदी को सिपाही वेरी–शत्रु नहीं दिखता है। क्योंकि वह जानता है → यह तो कोर्ट का कर्मचारी । चिट्ठी का चाकर । कोर्ट ने उसे आज्ञा दी → इस कैदी को सख्त काम कराओ' तो वह काम करवाता है । इस कैदी को 50 फटके लगाओ ' तो वह हटर को हाथ में लेता है । इसमे मुझे इसके साथ क्या शत्रुता [illegible] ?

[illegible] पच के अहेवाल के अनुसार आरक्षणपर सही करनेवाले वी पी [illegible] को जितना डर है मौत का उतना लाठीचार्ज कर रहे उन मिलीट्रीमेनों को [illegible] है । जितना युवकों का आक्रोश उसे सहना पडता है उसका तिलमात्र भी

हसा । तू झील

अश्रुगेस या फायरींग कर रहे पुलिसमेनों को सहना नहीं पडता कारण हर एक व्यक्ति पुलिस को मात्र दण्डवाहक मानता है ।

उसी तरह अपने को कोई भी व्यक्ति परेशान करे कैसी भी पीडा पहुँचाये तो भी हमारे विचार इसी ढाचे में ढले हुए होने चाहिए । Catch the real one सही गुनहगार को पकडो । इस दुनिया के प्राणी चाहे चीता हो शेर हो साँप हो या अजगर या इन सब से खतरनाक इसान भी हो ये सभी कर्मसत्ता के पगारदार नोकर है । कर्मचारी है । अधिकारी है ।

कर्मसत्ता की कोर्ट मेरे लिए जैसी – जैसी सजा निश्चित करती है वैसी वैसी सजा ये जीव मुझे करते है ।

किसी अधिकारी (जीव) को कहा → "जा, तूँ इसे गाली दे क्योंकि यह सजा मैंने इसके लिए निर्धारित की है ।" इस आज्ञा को वह जीव गाली देकर बजाता है । किसी को कहा → "तू इसके यशको कलकित कर देने की सजा करना ।" तो वह जीव आकर मेरी इज्जत दो कोडी की कर देता है । किसी को आर्डर दिया → "जाओ, इसकी निदा कर आओ ।" तो वह जीव मेरी निन्दा करने लगता है ।

किसी को वह आलाहाईकमान हुकुम करती है → उस जीव पर चोरी का झूठा आरोप लगाओ" Order is Order वह जीव मेरे ऊपर चोरी का इल्जाम लगा जाता है । किसी को कहा > लकडी से प्रहार करो' तो वह लकडी उठा लाता है । इसी तरह धन की चोरी, काम का बिगडना, व्यापार में विश्वासघात, ईर्ष्या आदि जो भी परेशानियाँ आती है वह सब कुछ कर्मसत्ता की अदालत की ही सजा है । देनेवाला तो मात्र माध्यम है । एक नियम अपने दिल और की डायरी में लिखकर रख लो

"जिस सजा को कर्मसत्ता की अदालत नहीं फटकारती है ऐसी कोई भी इस दुनिया का समर्थ में समर्थ हो या चेम्पीयन कहलानेवाला हेवीवेइट बोक्सर भी हो, कोई भी हमें नहीं दे सकता है । उसकी सपूर्ण शक्ति कर्मसत्ता के ईशारे पर ही नाच सकती है ।"

अरे जान से खत्म करने की बात तो दूर, एक चाटा भी कोई लगा नहीं सकता । अर्थात् छोटी से छोटी हो या बडी से बडी कर्मसत्ता ने जो सजा फरमाई वह पत्थर की लकीर हो गयी हमें मिलेगी ही ।

इतना ही नहीं जिस सजा को कर्म ने फटकार दी उसे अन्यथा करने

की ताकत भी किसी में नहीं है। लाख भागने की कोशिश करो बचने के जीतोड उपाय करो मात्र निष्फलता ही हाथ लगेगी ।

भावि के भीतर क्या छिपा है?

'जनकपुत्री के कारण दशरथनदन के हाथों से रावण की मृत्यु होगी'- इस भविष्यवाणी को सुनकर भ्रातृप्रेम से क्रोधातुर बना हुआ विभीषण, जनक और दशरथ को मोत की नींद सुलाने के सकल्प से निकल पडा । त्रिखडाधिपति प्रतिवासुदेव रावण के पीठबलवाले विभीषण के प्रतिकार करने की ताकत दशरथ या जनक दोनों में से किसी में भी नहीं थी । उन दोनों की औकात ही क्या थी ? फिर भी इतिहास इस बात की साक्षि पूरता है कि विभीषण की शमशेर इन दोनो को मोत के घाट सुला नहीं सकी । कारण क्या? अरे । जब तक कर्मसत्ता उस सजा को नहीं फटकारती तब तक मजाल है किसी की । कि वह सजा दे दे ।

ग्रन्थों में ऐसे तो अढलक दृष्टात मिल जायेंगे । "फला-फलाना लडका मुझे मारनेवाला है या मेरे बाद मेरे राज्यसिहासन पर बैठनेवाला है" इस कटु सत्य को जानकर राजा जैसे राजा भी जिस बालक को मारने के कई दॉव-पेच खेलता है । फिर भी वह बालक जो एक पत्थर का भी प्रतीकार नहीं कर सकता, वह भी आबाद बच निकलता है ।

अरे । जिस व्यक्ति ने १००-२०० क्रूर हत्याएँ कर डाली हो, मानव को मारना जिसके लिए हाथ हिलाना मात्र हो । वैसे निर्दयी व्यक्ति-जल्लाद को सोंप दिया जाय उस लडके को और आर्डर भी दे दिया जाय कि इसकी हस्ती मिटा दो । परतु कर्मसत्ता की अदालत ने उस मासूम बच्चे को मोत की सजा फटकारी न हो तो मजाल है कि कोई उसका बाल बॉका कर सके । जल्लाद के दिल मे कभी नहीं आनेवाला दया का भाव आ जायेगा और भक्षक कहलानेवाला वह अपनी जान की भी परवाह न कर रक्षक बन जायेगा ।

और यदि ठीक इससे विपरीत, कर्मसत्ता ने यदि सजा फटकार दी हो तो रक्षक भी भक्षक बन जाते है । अपने निजी अगरक्षकों ने ही तो श्रीमती इन्दिरा गान्धी को आवासस्थान पर गोली से दागा न। जब कि राजीव गाधी पर राजघाट जैसे जाहिरस्थल पर हजारों आदमियों के बीच सात दिन से लुक-छिप कर रहे हुए आतकवादी ने ढेर सारी गोलियाँ छोडी, फिर भी उनका बाल बाका न हुआ न । क्योंकि राजीव गाँधी को वहाँ मारने की इच्छा आतकवादी को थी, कर्मसत्ता को नहीं ।

हसा । तू झील

पुन कह देता हूँ .

कर्म रूष्ट तो दुनिया रूष्ट कर्म तुष्ट तो दुनिया तुष्ट अर्थात् आपके कर्म यदि बॉके नहीं है तो इस दुनिया में किसी शहशाह की भी ताकत नहीं कि आपका कोई बाल भी बॉका कर सकें और यदि कर्म रूठे हुए है तो किसी की ताकत नहीं कि आपको उसकी मार से बचा सके रक्षण दे सके ।

कर्मसत्ता जेसे जैसे आर्डर छोडती है, वैसा ही वर्तन जीवरूपी वे अधिकारी करते हैं । अर्थात् कोर्ट की सजा के अनुसार जेलर कैदी को हटर से प्रहार करता है तब यदि कोई बछिया का ताऊ जैसा कैदी सामने हो जाय "अबे, तू मुझे मारता है ? चल, मैं भी तुझे मारूँगा।" इत्यादि कह कर सामने प्रहार करता हे तो वह जैसे अयोग्य और सजापात्र गिना जाता है और उसके इस अनुचित बर्ताव को देखकर कोर्ट उसी सजा को और भी कडक बनाती है बढाती है। ठीक उसी प्रकार

कर्मसत्ता की कोर्ट सजा फरमाती है । अन्यजीव रूपी एजेन्ट-जेलर को हुक्म करती है कि → फलॉ-फलॉ व्यक्ति को गाली देकर दण्डित करो । वह जीव अता है दण्ड देने के लिए यदि हम उसे कहे ☞ "अबे तू मुझे अपशब्द सुनाता है ? मैं भी तुम्हे सुनाऊँगा।" मानो यह कह कर हम उसे गाली देने के लिए ताल ठोंकते है तो कर्मसत्ता की अदालत हमारी इस बेअदबी से रूष्ट होकर हमारी सजा बढा देती है ।

इससे विपरीत, यदि कोई समझदार कैदी कोर्ट की सजा को चुपचाप सह लेता है सजा देनेवाले जेलर का सामना-प्रतीकार नहीं करता है तो उसे और समझदार कैदी माना जाता है । उसका यह सुदर व्यवहार प्रशसापात्र है । कभी-कभार कोर्ट वैसे कैदी की सजा घटा भी देती है अनेक अपराधो फटकारी गई अनेक सजाओं में से कितनी ही सजाऍ बिना भुगते भी Cut कर देती है ।

इसी तरह कर्मसत्ता की कोर्ट के आदेशानुसार जो जीव गालीगलोज आदि खाकर शाति से सजा भुगत लेता है उसके इस व्यवहार को अच्छा मानकर उसके अन्य अनेक अपराध की सजा माफ भी कर देती है अर्थात् दूसरे अनेक कर्मो को वह बिना भुगते ही रद कर देती है ।

एक कैदी की जो सहज समझशक्ति है, वह यदि साधक के मन में चमकने लगे तो भी बहुत कुछ आसान बन जाता है । युगों की प्रतीक्षा के बाद मन के

इस सरोवर में मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ्य भाव के रग-बिरगी कमल खिलने लगते है । करोडों प्रहारों को करनेवाले जेलर पर कैदी अगारे नहीं उगलता है क्योकि वह जानता है यह तो कोर्ट का एजेन्ट। Order to obey करनेवाले दो रूपये का नौकर । यह कोई मेरा शत्रु नहीं है ।

मूल और माध्यम

समाचार दु खद आये तो पोस्टमेन को गाली देने से क्या मतलब ? हम दु खी बन गए, इसका मतलब यह थोडे ही है कि हम पोस्टमेन को ही हमारा दुश्मन मान बैठे । टी वी में दिखा कि लक्ष्मण को रावण के शक्तिप्रहार ने मूर्च्छित कर दिया पागल आदमी टी वी को फोड देता है बुद्धिमान टी वी को कोसने की बजा रावण को कोसता है । टी वी तो सिर्फ एक पर्दा है माध्यम है वह न तो अपनी इच्छानुसार अच्छा बताता है न बुरा जो जैसा रिले होता है वो ही वह बता सकता है । भारतीय क्रिकेट टीम हार गई तो उसमें वो ही दृश्य प्रतिबिंबित होगा । रिलायन्स कप जीत गई तो उसमें दृश्य जीतने का आयेगा माध्यम को मात्र माध्यम ही मानो मूल नहीं । दु ख देनेवाला प्रत्येक इन्सान मात्र माध्यम है मूल नहीं । *मूल है कर्मसत्ता माध्यम है सचेतन अचेतन सृष्टि।*

अर्थात् अपमान करनेवाले ने कर्मसत्ता का हुक्म माना और मुझे तग किया उसमें मुझे उसे शत्रु नहीं मानना चाहिए या Tit for tat अपमान का बदला अपमान से लेने की हीन भावना पैदा नहीं होनी चाहिये । तो ही सजा और दु खो की अन्तहीन शृखलाओ से बचा जा सकता है । अन्यथा यह परपरा उत्तरोत्तर बढती ही जायेगी रूकने का नाम भी नहीं लेगी । जैसा कि अनादिकाल से हो ही रहा है ।

बाय ध वे

बाय ध वे , कोर्ट ने यदि जेलर को कहा हो → इस कैदी को रोज हटर की पचास मार लगानी खरोच आ जाय लहूलुहान हो जाय अनेक घाव पड जाय तो भी उसमें नमक छिडकना जिससे वह चीखता-चिल्लाता रहे । जेलर इसी तरह करता है । और कैदी को बेबस हो कर सब कुछ हर दिन सहना पडता है । अर्थात् कैदी को अनुकूल है या नहीं, सहने की इच्छा है या नहीं यह ज़रा भी नहीं देखा जाता । मगर कोर्ट का आर्डर क्या है ? इसी एक बात [illegible] दिया जाता है । उसी तरह कोई एकाध जीव हमें दिन-ब-दिन परेशान [illegible] छोटी-मोटी अनेक यातनाओं से पीडित करता हो दु ख देने में कोई

कोर–कसर नहीं रखता हो तो भी सब कुछ सह लेना प्रतीकार करने की इच्छा तक नहीं करनी चाहिए ।

कितना सहना ? उसकी कोई फिक्स Fix लीमिट नहीं है । जितना आए उतना सब कुछ सहन करो । हाय । इतना कितना सहन करना ? सहन करने की भी कोई हद होती है ? इसी प्रकार यदि बिलकुल प्रतीकार नहीं किया तो हमें वह नेस्तनाबुद कर देगा अब तक तो चू के चा तक नहीं किया Letgo कर दिया मगर अब तो बाबा हम से सहन नहीं होगा हद हो गई है । अपन कुछ भी नहीं करते है अत वह हमारे सिर पर चढता जा रहा है और भी उग्र बनता जा रहा है । समझता है कि मानो हममें दम नहीं प्रतीकार करने की ताकत ही नहीं । नहीं ऐसा कतई नहीं चलेगा । अब तो उसे उसकी नानी याद आ जाय वैसा करना पडेगा । आडे हाथ लेकर छठ्ठी का दूध याद दिलाना पडेगा । तो ही वह ठिकाने आयेगा । ऐसे कोई भी फिजूल विचार नहीं करने चाहिए और न ही कोई ऐसी ऐरी–गेरी प्रवत्ति ही करनी चाहिए ।

जब कभी एक ही व्यक्ति बारबार हमें सताता हो, "हम कुछ नहीं कर रहे है इसलिए वह निर्भय और गद्दार बन कर ज्यादा से ज्यादा परेशान कर रहा है अत अब तो उस पर प्रहार करके उसे शात करना ही पडेगा जिससे तँग करने का नाम भूल जाय" ऐसा लगने लगे, तब **अग्निशर्मा** को याद करो । वह प्रहार करने गया, तो उसकी कैसी भयकर दुर्दशा हुई, उसे याद कर प्रहार करने की तमन्ना और निर्णय को कैसल कर जमीनदोस्त कर दो तो साधनामार्ग में प्रगति है अन्यथा अधोगति

अग्निशर्मा ने क्या किया ?

बेचारा **अग्निशर्मा** । बचपन में राजकुमार **गुणसेन** उसके बेडौल शरीर को कर गाँव के बीच चौराहे पर उसकी मजाक उडाता । रोज–रोज की इस –हैरानियों से तग आकर दु खगर्भित वैराग्य से उसने तापसी दीक्षा स्वीकार ली । "पूर्वभव में मैंने तप नहीं किया और बेधडक पापों को कर अपार पापराशि सचित की है इसलिए इन विडबनाओं का मैं शिकार बन रहा हूँ" इन विचारों से उसने मासक्षमण के पारने मासक्षमण चालू कर दिए । महीने–महीने के इस तपस्वी तापस की कीर्ति दिगन्त व्याप गई । दीर्घायु के उस काल में उस तापस ने लाखों मासक्षमण की अपार समृद्धि इकट्ठी कर ली ।

तपस्वी तापस की कीर्ति राजा बने हुए गुणसेन के कानों में पडी । वह

अत्यत आकृष्ट हुआ । अत वदनार्थ आश्रम में पहुँचा । एक दूसरे को पहिचान नहीं सके । राजा ने हाथ जोडकर पूछा ☞ 'तपस्वीराज । इस भीषण तपश्चर्या का प्रेरक कौन ? परतु अग्निशर्मा बदल चुका था । उसकी विचारधारा जो पहिले थी वह अब नहीं थी 'राजकुमार गुणसेन ने मेरी मजाक उडायी थी' ऐसा कहने को वह तैयार नहीं था कहने को तो क्या मानने को भी तैयार नहीं था । इसलिए उसने कहा ☞ "राजन् । उपकारी प्रेरक लोग अनेक प्रकार की प्रेरणा करते है । एक प्रकार की प्रेरणा मुझे भी मिली "

राजा ने जब बहुत आग्रह किया तब उन्होंने कहा —➘—

"राजन । आप इतना पूछ रहे है इसलिए मैं कह रहा हूँ मेरा उपकारी प्रेरक राजकुमार **गुणसेन** है ।"

राजा को अपना बचपन याद हो आया और उसके साथ ही अपनी ओछी हरकतें मजाक करने की बुरी आदत और विचित्र तौर तरीकों की हारमाला आँखों के सामने तैरने लगी । "ओह । यह तो वही अग्निशर्मा है" राजा ने पहिचान लिया साथ ही सावन-भादों का नीर भी बेरोक-टोक दो नैनकटोरों से बहने लगा । राजा भयकर पश्चाताप के स्वरों में बोला

"महात्मन् । ऐसी घोरातिघोर यातनाओ को देनेवाला मैं गुणसेन नहीं, महाअगुणसेन हूँ " गुणसेन को पहिचान कर भी अग्निशर्मा ने कैसा सुदर उत्तर दिया था ➛ *"ना भैया ना तुम अगुणसेन कैसे हो सकते हो ? तुम तो हकीकत में महागुणसेन ही हो क्योंकि तुम्हारे ही प्रताप से मुझे इतना विकृष्ट तप करने की प्रेरणा मिली । और मुझे तप का यह अपार वैभव प्राप्त हुआ ।"*

अग्निशर्मा की मनोभूमिका उस ऊँचाई को छू चुकी थी कि वह तप को वैभव मानने लगा था । अत उसमें निमित्त बननेवाले को अपकारी नहीं, उपकारी मान रहा था । कैसी भव्य विचारधाराओं में अग्निशर्मा गरकाव रहता । उसकी यह बाह्य और अभ्यतर साधना अत्यत उन्नत कक्षा की लगी इसलिए गुणसेन भी काफी प्रभावित और आकृष्ट हुआ । "मासक्षमण का पारणा मेरे यहाँ ही होना चाहिए" ऐसी आग्रहपूर्ण विनती गुणसेन राजा ने की । अग्निशर्मा ने उसका स्वीकार किया और नियत दिन पर पहुँच गया ।

परतु भवितव्यता कोई दूसरी ही थी । राजा के मस्तक में असह्य शूल की वेदना उठी थी । पूरा राजकुल व्याकुल था । चिन्ता का भूत इस कद्र सब के सिर पर सवार था कि अग्निशर्मा क्या कोई भी आ जाय तो उसको देखने

हसा । तू झील

की–ताकने की फुरसत तक किसी को नहीं थी । अग्निशर्मा आया खडा रहा और वापिस अपना–सा मुह लेकर चला गया । चूकि उसका कडा नियम था "पारणे के लिए एक ही घर पर जाना वहॉ पारणा हो गया तो ठीक, वर्ना लौट आना पारणा कहीं दूसरी जगह नहीं करना "

हाय और होय

उसके शरीर पर पारणे की स्फूर्ति अकित नहीं थी । शक्तिसचार की पतली सी किरण भी उसके मुखमडल पर प्रस्फुटित नहीं होती थी । कुलपति सहित अन्य सभी तापस समझ गए कि पारणा हुआ नहीं है । सभी को दु ख हुआ । कितने ही तापसों का खून भी खौल उठा था ➛ "यह लो । जोरशोर से आग्रह–विनती की थी और इतना भी ध्यान नहीं रखा ?" परतु अग्निशर्मा की विचारसरणि में श्रेष्ठता की झलक थी । उसके मन मे पारणा न हुआ इस बात का लेशमात्र भी रज–अफसोस–दर्द नहीं था और न ही गुणसेनके प्रति ऑखोमें कोप की रगत । उसके दिल में रह–रह कर जो स्वर उठता था वह 'हाय' नहीं 'होय'=होता है=चलता है= It happens का शान्तिदायक सायकोलोजिकल सूत्र था ।

"हाय । हाय । गुणसेन ने मेरा पारणा चुका दिया । अब पारणा किए बिना ही एक माहके दूसरे उपवास=मासक्षमण करना पडेगा ।" ऐसा सक्लेश नहीं था। चलो होता है । बेचारा ससारी आदमी है । कई आधि–व्याधि–उपाधियो से घिरा रहता है । अत इच्छा होते हुए भी वह मेरा ध्यान नहीं भी रख सके होता है" ऐसी उन्नत मनोभूमिका पर आरूढ था अग्निशर्मा । अतएव स्वस्थ होने के बाद जब गुणसेन को पता चला तो उसे अपार ग्लानि हुई कुलपति के आश्वासन भी वह आश्वस्त नहीं हुआ तब अग्निशर्मा ने भी उसे अपना दु ख छोड समझाया । मानो कुछ हुआ ही नहीं है ऐसे सहज ढग से बातें कर, नहीं कराने का रज गुणसेन के दिल में न रह जाय और वह सपूर्ण स्वस्थ इसलिए अगला पारणा उसी के घर करने का पुन वादा किया ।

कहते है ➛ कुदरत–कर्म की लीला अगम्य है । इन्सान पूरब को जाना है तो वह पश्चिम को जाता है । *वो ही होता है जो मज़ूरे खुदा होता* । ✤ हिटलर को लकडहारा बनना था, बन गया जर्मन का तानाशाह, ✤ नेपोलियन चित्रकार बनना था बन गया फ्रास का सम्राट, ✧ गोल्डस्मिथ को बनना था सर्जन, परतु बन गया महाकवि कर्म की काली कलूटी करतब और करतूते कोई भॉप नहीं सकता उसकी माया ही न्यारी है ।

कर्म-कुदरत को गवारा नहीं था कि गुणसेन के यहाँ अग्निशर्मा अन्न-जल ग्रहण करे। राजपुत्र के जन्म के खुशहाली में राजा और राजपरिवार पारणे की बात भूल गया। अग्निशर्मा लौट गया। लगातार तीसरा मासक्षमण चालू हो गया तप के साथ समता भी उसकी बढने लगी। वह गुणसेन को कसूरवार मानता नहीं था या निहारता नहीं था।

गुणसेन का कोई कसूर नहीं देखा इसलिए वह उसके प्रति द्वेष-तिरस्कार-वेरभाव आदि सक्लेशों के पातक से बच गया। इतना ही नहीं, समता की सरिताओं में अठखेलियाँ करता हुआ अत्युन्नत भूमिका को भी प्राप्त हो गया। गुणसेन को जब वापिस अपनी भूल का एहसास हुआ मानों उस के दिल-दिमाग में भयकर भूचाल हुआ। "ओह। मै अपने आनद-प्रमोद में एक आला योगी को दिया हुआ वचन भूल गया। धिक्कार है मुझे।" वह उठा और रथ में बैठकर आनन-फानन तापसाश्रम पहुँचा। यद्यपि उसे लग रहा था → "मुह बताने के लायक मैं नहीं रहा अब क्या किया जाय ?" मगर पश्चात्ताप की आग दिल में धधक रही थी और वाष्पीभूत होकर नैन के मार्ग से निकल रही थी। पश्चात्ताप की व्यथा स्पष्ट थी। परतु आश्रम में मानो उस पर अमृत की बारिश हुई। मात्र कुलपति ने ही नहीं स्वय अग्निशर्मा ने भी अत्यत मधुर वाणी से उसे समझाया।

"इस बात को भूल जाओ मन में रजमात्र भी दु ख मत सँजोना तुम बिलकुल निश्चित बन जाओ भला, पुत्रजन्म हुआ उसमें पारणे का दिन किसी को याद नहीं रहे उसमें तेरा भी क्या कसूर?" मगर गुणसेन का दिल कराह रहा था। उसे अमनचैन नहीं हो रही थी। अपना कसूर उसे भयकर और अक्षम्य लगता था। रह-रह कर सर्पदश-सी सिहरन उसके अग-प्रत्यग में व्याप जाती थी। यह दर्द न रहे इस हेतुसे अग्निशर्मा ने प्रेमपूतवाणीसे कहा ☞ "राजन्। हम तो तापस है। तप से काफी अभ्यस्त हो चुके है। माह के उपवास तो चुटकी बजाते पूरे हो जायेगे। अत दिल को व्यर्थ के सताप से पीडित न करो इस बार भी, मै कहता हूँ, पारणा आपके वहाँ करूँगा बस ?"

तापस के दिल मे 'पारणा चुका दिया' वैसी कोई बात नहीं है। तदुपरात मुझ अधम के प्रति द्वेष-कोप भी नहीं है। और बीती सो बीती अब भी मुझे लाभ मिलेगा पारणे का "इससे गुणसेन हुलस गया *"बीती ताही बिसारी दे आगे [illegible]"* इस पारने के वक्त बिलकुल गाफिल न रहूँ" ऐसा सोचकर गुणसेन दिन गिन रहा था। उसकी प्रसन्नता अपार थी।

परतु कर्मसत्ता को पारणा जब गुणसेन के हाथों मजूर ही नहीं था तो हो कैसे सकता था ? अग्निशर्मा आया और देखा तो

राजदरबार में भयकर कागारोल था। शत्रुसैन्य के यकायक आक्रमण से सब हक्के बक्के रह गये थे । शत्रु को मुह की खानी पडे इसलिए खुद राजा सेना की तैयारी में जुट गया था । अपार सागर की तरह विशाल सेना आगेकूच कर रही थी । शत्रु को धर दबोचना, उनकी प्रतिज्ञा थी । अग्निशर्मा के सामने भी कोई देखने को तैयार नहीं था

मानो युगों की प्रतीक्षा के बाद जिस समय सरोवर पर पारणे के शुभ अवसर का कमल खिल उठा था उसी समय मन कहीं ओर जा टिका और इधर कमल मुरझा गया ।

अग्निशर्मा वापिस लौटा । पारणा नहीं हुआ । परतु अब अग्निशर्मा बदल चुका था उसके मानसपटल–स्क्रीन पर पूर्वावस्था की विडबनाओं के चित्र फूलस्पीड से उभरने लगे । पूरी वीडीयो केसेट दीख पडी । अब वह मानने लगा कि गुणसेन मेरा शत्रु है अपराधी है । *"यह गुणसेन मेरा निष्कारण वैरी है मैंने इसका कुछ बिगाडा नहीं है फिर भी यह पहिले भी मेरी क्रूर मजाक करता था और आज भी वही कर रहा है।"*

अन्य व्यक्ति की भूल देखी और उस पर द्वेषादि के सक्लेशो की हारमाला सीरीयल चालू हुई ही समझो । वो ऐसा करता है ? तो मैं भी क्यों न करूँ ? ऐसे विचारों के साथ वैरभाव खडा होगा ही । यह तो बेल है सहारा दो इतनी ही देरी है फिर तो दे धिनाधिन पूरे छत पर छा जाती है ।

अग्निशर्मा के दिल में बदले की आग भडक उठी । वैर की तीव्र गाँठ । और उसने नियाणा किया *"वह राजा है और मै तापस हूँ । अत वह से मुझे निर्बल समझता है ? यह तापस क्या करेगा ऐसा सोचता है ? भी यह दृढ सकल्प करता हूँ यदि मेरे इस विराट और विशाल तपसमृद्धि ...ल हो तो मैं भवोभव इसका वैरी बनूँ इसको मारनेवाला बनूँ ।"* कुलपति ... तापसों ने उसे बहुत समझाया । परतु अग्निशर्मा ने उस वैर की गाँठ को ... जोरदार कसी ।

और कर्मसत्ता की अदालत ने अग्निशर्मा को कठघरे में खडा कर दिया। एव अदल इसाफ सुना दिया अग्निशर्मा । कान खोलकर सुन ले गुणसेन भी मेरा जेलर है । उसने पारणा नहीं कराया वह भी मेरी आज्ञा थी । गुणसेन मेरी

चिट्ठी का चाकर है । जैसे मैने कहा, वैसा उसने किया । और तुम दो कौडी के आदमी होकर मेरे इसाफ को चुनौती देता है ? फर्ज बजाने वाले आदमी-जेलर के सामने होता है ? उसका प्रतीकार करने की तैयारी करता है ? मेरे न्याय मे अडगा डालकर इसाफ और कानून को अपने हाथो मे लेने की मूर्खता करता है ? तो ले तू भी लेता जा अनतकाल तक ससार मे भटकते रहना दुर्गतियो मे सडना नरक की भयकर यातनाओं को बरदास्त करना ।"

मानसपट पर उभरने दो

एक तटस्थ की दृष्टि से हम देखते है तो अग्निशर्मा को गुणसेन की ओर से जितना और जो-जो कष्ट मिला था, वह सब सत्य था । हैरानियों की पराकाष्ठा थी । मै तो कहता हूँ जब भी आप पर किसी अन्य व्यक्ति की ओर से पीडा मिले जो भी मिले जैसी भी मिले और जितनी भी मिले उस वक्त अग्निशर्मा की पीडा सामने लाए । मुझे लगता है उस वक्त आपको अपनी सारी तकलीफें मेरू के सामने राई-सी लगेगी । अर्थात् इतना भयकर कष्ट आया सब कुछ हसते मुह सहन किया हर बार मुखकमल पर प्रसन्नता की आभा ही उभरने दी इतना होने पर भी, अगर बाद मे अग्निशर्मा ने प्रहार करने का निर्णय किया तो उसकी ऐसी हालत हुई फिर भी उस निर्णय को कर्मसत्ता स्वकार्य मे अडगा डालने का अपराध के रूप मे ही देखकर या नियुक्त जेलर के प्रति कैदी की गैरवर्त्तणूकॅ के रूप मे ही देखकर सजा और भी भीषण और लबी कर देती है, तो, इतना त्रास न होने पर भी एव इतना सहन किया न होने पर भी हमने किये हुए प्रहार के निर्णय को और प्रयास को कर्मसत्ता माफ कर देगी ऐसी मान्यता भ्रान्त ही रहती है । सहन करने की कैसी भी हद आ गई हो, अगर कोई प्रहार करने बैठता है, कानून की बागडोर अपने हाथों मे ले लेता है तो कर्मसत्ता उसे कभी माफ नहीं करती ।

अत जब कभी किसी व्यक्तिविशेष की ओर से आनेवाली पीडा और जुल्मो से बाज आ गए हो और उसे दडित करने की तमन्ना मन मे उठने लगे कि तुरत मानसपटल पर

- अग्निशर्मा को लाओ
- खधकसूरि को लाओ
- कुरूट-उत्कुरूट मुनि को लाओ

बस, इतना करते ही दिल मे उठ रहे अधड खामोश हो जायेंगे ।

हसा । तू झील

अरे । तीन–तीन बार पारना चुका कर बेशुमार पीडा पहुँचाने वाला गुणसेन भी आखिर था तो कर्मसत्ता की अदालत का अरदली ही न? चिट्ठी का चाकर। जैसा उसे कहा जाय, वैसा करनेवाला । अपनी फर्ज अदा करनेवाला एक मामुली–सा अधिकारी ।

परतु इस बात का जनाजा निकालकर अमन चाहने वाला अग्निशर्मा कर्मसत्ता के हाथों मारा गया बस, इतनी सी बात को दिल में कुतरा दीजिए और मन में आकार ले रही प्रहार की भावना को गेसचेम्बर की सजा भुगतने दीजिए तो ही शाति मिलेगी इस भव में और शाति मिलेगी परभव में । हित चाहनेवाले आत्मसाधक को अन्य सँकरा–मार्ग छोडकर इसी राजपथ पर आ जाना चाहिए

क्योंकि... दीस इज द नेशनल हाई वे टु मोक्ष ।

कोर्ट की सजा का अमल हो, तदर्थ नियुक्त किए जेलर आदि अधिकारियों को जो कैदी परेशान करने लगे कोर्ट उस कैदी की सजा बढा देती है यह साधारण नियम है । अमेरीका की अदालत हो या रशिया की चीन की हो या जापान की हर जगह अदालत का यह नियम होता है तो फिर कर्मसत्ता की कोर्ट में ऐसा नियम क्यो नहीं होगा ? अवश्य होगा अत वह अपनी सजा ऐसे आक्रामक अपराधियों के प्रति कठोर बनाती ही है ।

और, इस दुनिया की कोर्टों में तो कभी–कभार (?) झूठी गवाही के बलबूते निर्दोष आदमी दोषित सिद्ध हो जाता है और दोषी आदमी बिल्कुल निर्दोष छूट जाता है ।

जोधपुर में मेमसा'ब आये । उनकी रत्नजडित अँगूठी खो गई । हाहाकार गया । मेमसाब खफा हो गई । पुलीसतत्र के नाक का सवाल था । जमीन ...मान एक कर दिया छप्पा–छप्पा छान डाला मगर अँगूठी का नामोनिशाँ ... था । इस्पेक्टर बुद्धिमान था । उसने डुप्लीकेट अगूठी बनवा दी । जेल ... एक कैदी को पकडा । मार–मार कर उससे कबुल करवाया "अगूठी मैंने चोरी थी" मरता क्या नहीं करता साफ निर्दोष था दोषित सिद्ध हो गया । दीपावली के दिन साफ–सफाई में इकबोटल औंधी की तो असली अगूठी सामने पडी । इस्पेक्टर के बदन में तो काटो तो भी खून नहीं मिले

दोषित भी निर्दोष सिद्ध हो जाते है इस दुनिया में → पेरामसन बरान्टर के पास एक मर्डर केस आया । उसने कोर्ट के सामने यह सिद्ध कर बताया

कि अभियुक्त पर जो खून का आरोप लगाया गया हे वह निराधार है । अभियुक्त ने गोली मारी कबूल है मगर गोली से मरा यह प्रूफ बिना की बात हे । मरनेवाला व्यक्ति हार्ट-एटेक का पेशेन्ट था । दो एटेक आ चुके थे । 'तीसरा एटेक जानलेवा होगा' यह आगाही स्वय डाक्टर ने की थी । पिस्तौल को देख कर भय से तीसरा एटेक आया और आदमी मर गया । गोली सिर्फ मुर्दे मे लगी सजा अपराधानुसार होनी चाहिए

अ परफेक्ट कम्प्युटर

कर्मसत्ता अ परफेक्ट कम्प्युटर की कोर्ट में शेरलोक होम्स या पेरीमेसन राम जेठमलानी या कोई भी बुद्धि का बेताज बादशाह, किसी की भी नहीं चलती। न निर्दोष पकडा जाता है और न ही दोषित उसके विकराल पजे से बच पाता हे । कर्मसत्ता की कोर्ट परफेक्ट कप्युटराइज्ड है । एपल या आई-बी-एम सभी के सभी कम्प्युटर-सुपरकम्प्युटर अनपरफेक्ट हे । आज दिन तक कर्म के कम्प्युटर में किसी भी तरह का घपला नहीं हुआ है । अनतानत काल बीत चुका है ।

मात्र कसम खाने के लिए भी कोई एकाध भी दृष्टात मिल जाय ? असभव न आज दिन तक ऐसा एक भी किस्सा हुआ ही है जिसमें निर्दोष पिटा गया और सदोष छूट गया

अपनी इसी सपूर्ण क्षतिविहीन और पक्च्योल कार्यप्रणालिका पर कर्मसत्ता की कोर्ट को मगरूरी है अत एव मानो वह सपूर्ण जीवसृष्टि को कहती है *"मैने तुझे गाली-गलौज, थप्पड-वप्पड खाने की जो भी सजा फटकारी तो तू स्वय समझ ले कि पूर्वभव में तूनें वैसी सजा के योग्य पापकर्म किया है । चूकि तुमने गुनाह नहीं किया होता तो मैं सजा देती ही नहीं"* ।

कर्मसत्ता की इसी मगरूरी का नशा मानो उसे धुऑ पुऑ बना देती है जब वो देखती है कि → मेरी सजा को चुपचाप सहने की बजा, तू दो टके का आदमी आनाकानी करता है ? उससे भागने की व्यर्थ कोशिशें करता है ? मेरे नियुक्त अरदलियों को परेशान करता है ? तग करता है ? उनकी अवमानना करता है ? सामने से प्रहार करता है ? तो ले और भी मजा चख तेरी सजा दुगुनी-तिगुनी किए देती हूँ ।

अनाडी कोर्ट जिदाबाद

कर्मसत्ता की कोर्ट अनाडी कोर्ट जेसी है । अनाडी कोर्ट के न्यायासन पर नमटार ओनेरेबल जज महाशय वैठते है । पुलिस आती है अपराधी को ले

हसा । तू झील

कर तडफड मुकद्दमा दायर हो जाता है और

जज	नाम ?
अपराधी	गोपीचद सेठ ।
जज	अपराध ?
पुलिस	'नो पार्किंग' बोर्ड के नीचे कायनेटिक होंडा खडा किया ।
जज	गोपीचद सेठ । अपराध के बदले १०रु दड भर दो
अपराधी	परतु मैंने
जज	बीस रूपये भर दो
अपराधी	सा'ब मैंने गुनाह नहीं किया
जज	सौ रुपये भर दो

अनाडी कोर्ट में तर्क का कोई स्थान नहीं होता । गुनाह किया या नहीं, उसे सिद्ध करने की झझट वहाँ मोल नहीं ली जाती । अपनी सफाई पेश करते जाओ दड बढता जाएगा । अत ऐसी कोर्ट में कभी भी जाना पडे तो बुद्धिमानी इसी में है कि जितना दड फटकारा गया हो चुपचाप जेब में हाथ डालकर नोट गिनकर पैसे-दड भर दो यही हितावह है ।

इसी तरह कर्मसत्ता की कोर्ट जो भी और जितनी भी सजा फरमाती है सिरपाँव कर लो । जल्दी छूट जाओगे

मैंने इसका कुछ नहीं बिगाडा इसने मुझे हैरान-परेशान कर दिया था मैंने इसके लिए क्या-क्या नहीं किया इसके पीछे जीवन को बरबाद कर डाला मैंने इसके ऊपर कैसे-कैसे उपकार किया और यह मुझे ऐसा ईनाम देता है नहीं मेरे से यह कैसे सहा जायेगा " बस, ऐसी थोडी सी भी फरियाद करने जवाल में फस कर नई बला सिर मोल ली समझो यह अनाडी कोर्ट धन सजा बढाती ही जायेगी । मरुभूति को पशुयोनि की सजा फटकार न ।

क्रोध का प्रारभ होता है मूर्खता से, और अत होता है पश्चाताप से....

अदर्शनीय चीज, अन्य की भूल

कक्षा में हरदिन देरी से आनेवाले विद्यार्थी के घर पर क्लासटीचर की चिट्ठी आई । पिता ने पुत्र को घुडकी दी क्यों रे । हर दिन क्लास में लेट पहुँचता है ? "नहीं पप्पा । मैं कभी भी लेट नहीं पहुँचता हूँ" तो क्या, तुम्हारे टीचर जो लिखते है कि हर दिन बेल पड़ने के पाच मिनट बाद तू पहुँचता है यह रेमार्क गलत है ? "पप्पा, इसमे मेरा कोई कसूर नहीं है ।" "तो किसका ।" "प्यून का । क्योंकि वह हर दिन मैं क्लास में पहुँचूँ, उससे पाच मिनट पूर्व ही बेल बजा देता है ।" पुत्र ने गम्भीरतापूर्वक अपनी सफाई पेश की ।

एक मनोविश्लेषण Psycho Analysis

इस दुनिया के लगभग तमाम प्राणियों की एक विचारसृष्टि खासतौर पर की जा सकती है

भूल करते रहना और स्वीकार नहीं करना
अपराध दूसरों पर ढोलना और स्वय का बचाव करना

जीवों का यही सामान्य स्वभाव बहुत खतरनाक है । क्योंकि जब एक व्यक्ति किसी अन्यव्यक्ति को अपराधी मानता है तब वह कोशिश यह करता है कि सामने वाला व्यक्ति भूल को स्वीकार करे । इस प्रक्रिया को आजमाने जाते है और मैत्री का महल ढह जाता है वैरभाव के बीज पड जाते है ।

अत जैसे गतप्रकरणों में मैत्रीभावना को अखडित रखने के लिए विविध प्रायोगिक विचारधाराओं का सूत्रपात किया गया था कि → "सभी जीवों के साथ हमारा भूत-भविष्य और वर्त्तमान तीनों काल में मैत्री सबन्ध है बीच में अल्पकाल के लिए कदाचित् शत्रुता का व्यवहार दीख भी जाए तो भी उसे शत्रु नहीं मानना जिगरजान दोस्त भी नाटक में थोडे समय के लिए जानी दुश्मन की एन्टींग करते है "

"सभी जीव मेरी ही पार्टी के है और कर्मसत्ता हम सब का कोमन मुख्य दुश्मन है उसे हराने के लिए हमें अपने आपसी झगडों को भुलाना ही पडेगा

हसा । तू झील

जिससे एकजुट होकर उसके नाकों दम ला सकें"

कर्मसत्ता Divide and rule की गदी राजनीतिक चाल चल रही है जीवों में आपसी मनमुटावों को खडा कर एकता के टुकडे कर शासन करने की उसकी नीति है । मैं यदि किसी को शत्रु मानता हूँ तो इसका मतलब यह हुआ कि → मैं कर्मसत्ता के लिए अनुकूल भूमिका खडी कर रहा हूँ जो मेरे लिए कतई हितावह नहीं है"।

"कर्मसत्ता, यह तो कुदरत की सस्थापित कोर्ट है । तग करने वाले व्यक्ति को यदि मैं प्रहार करने बैठूँगा इसका अर्थ यह हुआ कि मैंने कर्मसत्ता की दडनीति में हस्तक्षेप किया । यह भी एक ऐसा गभीर गुनाह है, जिसकी सजा कर्मसत्ता फटकारे बिना नहीं रहेगी "

"मुझे गाली देनेवाला शत्रु नहीं है वह तो बेचारा कर्मसत्ता कोर्ट का जेलर है । कर्मसत्ता जिस सजा को फटकारती है उसे अमल करानेवाला अधिकारी मात्र है यदि मैं सामने हो कर प्रहार करुँगा, तो मेरी सजा दुगुनी-तिगुनी और सख्त कर दी जाएगी और यदि चुप्पी साधकर जो आए, जितना आए सहता जाऊँगा तो हो सकता है मेरे अन्य अपराध माफ भी कर दे या सजा की कटौती भी कर दे"

इस प्रकार की विचारधाराओं के साथ मैत्रीभावना को अखडित और पुष्ट करने वाली एक और महत्वपूर्ण बात है–

"कैसा भी प्रसग या कष्ट क्यो न आए, अन्य को अपराधी रुप से नहीं देखना ।

यह बात यद्यपि बडी ही कठिन है, मगर इम्पोसिबल नहीं । जन्मघूटी से .न जिस चर्या को जीवन के साथ दूध-पानी की तरह एकमेव कर डाला है .; चर्या को त्यागना, बडा ही कठिन है ।

"गिरेर्दाहो दृश्यो न च पदतलेऽग्निनिकर ।"

सस्कृत का यह सुभाषित है। 'पहाड जल रहा है' यह जल्दी दिखता है, नहीं कि अपने पॉव के नीचे जल रही आग । छालनी बाई को सूई बाई पर चमकने वाला छेद जिस आसानी से दिखता उतनी ही आसानी से उसे अपनी छाती में पडे अनगिनत छेद नहीं दिखते है ।

अर्थात् अनादिकाल से जीव का यह सामान्यस्वभाव हो चुका है कि स्वय का हिमालय सा दोष-अवगुण नहीं दीख पडता है, और सामने वाला व्यक्ति की

एक राई-सी छोटी भूल-दोष-अवगुण पहाड-सा दृष्टिगोचर होता है इसी को कहते है राई को पहाड और तिल को ताड करना ।। स्वय की भूलों का निरीक्षण करना हो तब आखों के आगे बेन्डेड क्लोथ बध जाता है और अन्य की भूलोंको देखनेके लिए मानो माईक्रोस्कोप हाथ आ जाता है

इससे पूर्व कहा जा चुका है → "अवर अनादिनी चाल नित-नित तजिये जी " अपनी भूल दिखती नहीं है और दूसरों की दिखे बिना रहती नहीं यह अनादि की चाल है। अत इसे छोडनी ही पडेगी यदि आत्महित करना हो तो।

अन्य की भूल देखनी यह मानो अपने लिए अत्यधिक साहजिक हो गया है इसमें तो कोई दो राय नहीं ।

एक कथा प्रसिद्ध है । एक नि स्पृह सन्यासी के पास एक युवक आया और सेवा करने लगा । सन्यासी कुछ भी बोलते नहीं है, वे अपनी साधना में मस्त है । परछाई की भाति साथ में रहते हुए उसे ज्ञात हुआ कि बाबाजी के पास एक ऐसी जादूई लकडी है जिसे एकी टस ताकने पर व्यक्ति मनोभाव-परिणामो को साक्षात् देख सकता है। उसने मनोमन निर्णय कर लिया कि हर हालत में यह जादूई लकडी हथियानी ।

महीने बीत गए । स्वय कुछ भी नहीं बोले फिर भी युवक सेवा करता रहा, यह देख बाबाजी प्रसन्न हो उठे → "बोल वत्स। तुझे क्या चाहिए ?"

युवक ने अपना दिल खोल दिया → "बाबाजी । मुझे तो आपकी वो जादूई लकडी चाहिए ।"

सन्यासी बोले → मुझे देने में कोई हिचकिचाहट नहीं है परतु उस लकडी से तेरा हित नहीं होगा बल्कि अहित होगा अत हितकर कोई दूसरी चीज माग ले परतु नादान युवक बाबाजी की बात के मर्म को नहीं पकड पाया और जिद्द पर उतर आया → 'अपना वचनपालन करना हो, तो मुझे वो दीजिए वर्ना जेसी आपकी मर्जी' अन्त में स्ववचनपालन करने के लिए बाबाजी ने जादूई लकडी चेले बने युवक को सौप दी । और स्वय फिर से समाधि में लीन बन गया । शिष्य ने तुरत ही उस लकडी का उपयोग संन्यासी के दिल को देखने मे किया

और वह चौक उठा 'अरे । बावाजी के तो दिल के एक कोणे में धीरे-धीरे क्रोध की अग्नि धधक रही थी दूसरे कोणे में मान का एक छोटा-सा पहाड दीख पड़ता था बीच-बीच में माया की कुछ आटी-घुटियॉ भरी पडी थी कहीं

हसा । तू

लोभ की खाई तो कहीं छोटे-बडे मनोरथों के खड्डे नजर आ रहे थे।" शिष्य के मन में हुआ बाप रे। गुरुजी के दिल में तो अभी भी क्रोधादि कषाय भडक रहे है इन से मेरा क्या उद्धार होगा ? अत वह कुछ भी कहे बिना रवाना हो गया। गगाजी के तट पर आकर रहने लगा। लोगों के मनोभावों को कह-कह कर धन बटोरने लगा लोगो को भक्त बनाने लगा। देखते ही देखते उसने एक बडा सा आश्रम खडा कर दिया। बहुत समय व्यतीत हो गया। एक बार वे ही सन्यासी यात्रा करते हुए वहाँ आए। लोगों के मुह से जादूई लकडी की बात सुनकर उस आश्रम में आये। दोनों ने एक दूसरे को पहिचान लिया। गुरुने पूछा "क्या करते हों ?" शिष्य ने अथ से इति तक कह सुनाया। तब गुरुने कहा "सभी के दिल तू देखता हैं कभी अपना भी देखा है ? अपने दिल में रहे हुए दोषों का प्रत्यक्ष निरीक्षण किया है या नहीं ?" शिष्य ने कहा → "नहीं यह प्रयोग तो मैंने नहीं किया" "अच्छा" गुरुजी ने कहा "तो अब कर"

शिष्य ने अपने दिलको देखने के लिए जादूई लकडी का उपयोग किया।

"क्रोधाग्नि की असख्य भीषण ज्वालाएँ आकाश को छू रही थी मानपर्वत तो इतना उत्तुग था कि उसका शिखर ही दीख नहीं पडता था माया की भयकर बास की झाडियॉ परस्पर उलझी हुई थी। लोभसमुद्र किल्लोल कर रहा था

यह सब देख शिष्य गुरुचरणों मे पडा और पश्चात्तापसे गिडगिडाने लगा 'गुरुदेव। मुझे माफ करों मैंने अपने ही दोष नहीं देखे"

जैसे को तैसा की घातकता

यह एक वास्तविकता है। मनुष्य अपने विद्यमान दोषों को देख नही सकता और अन्य के अविद्यमान दोषों की भी कल्पना कर सकता है। अपने में रही रजकण को आख नहीं देख सकती है, परतु दूसरों की आख में पडी हुई खूब आसानी से देख पाती है।

यह अनादि की चाल है और इसे अब हमें छोडनी है चूँकि दूसरों की -दोष देखने में अधिकतर सक्लेश ही हैं। अन्य का दोष देखा और मन में उसके प्रति दुर्भाव-तिरस्कार उत्पन्न हुआ ही समझो 'मुझे यह परेशान करता है" ऐसी बुद्धि आई अर्थात् क्रोध को आने के लिए नेशनल हाइवे तैयार हो गया। तब "वह ऐसा करता है, तो मै कहाँ कमजोर हूँ? मैं भी उसे बता दूँगा? इस प्रकार बदला लेने की भावना जगने लगेगी और वारवार उसके होते वैर की गाठ बध जाती हैं"

राजगृही का भीखारी

तीन दिन तक वह सपूर्ण नगर में भटका दर-दर की ठोकरे खाई परतु लाभान्तराय का ऐसा तीव्र उदय हुआ कि ऐसी समृद्ध और धर्मश्रद्धासपन्न नगरी में भी उसे खाने को रोटी का एक टूकडा भी नही मिला इतने में कोई महोत्सव आया। नगरवासी लोग नगरी के बाहर गए और पर्वत की तलेटी में स्थित उद्यान में इकट्ठे होकर महोत्सव मनाने लगे । 'ऐसे अवसर पर मुझे अवश्य मिलेगा ' इस आशय और आशा को दिल में सजोए वह भी बाहर गया। मगर अफसोस। कुछ भी नहीं मिला अतराय जोरदार था । अत उसे नागरिकों पर भयकर गुस्सा आया "ये सभी मिष्ठान्न और फरसाण उडाते है और मुझे रोटी का एक टूकडा भी नहीं देते ठीक है। मैं भी इन्हे बता दूगा ॥" और वह पर्वत पर चढा । क्रोध से वह काप रहा था । उसकी आखे आग बरसा रही थी । पहाड पर उसने एक विराट शिला देखी और वह सोचने लगा -ः-

"इस शिला को धक्का मार कर नीचे लुढका दूँ जिससे नगरवासियों का काम तमाम हो जाय एक नहीं हजारो लोगो का कचूमर निकाल जाय"

क्रोधान्ध वह भिखारी यह भी सोच नही पा रहा था कि "ऐसी विराट शिला को जब मैं टस से मस भी नहीं कर पाऊँगा तो, लुढकाऊँगा कैसे?" वह तो गया शिला के पीछे और जोर से धक्का मारने लगा ।

तीन दिन का भूखा तो था ही बेलेन्स खोया, पाव फिसला और शिला के बदले वह स्वय लुढक गया खाई में । लोगो का कचूमर निकालने का रौद्रध्यान तो करता ही था अत मात्र खाई में ही नहीं सातवीं नरक तक लुढक गया ।

"लोग कृपण है दुष्ट है स्वय सब कुछ खाते है, मुझे एक टूकडा भी नही देते कितने निर्दय और निष्कृप है लोग ।" इत्यादि रूप से लोगो की भूल उस भिखारी ने देखी परिणाम। लोगो पर भयकर द्वेष-दुर्भाव और क्रोध अत मे सातवी नरक के रौरव दु ख । यह आया परिणाम ॥

ठीक इससे विपरीत परिणाम आया ढढणऋषि को ।

अपराधी कोई और नहीं-ढढणऋषि

यदुकुल के राजकुमार ढढणकुमार ने त्रिलोकपति श्री नेमिनाथ भगवान की दिव्यदेशना से प्रतिबोध पाकर दीक्षा ली। एकदा अभिग्रह किया कि 'मुझे अपनी ही लब्धि से जो आहार मिले, उसी को आरोगना।' धर्मश्रद्धा से भरपूर और धनधान्य से समृद्ध द्वारिका नगरी मे भिक्षा-गोचरी हेतु घूमते है एक दिन हुआ स्वलब्धि

हसा । तू झील

से भिक्षा नहीं मिली । दूसरा दिन उगा और अस्त हो गया भिक्षा नहीं मिली तीसरा दिन चौथा दिन यावत् छ महीने बीत गए स्वलब्धि से भिक्षा का एक दाना भी नही मिला । उपवास के उपर उपवास हो रहे थे छ महीने के उपवास हो गये

फिर भी

नगरवासियों पर दोषारोपण करना नहीं मुनि सोचते है → "अपराध–दोष मेरा ही है लोग तो काफी भाविक है श्रद्धालु है दानरुचिवाले है परतु मेरा ही तीव्रलाभान्तराय कर्म का उदय है, अत मुझे भिक्षा नहीं मिल रही है ।"

दूसरों की भूल न देखकर अपनी ही भूल देखी किसी अन्य को अपराधी ठहराने की बजाय अपने को अपराधी ठहराया । परिणाम ? हॉ परिणाम बहुत ही सुदर आया

द्वेष–असमाधि–सक्लेश आदि से तो बचे ही साथ ही ऐसी सुदर स्वस्थता और परम समाधि में चढे कि क्षपकश्रेणि पर आरूढ होकर, मात्र लाभातराय या अतरायकर्म का ही नहीं चारो घाति कर्मो का सपूर्ण क्षयकर केवललक्ष्मीको पाए।

अन्य को गुनहगार देखने में इतना भयकर नुकसान है और स्वय को गुनहगार मानने में ऐसा प्रचड लाभ है Profit है इस तथ्य को जानकर प्रज्ञावान् को योग्य रस्ता अपनाना चाहिए। यह बात मात्र आध्यात्मिक दृष्टिकोण से नहीं भौतिक दृष्टिकोण से भी है ।

भौतिक दृष्टिकोण

जो व्यक्ति अन्य की भूल देखता है उसे शारीरिक, मानसिक, कौटुम्बिक, आर्थिक, सामाजिक आदि कई हानियॉ उठानी पडती है । कारण यह है कि जब किसी अन्य की भूल देखता है तब, नुकसान का आघात तीव्र लगता है। जब अपनी भूल देखता है तब समान नुकसान में भी आघात इतना तीव्र । लगता है। बल्कि बहुत कम ही लगता है। ऐसा क्यों होता है? तो इसका मनोवैज्ञानिक (Psychological) विश्लेषण है । जब इन्सान सामने वाले का दोष देखता है तब सामान्यत उसकी विचारसरणी ऐसी मन में उठती है "बेवकुफ है कुछ ध्यान ही नहीं रखता। बिल्कुल बेदरकार है उसे तो डाटना ही पडेगा अन्यथा आज तो यह भूल की कल दूसरी करेगा परसो तीसरी ऐसे तो नुकसानों की परपरा ही खडी हो जायेगी एक वार बरावर कान पकडा दिये हो तो दूसरी बार ध्यान से काम करेगा "

इसी जगह यदि स्वय की भूल देखी जाय तो अपने आप विचारसरणी बदल जाती है "हो जाता है मनुष्यमात्र भूल के पात्र भूल तो हो जाती है। वैसे भी सभी चीजें विनश्वर है टूटती है फूटती है मन कहॉ-कहाँ बिगाडने जाय ? ड्रायवर के हाथो से एक्सीडन्ट हो जाता है उस वक्त और स्वय जब ड्रायविग कर रहा हो और एक्सीडन्ट हो जाय उस वक्त विचारों मे फर्क पडता है या नहीं ?

आपकी गैरहाजरी में भागीदार ने कोई सौदा किया और लाख रुपयों का घाटा—Loss हो गया तब कैसे विचार आते है? → "इस प्रकार कोई व्यापार होता है क्या ? मुझे पूछना था न ? मैं नही था, तो ४ दिन ठहर जाते तो कौनसा बडा नुकशान हो जाता ? इस प्रकार के नुकशानको किसी भी हालतमे चलाया नहीं जा सकता। यह तो कल उठकर दीवाला फूकना पडेगा न?" और इसी जगह यदि भागीदार की अनुपस्थिति में स्वय के हाथों कोई बडी नुकशानी हो गई हो तो कैसे चीकनेचुपडे विचार आते है → भई। यह तो धधा है। कभी नुकशानी भी उठानी पडती है। उस पर रोया थोडा जाता है रोया रोने की बजाय दूसरे सौदे पर ध्यान दिया जाय तो Loss रिकवर भी हो जाती है "

इस प्रकार अन्य की भूल देखने में मन नुकशान के अनुकूल विचारों में लीन बन जाता है अत नुकशान बहुत भारी लगता है। जबकि स्वय की भूल देखने में मन नुकशान के प्रतिकूल विचारों में लयलीन बन जाता है अत नुकशानका आघात हल्का सा रहता है।

यह तो स्पष्ट है, मन जिसमें जुड जाता है उसकी ताकत कई गुना बढ जाती है। नुकशान ज्यादा लगता है अत आघात की मात्रा भी बढ जाती है। और उसीसे भयकर आवेश पैदा हो जाता है आवेश के आने से विवेकचक्षु बद हो जाते है। अर्थात् "एक नुकशान तो हुआ ही है, उसकी भरपाई कोई आवेश करने से होने वाली नही है। चलो अब, किसी नये नुकशान में नही उतरना पडे उसका पूरा ध्यान रखूँ " इस महत्त्वपूर्णबात को वह भूल जाता है। आवेश झगडा खडा करता है। जिससे न केवल शारीरिक ही, बल्कि मानसिक और आर्थिक आदि की कई मुसीबते भी मनुष्य के सिर आ पडती है।

मनुष्य का हृदय

कहते है कि मनुष्य के शरीर में रहा हुआ हृदय का वजन करीब २००-३०० ग्राम ही होता है। परतु अपने में से ७-८ किलो खून निकालकर शरीर के प्रत्येक

भागो में उसे घुमाकर पुन सिर्फ दो ही मिनट में शुद्ध करने के लिए अपने में खिच लेता है । शरीरका छोटा सा कद्रूप और महत्त्वपूर्ण यह अवयव २४ घटो में इतना काम कर श्रम उठाता है कि यदि इसी पावर को किसी १000 किलो भारी पत्थर को ऊपर चढाने के लिए उपयुक्त किया जाए तो वह आसानी से १२४ फूट तक ऊँचा पहुँच जाएगा ।

एक हृष्टपुष्ट इसान सख्त मजदूरी के पीछे सारे दिन जितनी शक्ति काम करता है उसका तृतीयाश भाग विश्व का सबसे श्रेष्ठ यह इन्जिन खर्चता है। यह हृदय यदि अपनी समग्र ताकत लगा कर ऊँचा चढने लगे तो सिर्फ एक ही घटे में २0,000 फूट तक ऊँचा पहुँच सकता है । अर्थात् आबू पर्वत की ऊँचाई से करीबन पाचगुनी ऊँचाई ।

जन्म से लगाकर मृत्युपर्यंत यह काम करता रहता है । आप चाहे सो जाएँगे वह नही सोएगा आप चलते है उठते-बैठते है खाते है पीते है जाते है रोते है धोते है यावत् कुछ भी करते है या कुछ भी नही करते है उसका काम Day & Night चालू ही है । नही तो वह केज्युअल लीव लेता या नहीं लेता वह सीक लीव । नहीं भूखहडताल करता या नही वह पेन डाउन स्ट्राइक ऊपर उतरता । किसी भी प्रकारकी छुट्टी या हडताल बिना, अपनी खुशी से शरीर का छोटासा नाजुक यह अवयव इतना काम करता है । परतु जब आदमी क्रोध करता है । आवेश करता है तब हृदय की धडकनें बढ़ जाती है यह सूचित करता है → हृदय की दुर्दशा । आखिर यह क्या है? उस बेचारे वफादारनौकर पर जोर-जुल्म ही न ।

आवेश से सिर्फ हृदय को ही नुकशान पहुँचता है, ऐसा नहीं है । खून भी ़ लगता है । सातों धातुओं में एक प्रकार की ऊष्मा पैदा हो जाती है । विषमता आती है । शरीर में कम्पन होती है। इससे शरीर में एक प्रकार ज ॅ पैदा होता है ।

मुन्ने की मौत

एक शहर में यह घटना घटी ऐसा सुनने-पढने में आया है । दो पडोसिनों के बीच का मामला था । पानी भरने के लिए गई और दोनों भीड गई । बात बढ गई । एक दूसरे के बालों को नोंचने से लगाकर कपडे फाडने तक की नौबत आ गई । क्रोध से दोनों धमधमा उठी थी । अन्य किराएदार बीच में पडे और बड़ी मुश्किली से ज्यों-त्यों एक दूसरे से अलग किया । आवेश में और

आवेश में एक औरत एलफेल बकवास करती अपने घर में प्रविष्ट हुई । दूधमुहा मुन्ना रो रहा था । उसे भूख लगी हुई थी । उसे उठाकर वह स्तन्यपान कराने लगी ।

क्रोध तो अभी-भी उसके चेहरे पर अपनी रगत दिखा रहा था । तीव्र गुस्से में बकवास का दौरा भी चल ही रहा था । मुन्ने को स्तन्यपान कराकर सुलाया और वह सो गया चिरनिद्रा में बस, हमेशा-हमेशा के लिये ।

मुन्ने का नीला शरीर और ब्लडरिपोर्ट से डॉक्टरो ने निदान किया किं बच्चे की मौत जहर से हुई । "ज्यादा खोजबीन से नतीजा यह हाथ आया कि → क्रोध से माँ के स्तन में रहा हुआ अमृततुल्य दूध जहर बन गया था, जो उस मासुम मुन्ने की मौत के लिये पर्याप्त था ।

मनोवैज्ञानिक **डेलोन्गीस** ने अपने अभ्यास से पता लगाया है कि → व्यक्ति जब कभी क्रोधादि आवेशों से उत्तेजित हो जाता है उस वक्त तनिक या सख्त सिरदर्द, सर्दी-जुकाम फ्लू आदि रोगों के आक्रमण की शक्यता कई गुना बढ जाती है । पक्षघात और हार्टएटैक जैसे रोगों के भीषण हुमले आ सकते हैं ।

इस प्रकार शारीरिक-कौटुम्बिक नुकशानों की तरह आर्थिक आदि हानियाँ भी उठानी पडती है ।

अत आवेश को रोकना चाहिये । एतदर्थ-कैसा भी प्रसग क्यों न आए व्यक्ति को अपना सतुलन नहीं खोना चाहिए । सामने वाले की भूल न देख कर, अपनी ही भूल देखनी चाहिए । सामने वाले की आपने भूल देखी नहीं कि आप में क्रोध का उबाल आया नहीं और अपनी भूल देखी नहीं कि स्वस्थता आई नहीं ।

स्वस्थता का गुर है-अपनी भूल देखना ।
अस्वस्थता का गुर है-अन्य की भूल देखना ।।

ग्रन्थोमें अहीर-अहीरिन के दो युगल की बात आती है

प्रथम युगल

गाँव में मवेशियों को पालन-पोषणे का धधा । उनके दूध में से घी बनाते थे । और जब बहुत इकट्ठा हो जाता तब मटकों में भर कर बैलगाडियॉ लाद देते और सभी अहीर-युगल उन्हे शहर में बेच आते। एक बार शहर में मेला भरा गया अहीर युगलो के साथ यह युगल भी घी बेचने के लिये शहर में आया । बैलगाडी खडी की । अहीर नीचे उतरा अहीरिन मटके देने लगी ध डा डडडडम। घी से भरा हुआ मटका बीच में ही छुट गया जमीन से टकराकर फूट गया ।

हसा । तू झील

अहीर आगबबूला हो कर बरस पडा ☞ "अकल कहाँ किराए दे आई? मैंने उसे सम्हाला ही नहीं और तुमने यकायक मटका छोड क्यों दिया ?

अहीरिन कहाँ चूप बैठने वाली थी ☞ "भूल अपनी और डॉट मुझे सुनाते है ? किसी और ध्यान में थे और सम्हालकर मटका पकडा नहीं और भूल मेरी निकालते है कमाल है ?

फिर तो आरोपबाजी का तमाशा-बखेडा खडा हो गया

"तुम रूपवती स्त्रियों को देखने मे अपनी आखे इधर-ऊधर भटका रहे थे सो ध्यान से तुमने मटका पकडा नहीं " अहीरिन ने सीधा चरित्र पर प्रहार किया ।

"और तूँ तुने तो अपनी ऑखें सुदर युवको को देखने में तरबोल कर रखी थी इसीलिए तो मेरे पकडनेसे पहले मटका छोड दिया ।"

झगडा चलता रहा । गालीगलौज चलती रही । परस्पर पूरी ताकत लगाकर लडते रहे । एक-दूसरे को दोषित ठहराने की मूर्खता से बाज नहीं आते थे । शाम होने आई । अधेरा होने लगा और दोनो चौंक उठे कुछ सावधान हुए और देखा मटके का घी जो लुढक गया था उसे श्वानकुमारों ने मिलकर सफाचट कर डाला था दूसरे अहीर तो कभी के निकल पडे थे जिससे अधेरा होते-होते अपने गॉव पहुँचा जा सके ।

बाजार बद हो चुका था । लोगों की चहलकदमी भी कम हो गई थी । इक्के-दुक्के लोग ही पथ पर नजर आते थे । दोनों घबडाए । झटपट सब कुछ समेट लिया । जितना घी बेचा था उसके पैसे और बचे हुए घी के मटकों को लेकर गॉव की और जाने के लिए चल पडे । परतु अब तो काफी रात जम थी और वे थे अकेले । रास्ते में चोर मिले । पैसों लूट लिए और सारा सारा घी दबोच लिया । गनीमत थी कि उन्हे जिन्दा छोड दिया दोनो खाली घर लौटे ।

दूसरा युगल

दूसरा सब कुछ पहिले जैसा ही हुआ। मटका फुटा कि तुरत अहीरिन दोष अपने सिर मढ लिया "अरेरे पतिदेव । मेरी बडी भूल हो गई आप उसे सम्हल कर पकडे इससे पूर्व ही मैंने मटका छोड दिया थोडी सी मेरी असावधानी और यह नुकसानी हो गई"

अत अहीर ने भी उन्ही सिक्कों में जवाब दिया → "अहह । भूल तो मेरी थी, मुले की मॉ । तुमने तो ठीक ही पकडाया था मैने ही उसे ठीक ढग मे

नही पकडा" न झगडा हुआ न टटा . दोनों ने परस्पर अपराधी घोषित करने की वजा अपने आप को अपराधी घोषित किया स्वय की ही भूल निकाली ।

अत न कोई सक्लेश न कोई मानका प्रश्न, न कोई माथापच्ची स्वस्थ होकर अहीरिन नीचे उतरी उपर उपर से घी भर लिया बचा-खुचा सारा घी बेचकर दोनों आनद से किल्लोल करते हुए लौट आए अपने गॉव ।

कैसा भी प्रसग क्यो न आए. बस अपनी भूल देख लो काम निपट जायेगा समाधि और स्वस्थता आए बिना रहेगी नही । भयकर बेचैनी होने लगे सामनेवाले व्यक्ति को क्या से क्या कर डालूँ का मन हो रहा हो, कदाचित् कुछ कर सके ऐसा न हो फिर भी तीखा में तीखा व्यग्य कसता हुआ उपालम्भ मुह से निकल पडे, ऐसी विषम परिस्थितियों मे भी अपनी भूल देखनेवाला अपूर्व समाधि और स्वस्थता का धनी बन सकता है। बिलकुल शात रह सकता है । सामनेवाला अपराधी इसान भी सद्भाव-अहोभाववाला बनकर गद्‌गद् बन जाय ऐसे मीठे वचन बोल सकता है

गर्भवती सीता

गर्भवती अवस्था में **सीता** को यात्रा का बहाना बताकर रामचद्रजी की आज्ञा से कृतान्तवदन सारथी सिहनिनाद नामक भीषण जगल में ले आया है । वह उसे अकेली-असहाय छोडने जा रहा है । परतु साहस जुटा नहीं पा रहा है । ऐसी विषम और सकटपूर्ण परिस्थितियों में भी सीताजी कैसी स्वस्थ थी । रामचद्रजी को सदेश भी कैसा भव्य और यादगार भेजा है । सदियों तक उसका यह सदेश भारतभूमि में गूजता रहेगा भारतवासियों के दिल में अपना सर्वोच्च स्थान बनाया रहेगा तदनतर अयोध्या में जब पुन प्रवेश कराना था उस वक्त सतीत्व की परीक्षारूप अग्निदिव्य हुआ उसमें सो टच सोने की तरह सीताजी खरी उतरी। सपूर्ण शुद्ध जाहिर हुई लोग "जगदम्बा महासती ।" आदि शब्दों से उसका जयजयकार कर रहे है रामचद्रजी शरमिदे बन कर माफी माग रहे है, उस वक्त भी सीताजी के मुह से कैसे सुन्दर उद्‌गार निकले ।

न कोई "मात्र एक पक्ष की ही बात सुनकर मुझे भीषण जगल में छोड दी । मेरी भी बात तो सुननी थी न ।" इत्यादि उपालभ या न कोई "और फिर भी मेरी बातो से यदि विश्वास नहीं आता तो उस वक्त भी अग्नि-परीक्षा करने की मेरी कहॉ मना थी ? बाकी ऐसे भीषण जगल में जहाँ प्रतिपल मौत सिर पर मडरा रही थी तब भी मै जीवित रही क्षेमकुशल रह सकी और ऐसे पराक्रमी

हसा । तू झील

पुत्रों को तैयार किया यह सब क्या मेरे सतीत्व का प्रभाव नहीं था जो यह दिव्य करना पडा?" इत्यादि व्यग्य-कटाक्ष। ऊपर से रामचद्रजी माफी मागने केलिए जब पावों में पडने लगे तब उन्हे रोकती हुई महासती सीता बोली ☞ "स्वामिनाथ! यह आप क्या कर रहे है ? इसमें आपका या प्रजाजनो का तनिकमात्र भी अपराध नहीं है अपराध मेरे पूर्वभव के कर्मो का है पूर्वकृत दुष्कृतों का है । यह तो उपकार आपका हुआ कि आपके प्रभाव से परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई । आपको मैने अपने दिल में बसाया कैद कर रखा इसीलिए मुझे इस भीषण आग ने जला कर खाक नहीं किया । आपके बदले यदि मैंने किसी दूसरे व्यक्ति को दिल में रखा होता तो यह आग रहम नही खाती । मुझे जला कर खाक कर डालती तब आपको सीता नहीं सीता की खाक हाथ में आती ।"

कैसे भव्य है सती के ये वचन । कैसी धीरता गभीरता और स्वस्थता। थोडा कुछ सुना देने की भी आतुरता नहीं । यह सब किसके बूते? बचपन में उसने तत्त्वज्ञान और कर्मथियोरी का सुदर और सुचारू रूप से अध्ययन किया था उसीके बलबूते वह ऐसी विकट परिस्थितियों में भी रिलेक्स हो सकी

"मेरे कर्म यदि वक्र नहीं हो तो इन्द्र की भी कोई ताकत नहीं कि मेरा बाल भी बाका कर सके "

और

"मेरे कर्म यदि वक्र है तो मॉ-बाप क्या इन्द्र की भी ताकत नहीं कि मुझे बचा सकें

❖ फ्रास का सेनाधिपति जनरल दगोल को एकत्रीस बार मारने का प्रयास परतु वह बच गया

✱ केनेडी ने पूर्ण बन्दोबस्त कर रखा था फिर भी उसका मर्डर हुआ

✱ श्रीमती इन्दिरा गाधी को उन्हीं के अगरक्षको ने खत्म किया।

✱ आन्ध्र के बडे होमियोपेथ डा जयसुरिया की डायाबिटीस से मौत हुई।

✿ उसी प्रकार डा साराभाई कापडिया की भी मौत हुई।

✱ भारत के केन्सर स्पेशियालिस्ट डा बोर्जिस की मौत केन्सर से हुई।

✤ बम्बई के हार्टस्पेशियालिस्ट डा भणसाली की मौत हार्ट ट्रबल से हुई।

✱ प्रचड पुरुषार्थ को करते हुए भी भारत का विभाजन महात्मा गान्धी रोक नही पाए

✧ एक आदमी पूर्ण सावधानी के साथ फुटपाथ ऊपर चल रहा है सायकल

आती है उससे एक्सीडेन्ट कर उसे मौत की नींद सुला देती है ।

+ एक आदमी मारुती में बैठकर सान्ताक्रुज एयरपोर्ट जा रहा था । फ्लाइट की टिकीट जेब मे थी। मारुती का टायर बर्स्ट हो गया आदमी फ्लाइट के टाइम पहुँच नहीं पाया और उधर Waiting list में उस की टिकीट एक आदमी को मिल जाती है । प्लेन उडता है और थोडी ही देर में उसके क्रेश होने के समाचार चारों ओर फैलने लगते है । मारुती का टायर बर्स्ट हुआ और अपने आप उसका बचाव हो गया ।

नतीजा यह है कि यदि दुष्ट कर्म बधा हुआ है तो उसका दु ख विपाक भुगतना ही पडेगा लाख बचने के उपाय करे बच नहीं सकते । और यदि दुष्कर्म बधा हुआ नहीं है तो किसी मायके लाल की ताकत नहीं कि आपको दु ख दे सके ।

अर्थात् छोटे-बडे किसी भी अनिष्ट में उसके मूल में अपनी ही भूल रही हुई है ऐसा निश्चित रूप से मानना जरुरी है। हमने ही पूर्व भव में कोई ऐसा दुष्कृत किया हुआ है जिसके पापकर्मोदय से हमें गाली सुननी पडती है। और यदि दुष्कृत द्वारा पूर्वभव में कर्म न बाधा होता तो कोई चाहे लाख मेहनत क्यों न करे आपका कोई-कुछ बिगाडने वाला नहीं है ।

बाल अकबर

एक बार हुमायु घोडे पर सवार होकर भाग रहा था । कपडे में लपेट कर बाल अकबर पीठ पर बधा हुआ था । दुश्मन का सेनाधिपति पीछा कर रहा था । अतर कुछ कम हुआ और उसने भयकर तीरवर्षा की । अपने सुरक्षित किले मे पहुँचने लिए हुमायु ने घोडे की लगाम खेंची । पवनवेग से उडता हुआ घोडा जैसे-तैसे सुरक्षित किले में पहुँचा । काफी घायल हो चुके थे दोनों घोडा और घुडसवार । हुमायु के हाथ पर और पीठ पर भी कोई-कोई बाण लगे थे । हुमायुने सर्वप्रथम पीठ पर बधी उस गठडी को खोली । वह आश्चर्यचकित था । बाल अकबर को एक खरोच भी नही आई थी ।

"मेरे कर्म यदि टेढे न हो तो मेरा कोई भी अनिष्ट नहीं कर सकता है अर्थात् मुझे पसद न आए ऐसा बर्त्ताव अन्य कोई भी करता है उसमें भी मुख्य कारण मेरे पूर्वकृत कर्म ही है" ऐसा निर्णय जिस व्यक्ति ने कर लिया हो, वह कैसी भी परिस्थिति क्यों न आए शत्रुता को मोल नहीं लेगा। मैत्रीभाव को वह एक असानी से टिकाऊ बना सकता है ।

हसा । तू झील

महासती अजनासुंदरी

पति **पवनंजय** ने शादी की बस, उसी दिन से उन्होंने अजनाका परित्याग कर दिया। बाईस-बाईस साल तक उन्होंने उसका मुह तक नहीं देखा। युद्धपयाण के वक्त महासती अजना मगलकामना व्यक्त करने आई तो उसने उसका भयकर अपमान किया। इतना होते हुए भी अजनासुदरी के दिल में पवनजय के प्रति तनिक भी रोष की मात्रा नहीं थी। पतिदेव के प्रति अहोभाव और श्रद्धा वैसी ही अकबद थी। "वह मुझे कैसा भयकर सताप दे रहा है" ऐसा विचार भी उसके मनमस्तिष्क में नहीं उठता था। चूकि वह अपनी अपार पीडा-व्यथा-वेदना का कारण पवनजय को नहीं मानती थी अपि तु अपने ही कर्मो की वक्रता देखती थी। मैंने ही पूर्व भवमें ऐसी कोई गलती की है, जिसकी सजा मुझे भुगतनी पड रही है, ऐसा निर्णय उसके दिलमें दृढ था।

जिसने सर्व प्रथम भूल की, वह गुन्हगार। चाहे वह अत्यत छोटी भी क्यों न हो ?

वर्ग में एक विद्यार्थी शात बेठा हुआ था। दुसरा एक तुफानी लडका आया और उसने निष्कारण ही उसको दो थप्पड लगा दी। झुँझला कर शात विद्यार्थीने गुस्सेमें उसे चार लगाइ, अब गुन्हेगार कौन ? जिसने प्रथम दो थप्पड लगाइ वह गुन्हगार कहलाता है और सजापात्र बनता है। "अरे! मैंने तो दो लगाई, उसने चार क्यो लगाई ?" ऐसी दलीलबाजी उसे बेगुनाह साबित नहीं कर सकती। अजनासुदरी के मन-मस्तिकमें यह बात बराबर प्रतिष्ठित रही होगी, तभी तो भयकर त्रास और सितम गुजारनेवाले पवनजय के प्रति उसके दिल में दुर्भावनाकी एक रत्ती भी स्थान न पा सकी।

बस, यह बात जिसके दिलमें अकित हो गई, उस व्यक्तिका नौकर कदाचित् किसी प्राणप्रिय बहुमूल्य चीज तोड भी दे, कर्कशा पत्नी, हर दिन बेबात पर झगडा भी कर दे, या नहीं सुनाने जैसे कटु वचन भी बोल दे, और उच्छृखल बेटा चार आदमियो के बीच भयकर अपमान भी कर द, विश्वासघात कर लाखोका गोलमाल कर दें, ऐसा कुछ भी हो जाय तो भी वह व्यक्ति यही सोचेगा → "भाई, मेरे ही कर्मोका दोष है, वस्तु ज्यादा नहीं टिकी, ऐसे कर्कश वचन सुनने पडते है, आदि-आदि" इत्यादि समाधान उसके लिये सहज सुलभ हो जाते है। उसके दिलमें, कैसी भी विकट परिस्थिति, क्यों न आ जाय, धरतीकप की जरा सी आच भी नहीं आयेगी।

अरे । और तो और ऐसी मन स्थिति बनाने के बाद अत्यन्त पीडा पहोंचाने वाला व्यक्ति भी शत्रु नहीं लगेगा और न ही उससे किसी भी प्रकार की शत्रुता करने का मन ही होगा

लिंकन अपने शत्रुओं की प्रशसा कर रहा था। मित्र ने पूछा → राष्ट्रपति महाशय । आप यह क्या कर रहे है ? "मै ठीक कर रहा हूॅ शत्रुओं को मार रहा हूँ चूकि शत्रुओं को मारने का तरीका यह नहीं कि आप उनके शरीर बींध दे उनके दिल में पनप रही शत्रुता मार दो. शत्रु मर गया शत्रु मिटकर मित्र बन गया

सामने वाले की भूल देखना यही मैत्री का खून कर शत्रुता पैदा करने की मूर्खता है । यदि आप ऊपर्युक्त चिन्तन के बल पर अपने दिल में पनप रही शत्रुता को तहस-नहस कर सकते है जला-भुना कर राख कर सकते है तो सच मानिये । उसी की राख में से मैत्री का नवनिर्माण अगडाइयॉ लेकर उठ बैठेगा

आप अपने आपको तनावमुक्त-आवेशमुक्त महसूस करेगे । काफी रिलेक्स हो जायेंगे । अर्थात् स्नायुतत्र ढीला पड जायेगा सीम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम अपने आप अपना कार्यभार को विरामसूचक चिन्ह दे देगा । हृदय की धडकने बढेगी नहीं । ब्लडप्रेशर की Abnormality दूर हो जाएगी । श्वास प्रणालिका नोर्मल हो जाएगी। मन शात हो जाएगा। इस प्रक्रिया को मनोवैज्ञानिक तबीब **'पेरासिम्पेथेटिक सीस्पोन्स'** कहते है ।

शत्रुता पैदा न होने देना यह जीवन की बहुत बडी उपलब्धि है । 'न रहे बास, न बजे बसूरी' शत्रुता ही नहीं खडी होने दी तो सामने वाले व्यक्ति को शत्रु मानकर उसकी ऐसी-तैसी करने मन ही नहीं होगा ।

अग्निशमनि दो बार पारणा न हुआ उस वक्त तक गुणसेन की भूल नहीं देखी, अत शत्रुता के भाव पैदा नहीं हुए अच्छे-अच्छे महर्षियो को भी झुकना पडे वैसी सुन्दर आत्मभूमिका तक वह इसी समता के बलबूते पहुॅच भी गया मगर तीसरी वार वह मार खा गया । पारणा चुका उसमें भूल उसने गुणसेन की देखी । शत्रुता आ धमकी । सद्गति के द्वार पर उसके लिए No Entry के बोर्ड लग गए । दुर्गति के दरवाजे खटखटाने पडे ।

आर्या **चन्दनबाला** ने जब उपालम्भ दिया → "कुलीन ऐसे तुमको सूर्यास्त के बाद बाहर रहना उचित नहीं है " प्रत्युत्तर में साध्वी **मृगावती** ने "ह में तो परमात्मा की देशना सुनने में लीन थी इसलिए मुझे ख्याल नहीं आया । आपको

हसा । तू झील

तो ख्याल था न ? आपने इशारा क्यों नही किया या किसी अन्य के पास कराया? गुरुणी हुए तो इतनी भी आपकी फर्ज नहीं ?" इत्यादि कहना तो दूर, मन में सोचा भी नहीं ॥

चूकि, ऐसा करने से गुरु के दोष देखने की हीनवृत्ति तुरत खडी हो जाती। इसके बंदले उन्होंने अपना दोष देखकर आत्मभाव में लीन बनी तो उसे केवलज्ञान तक भी मिल गया । और अपनी पूज्य गुरुणी को भी उसकी भेंट दी ।

★ सौतेली मॉ से सत्रस्त एक किशोर को श्रावक मित्र ने सौतेली मॉ का दोष नहीं दीखाया उसका स्वय का दीखाया "दोस्त । पूर्वभवमें तपश्चर्या कम की, इसलिए सहन करना पडता है " किशोर को बात जच गई । तभी तो सौतेली मॉ ने उसे आग में जलाकर खाक कर दिया तो भी उसके मन में द्वेष का अकूरा नहीं फुटा और वही किशोर नागकेतु बन कर मोक्ष के अव्याबाध सुख का भोक्ता भी बन गया ॥

ऐदयुगीन मानसचिकित्सक कहते है – "*Love your enemies....* यह बाईबिल का धर्मसूत्र ही नहीं है, अपि तु इस युग की दवा है हार्टएटेक, बी पी वगैरह रोगो पर उसकी चमत्कारिक असर देखने को मिली है ।"

सौन्दर्यप्रेमीओं का यही सूत्र के लिए कहना है कि "यह तो *Beautyformula* है ।" वे समझे है कि क्रोध और वैर की लागणीओं से मुख पर तग रेखाऍ अकित होती है जो चहेरे की कोमलता को नष्ट कर देती है ।

एक लघु नवलिका

शास्त्रो में एक कहानी आती है

एक युवक की शादी छोटी उम्र में ही हो गई थी । कन्या पासवाले गॉव की थी । अठारह साल की करीब उम्र हुई, तब मॉ–बाप ने उसे अपनी पत्नी को लेने के लिए भेजा । युवक श्वसुरगृह पहुँचा । बिचारी वह कन्या । एकदम घबडा उठी । "हाय । अभी से ससुराल में जा बैठना । सासु के कटुवचन सुनना। ननदों के ताने सुनना । पिहर में मिलती स्वतत्रता सखी–साथिनों की मौजमजा को अभी से तिलाजलि दे देना । नहीं नहीं यह तो नहीं चलेगा" और उसने अपना निर्णय ले लिया - कैसे भी करके ससुराल तो जाना ही नहीं ।

परतु मना करते उससे बना नहीं । उसको अपने पति के साथ रवाना होना पडा । बीच में जगल आया । उसमें एक कुऑ दिखा । नववधू का मन सक्रिय हो गया । उसने पतिदेव से विनती के तौर पर कहा → "पतिदेव । मुझे अत्यत प्यास लगी है। इस कुऍ में देखिए न । पानी मिल जाय तो थोडी प्यास बुझ जाय।

पति गया कुए के तट पर । अगूठे पे जरा–सा ऊँचा उठ कर अदर देखने लगा कि ध मा क् । बेवफा बेवकूफ औरत ने पीछे से धक्का मारा पति अदर गिरा "हाश । अब चलो छुट्टी हुई । ससुराल जाने की बला टली ।" ऐसा सोच कर वह अपने मायके में लौट आई ।।

पुत्री को अकेली वापिस लौटते हुए देखकर मॉ–बाप ने कारण पूछा । उसने मनगढत कहानी तैयार रखी थी → हम दोनों गॉव बाहर गए । एक के बाद एक अपशुकनों को होते देख शुरू–शुरू में तो आगे–आगे बढते ही रहे । परतु जब अपशुकनो का सिल–सिला शुरू हो गया तब पतिदेव ने कहा → "आज मुहूर्त कुछ अच्छा नहीं लग रहा है अत तू वापसि अपने घर लौट जा मैं पुन तुझे लेने के लिए कोई अच्छा मुहूर्त देख कर आऊँगा" जोग की बात है, उनको सौ शत प्रतिशत झूठी बात, उनके गले उतर गई ।

इस ओर युवक कुए में गिरा । परतु उसका आयुष्य बलवान था । पुण्य हरा-भरा था । अत बीच कुए में वह एक ऐसे समतल भाग पर पडा जिससे वह बाल-बाल बच गया । खास कोई मोटी इजा नहीं हुई । उसने चैन की सास ली । और खडे खडे नवकार महामत्र का स्मरण करने लगा। भाग्य की बात थी कि दूसरे ही दिन कोई अजनबी वहॉ से गुजर रहा था । उसे प्यास लगी । वह कुऍ के तट पर आया और उसने युवक को बाहर निकाल दिया । "भाईजान अदर कैसे लुढक गए?"

युवक गभीर था बात को पचाना जानता था । उसने प्रत्युत्तर में अपनी पत्नी का कोई उल्लेख नहीं किया ।

"पानी की खोजबीन करने आया था, पॉव फिसल गया अदर गिर गया।" बस, इतनी ही बात । अपने घर पर पहूँचा । पुत्रवधू को लिए बिना ही पुत्र को आया देख, मॉ-बाप ने वही प्रश्न पूछा ।

युवक में छिछोरापन का नितान्त अभाव था कर्मसिद्धात की मान्यता उसके मनमस्तष्कि में प्रतिष्ठित थी । नाहक पत्नी के षड्यत्र की दुष्चेष्टा को सुना कर पत्नी की बेइज्जती करना और उससे मॉ-बाप को व्यथित करना यह उसने नहीं गॅवारा ।

स्वय में पत्नी के प्रति दुर्भाव का अश प्रगट हो, यह जैसे उसे मान्य नहीं था, उसी प्रकार अपने मॉ-बाप के दिल में भी पुत्रवधू के प्रति यह दुर्भाव की घुन लग जाय या कीडा घुस जाय, यह भी उसे मान्य नहीं था ।

मेरा ही कोई पूर्वकर्म ऐसा होगा, जिससे पत्नी को मुझे कुए में गिरा देने की भावना जगी यह उस युवक का सोचना था जिसमें था सात्त्विकता की सरसता ् र तात्त्विकता की तरतमता ।

अत पत्नी की बेइज्जती न हो इस हेतु से उसने उसके दोष को ढकते मनगढत जवाब दिया → "मेरे सास-श्वसुर ने हमें विदा तो बहुत अच्छी से किया मगर गॉव बाहर निकलते-निकलते एक के बाद एक अपशुकन ।` लगे । तब मैने उसे पुन लौट जाने को कहा और साथ ही यह भी कहा कि कोई सुदर मुहूर्त दिखा कर पुन लेने आऊँगा ।"

पत्नी और पति दोनों ने एक जैसा ही मनगढत जवाब ढूँढ निकाला है । फिर भी दोनों में जमीन-आसमान जितना अतर था । एक ने अपनी भूल छुपाने के लिए तो दूसरे ने अन्य की भूल छुपाने के लिए । एक ने अपने बचाव के

लिए तो दूसरे ने अन्य का बचाव करने के लिए ।

मातापिता को पुत्र के जवाब से सतोष हो गया । उन्होंने कहा → "अच्छा बेटा । चार महीने के बाद किसी सुदर मुहूर्त में जाना ।"

परतु युवक के मन में तो हो गया था → "कुछ भी कारण हो, वह जब मेरे साथ आने को खुश नहीं है तो यहॉ लाने के लिए क्यों उस पर जोर-जबरदस्ती की जाय या जुल्मढोया जाए"

अत जब जब मॉ या बाप उसे बहू लाने की बात कहते तो वह कोई-न-कोई बहाना ढूढ ही निकालता । परतु कभी भी पत्नी के दुष्कार्य की गध आ जाय, वैसी बात वह भूल से भी नहीं करता था ।

यू टालमटोल करते-करते करीब दो साल बीत गए । पुन माता ने पुत्रवधू का जिक्र किया । युवक ने बात उडाने की चेष्टा की, परतु अब की बार वह नाकामियाब बना। मॉ ने कहा ☞ "कैसा भी कारण क्यों न हो, अभी भी तू लेने नहीं जाएगा तो समधी-समधिन और बहू को कितना बुरा लगेगा? बहू भी बिचारी तेरी राह-देखती देखती कितनी दु खित रहती होगी? अत अब तो तुम जाओ ही।"

माता जब इतना आग्रह कर रही थी तब भी उसने अपने दिल की गभीरता नहीं आ तोडी । माता की आज्ञा की अवमानना न हो, इस दृष्टि से आखिर वह अपने ससुराल की ओर निकल पडा । मन में निश्चय कर लिया → "कैसी भी परिस्थिति क्यो न आए पत्नी की उस बात को मैं कहूॅगा तो नहीं ।"

वह ससुराल पहुॅचा । पत्नी ने उसे देखा और वह हक्की-बक्की रह गई । काटो तो बदन में खून की एक बूद भी नहीं मिले । "यह जिदा भूत । ओह अब क्या होगा ? मेरे दुष्कृत्य का बदला लेने के लिए तो यह यहॉ नहीं आया? यदि घर मे सत्य बात कह देगा तो ओह सत्यानाश ।" ऐसी-वैसी अनेक शंका-कुशकाओं से उसका मन भर गया । "हाय । अब मेरा भडा फुट जाएगा? मॉ-बाप और सपूर्ण समाज मुझे कितना धिक्कारेगा और भयकर तिरस्कार-फिटकार बरसाएगा" वह थरथराने लगी । घबराहट से वह ऐसी दिग्मूढ बनी कि पतिदेव का औचित्य करना भी भूल गई ।

परतु सास-श्वसुर ने युवक का सुन्दर सत्कार-सम्मान किया फिर सासु ने कहा--

"उस दिन तो बहुत अपशुकन हुए थे । अत बहू को वापिस भेज दी परतु उसके बाद तो हम रोज आपकी राह देखते बैठे रहे थे आज आयेंगे कल आयेंगे।"

हसा । तू झील

वहू को तो मानो साप सूघ गया । वह अत्यत भयभीत हो उठी । अब पतिदेव धडाका करेगे कि "कौन से अपशुकन ओर कैसी बात? मैने इसे कहाँ वापिस भेजी थी? आप अपने पुत्रीरत्न को ही पूछ लीजिए कि उसने कैसा पराक्रम किया था ?"

बुद्धिमान युवक समझ गया । पत्नी ने भी मेरे जैसी ही बात बनाई थी । 'इस बात को सिवाय उसके और मेरे और कोई जानता नहीं है' यह बात समझते उसे देर नहीं लगी । अत नाहक क्यों पत्नी के बुरे हाल करने चाहिए ?

यदि इस पल सच्ची बात कह दी जाय तो पत्नी की क्या दशा होती उसका पिक्चर उसके दिमाग में आ गया था "तुने मुझे कुए में पटक दिया । तेरी तो ऐसी ही नहीं, इससे भी बदतर हालत करनी चाहिए" ऐसी कोई भी भावना उसके दिल में उठती नहीं थी । "उसकी जगह मै होता और मेरी जगह वह होती तो उससे मेरी क्या और कैसी अपेक्षा रहती ?" यह भी वह विचार सकता था।

तू ऐसा करता है, मैं भी ऐसा करूँगा ।

'तू ऐसा करता है तो मैं भी तेरे साथ वैसा ही करूँगा जैसे को तैसा का न्याय अपनाऊँगा' ऐसी मनोवृत्ति और चिन्तनधारा को वह अपने मन अत्यत तुच्छ समझता था ।

"अवे कुत्ते । तू मुझे भौकता है तो चल, मैं भी तुझे भौकूँगा और मैं भी कुत्ता वनूँगा" अथवा "गधे । तेरी यह हिमत कि तू मुझे लात मारे ले मै भी तुझे लात मारूँगा और गधे की औलाद बन जाऊँगा" अथवा "ओय पत्थर । तू मुझसे टकराया तो मैं भी तुझसे टकराऊँगा"

यह गणित जैसे मूर्खो की टेक्स्टवुकों में मिलता है वैसे ही जैसा को तैसा गणित भी वहीं मिलता है, ऐसा उसका मानना था और इसीलिए, स्वय को , गधा या पत्थर बनाने की वजा वह अपने आपको सुसयत रखना चाहता । मूर्खो का गणित उसे कतई मजूर नहीं था ।

उसकी पत्नी का जीव अद्धर हो गया । पति क्या वोलते है? परँतु इस प्रौढ युवक ने, पत्नी आश्चर्य और अहोभाव के विशाल सागर में गरकाव हो जाय, वैसा प्रत्युत्तर दिया ।

उसने अपनी सास को उद्देश कर कहा → आपकी बात सच्ची है । अपशुकनों के कारण मुझे उसे वापिस भेजनी पडी । फिर उसके बाद कई बार यहाँ आकर वहू को ले जाने की बातें चलती मगर कोई-न-कोई अवश्य ऐसा कार्य-विघ्न

आ पडता जिससे मैं यहाँ आ नहीं पाता था

"आपकी पुत्रीने मुझे कुएमें धकेल दिया" इस बातका इशारा तक नहीं किया।

उसकी वह पत्नी, जिसको आज तक कभी अपने पति पर प्रेम जगा नहीं था, उसके दिल में पति के मुह से निकले इन शब्दों से कैसी शाति पैदा हुई होगीन? उसका कलेजा जो इतनी देर तक धक्-धक् कर रहा था उसे कैसी चैन मिली होगी? अहोभाव, सद्भाव और प्रेम के कैसे फव्वारे उडे होंगे उसके दिल में? उसे यह पैनी लेखनी भी बता नहीं सकती वह भी बौनी हो जाती है । उसके लिए आउट ओफ रीच है । यह बात हर कोई आसानी से समझ सकता है ।

पत्नी के दिल में पति के प्रति अत्यत आदर के साथ-साथ अपार पश्चाताप हुआ "अर्र् । मुज अभागिन पगली ने ऐसे देवतासम पति को पहचाना नहीं । ऐसे पवित्र मनवाले पति को भी मैं ने मारने की कोशिश की ? मैं कैसी अधम और वे कैसे उत्तम ।

उसके बाद तो पति का वहाँ ४-५ दिन रूकना भी हुआ मगर उसने एक हरफ् नहीं उच्चारा । पत्नी के मन में था कि एकान्त में तो पतिदेव कुछ न कुछ अवश्य कहेगे कि "तूने यह क्या किया?" उस वक्त, और कोई भी नहीं हो तो भी मै क्या जवाब दूगी? इन विचारों से उसको तीव्र क्षोभ और शरम लग रही थी। परतु प्राप्त किए गए तत्त्वज्ञान के आधार पर उसका पति यह सोच सकता था "यदि एकान्त में भी इस विषयक कुछ भी पूछूँगा, तो उसे मानसिक व्यथा कितनी होगी ।"

जनरल सायकोलोजी

यह एक जनरल सायकोलोजी है । अन्य व्यक्ति की भूल कहने के लिए, याद कराने के लिए, उसके पास कबुलवाने के लिए सामान्यत हर एक आदमी आतुर रहता है । कहीं से जानने में आना चाहिए कि "फलॉ-फलॉने ने फलॉनी भूल की है" । बस, फिर तो आदमी ताक में ही बैठा रहता है *"कब ऐसा चास मिले और मै उसे उसकी भूल सुनाऊँ ? उसके पास कबुलवाऊँ यद्यपि मुझे उसकी कोई सजा-वजा करनी नहीं है फिर भी एकबार उसकी भूल तो कबुलाऊँगा ही।"* यह आम आदमी की टेन्डेन्सी हो जाती है । इस प्रकार की जो खुजली उठती है उसको वह रोक नहीं पाता है ।

चमडी के अनेक प्रकार के रोगों में खुजली आती है न । जब तक खुजलाए नहीं तब तक उसे चैन नहीं पड़ती है । खुजलाने के बाद ही वह दम लेता है

हसा । तू झील

उसे शाति और आनद भी तव ही आता है । अत खुजलाए बिना वह नहीं रहेगा। परतु इससे परिणाम कोई अच्छा थोडे ही आता है । उसका रोग तो और भी विकराल रूप धारण करता है । और उसके तन–वदन में और भी खुजली उत्पन्न होती है और वह मरीज ज्यादा से ज्यादा दु खी वनता ही जाता है ।

"उसकी भूल तो उसके पास कवुलाऊँगा ही" ऐसी जो खुजली है उसमें भी ऐसा ही सव कुछ होता है ।

चाहे कैसी भी खुजली–एलर्जिक सेन्सेशन क्यों न हो जाय, मैं खुजलाऊँगा नहीं तो ही यह रोग मिटेगा ओर मुझे शारीरिक भयकर पीडाओं से मुक्ति मिलेगी ऐसा जिसने निर्णय–दृढसकल्प कर लिया हो और तदर्थ जो महासत्त्व पुरुषार्थ करता है, वो ही इस खुजली को रोक सकता है वाकि जो व्यक्ति यह जानता नहीं है या इतना सत्त्वशाली नहीं है वह तो खुजलाए बिना हरगिज नहीं रहेगा।

वह तो 'तूने भूल की है तो तू नीचा ओर मैं ऊँचा' ऐसे तुच्छ अभिमान का पोषण करने के तुच्छ सुख की खातिर सामनेवाले व्यक्ति को शर्म में डालने के लिए या क्षुब्ध करने के लिए भी तैयार हो जाता है ।

स्वय की भूल पाच वरसो के वाद भी कोई याद दिलाये या अपने समक्ष बोले तो दिल पर कैसी गुजरती है इस वात का वारवार अनुभव करनेवाला इसान और इसीलिए 'मेरी भूल कोई कभी याद न दिलाये, अपने सामने या पीठ के पीछे कभी नहीं कहे और मेरे पास उस भूल को न कवुलाए ऐसी अपेक्षा रखनेवाला इन्सान दूसरों की भूल के वक्त अधिक इन वातों को कोसों दूर दफना आता है।

क्या यह उसकी सत्त्वहीनता और कमजोरी नहीं है? क्या यह मोहराजा जिस कद्र नचाये उस प्रकार नाचने जैसी पराधीनता नहीं है? क्या इसमें कठपुतली क का इशारा नहीं है?

देश आजाद हो गया मगर अफसोस। इसान आजाद नही हो पाया है । मोह की इस लौहजजीर को तोड नहीं पाया है ।। उफ् स्वअहकार के पोषण तुच्छ सुख को लेकर इसान, अन्य को लोगों के सामने उतार देने की कुचेष्टा है । मगर उसे पता नहीं कि → "अरे । सारी दुनिया इसी धधेमें एक्सपर्ट है । यही तो लोगों की सव से वडी कमजोरी है कि दूसरों की भूल याद दिलाना कवुल कराने के लिए जमीन आसमान एक करना और आनदित होना ।" परतु यदि मैं उनसे थोडा आगे निकलकर मन को मक्कम वनाकर थोडा सा सत्त्व प्रगट कर इस कमजोरी को मेरे ऊपर हावी होने नही दूगा तो कितना अपूर्व लाभ होगा?

❁ सामनेवाले व्यक्ति को स्वभूल सुनने की त्रास से मुक्ति का जो आनद मिलेगा
❁ और उससे उसको मुझ पर जो प्रेम-सद्भाव की उर्मिया जगेगी
❁ और पुन उससे मुझे जो अनहद आनद की अनुभूति होगी

उसके आगे अहकार का तुच्छ सुख-आनद तिलमात्र भी नहीं होगा । यह आनद उससे कई गुना अधिक होगा ओर होगा भी सात्त्विकता से भरपूर ।

इसके बदले यदि मैं उसकी भूल को कबूल कराने की माथापच्ची करूँगा, तो वह व्यक्ति मेरे से सदा भयभीत रहेगा दूर भागता फिरेगा मेरे प्रति अत्यत दुर्भाववाला बनेगा मेरी नजर भी उस पर न पड जाय तदर्थ वह प्रयत्नशील रहेगा मेरे साथ या पास काम करना न पडे ऐसी उसकी इच्छा बनी रहेगी । कदाचित् किसी सयोगवश मेरे पल्ले पडना भी पडा तो काम से काम कैसे जल्दी यहाँ से रफूचक्कर हो जाऊँ । इसी सोच में वह डूबा रहेगा । और कार्य करते वक्त भी एक प्रकार का भय-आतक-आशका से उसका मन उचटा रहेगा । अत उसका वर्ताव भी उसी ढाचे में ढला हुआ होगा । वह मेरे साथ घुलमिल नही सकेगा एक नहीं हो सकेगा वह व्यक्ति, मेरा निकट का स्नेही-सज्जन होगा, तो भी मेरे सामने दिल खोल कर बातें नहीं कर पाएगा । अपने दिल की बात कहने के लिए वह किसी ऐसे स्नेही-सज्जन को खोजेगा, जिसका दिल अत्यत उदार होगा इस कमजोरी का शिकार नहीं होगा, चाहे वह अत्यत दूर का रिश्तेदार भी क्यों न हो ।

स्थिति इस हद तक बिगड सकती है कि वह व्यक्ति, मेरे और उसके बीच के आपसी बात और मुसीबतो का उल्लेख भी वह मेरे सामने करने की बजा अन्य के सामने करेगा ।

अपने निकट के स्नेही को छोड कर अन्य के सामने बातें करने में उसका दिल भी रोता है अपने अँदर की बात दूसरों के सामने क्यों खुल्ली करनी? घर फूक कर तमाशा खडा क्यों करना? और इसीलिए वह सोचता भी यही है कि अन्य को अपनी गुप्त वातों को कहने की बजा मैं अपने निकट के व्यक्ति को कहूँ उनसे परामर्श करूँ

मगर उसी वक्त

हमने जो उसकी भूलों को वारवार याद दिलाकर उसके पास कबुलाने का प्रयासकर उस व्यक्तिके दिलको करारी चोट पहुँचाई है वह बात आडे आ जाती है ।

कभी कभार मन को मक्कम कर उस चोट की अवगणना कर वह हमारे

हसा । तू झील

पास आ भी जाता है, तो भी वह दिल खोलने का प्रयास जुटा नही पाता है।

दिल में बडी ऊधम मची हुई होती है भूचाल के असख्य आच लगे हुए होते हैं उन्हे भी नगण्य कर वह हमारे सामने आता है मगर वह व्यक्ति फिर हार जाता है । अपनी मुश्केलियों को वह वाचा नहीं दे पाता है, तब अट-शट, इधर-उधर की बातें कर वह वापिस चला जाता है ।

पुन एकाध बार कभी वह थोडी सी हिम्मत बटोर कर हमारे सामने एकाध-दो शब्द से प्रारभ भी करता है तो हम अपने स्वभाव के मुताबिक ऐसे मार्मिक शब्द बोल डालते है, या ऐसा कोई मार्मिक प्रश्न पूछ बैठते है जिससे, उसकी नैतिक हिमत टूट जाती है । 'यह बात व्यर्थ ही उठायी' ऐसा उसे लग जाता है और अत्यत दु खित होकर वह व्यक्ति पुन अपने दर में लौट जाता है ।

मगर उसके अतर का तूफान तो वैसा का वैसा है । वह चाहता है- "कहीं न कहीं इस उबाल को निकाल दू और हृदय के बोझिलपन को कुछ हल्का करू" इस आशा और आकाक्षा से वह किसी ऐसे व्यक्ति को ढूँढता है जिस पर उसको यकीन हो वह उसके पास जाता है और अपने दिल की बात कहता है और उसे अपना सच्चा हितेच्छु मान, उसकी सलाह-राय लेता है ।

बारबार सामने वाले व्यक्ति की भूलो को सुनाने का आदी इसान (हम) यह जान कर अत्यत ही दु खित और व्यथित हो उठता है । "मैं उसका इतना निकट का रिश्तेदार था फिर भी मुझे बात नहीं कही? उसके पास गया? क्या मैं कोई अच्छा मार्ग नहीं निकाल सकता था?" यह सोच कर यह व्यक्ति सामनेवाले व्यक्ति को अपने मन पुन गुनहगार ठहराता है । मुझे छोडकर उस के पास गया ही क्यों? सामनेवाले की यह एक और भूल वह अपनी दैनदिनी में नोट कर `॥ है और फिर वो ही रफ्तार वो ही सिलसिला परतु वह यह विचार । कर पाता है कि → "आज दिन तक उसकी भूलो को सुना-सुना कर उसके दिल को जो आघात पहुँचाया है उसी से तो वह मुझ से कतराता ्त है । मैने ऐसा आचरण क्या एक भी किया जिससे उसके दिल में मेरे प्रति ।ष्र पैदा हो वह मेरे सामने अपना दिल खोल सके ऐसा सुदर वातावरण का विनाश मैंने ही अपने हाथों से किया है अत भूल मेरी ही है "

इस विचारसरणिको अपनानेकी बजाय ठीक इससे विपरीत विचारधारामें फस कर वह अपने उस स्वजनको अपराधी मानता है । तिरस्कारकी मात्रा बढाता है।

परिणाम...

सबन्धों में मनमुटाव का मिश्रण होता है । सबन्ध टूट जाते है । और कदाचित् समाज-परिवार आदि के भय से बाहर न भी टूटे तो भी अदर का खोखलापन उजागर हुए बिना नहीं रहता है? मात्र कहने के लिए ही सबन्ध रहता है । उसमें न कोई दम होता है न आनद । उल्टा क्लेश ही बढता है ।

तत्त्वज्ञान को नहीं पाये हुए व्यक्ति की यह बात कहीं अन्य की भूल को भूलने की उदारता को नहीं बतानेवाले के केदार बताए मैत्रीभावना से पवित्र नहीं बने हुए व्यक्ति के अन्त करण की दशा बताई ।

परंतु.....

यह युवक तो तत्त्वज्ञान को समझा हुआ था उदारदिल और उदात्त-विचार-धारायुक्त था । मैत्रीभावना से उसका चित्त पवित्र था । 'अत पत्नी ने मुझे कुएँ मे गिरा दिया' ऐसा एक भी शब्द उसके मुह से नहीं निकला । यह देखते ही पत्नी का प्रेम तो बढता ही गया ।

ससुराल से विदा लेकर पत्नी सहित वह युवक पति उसी जॅगल से जाने लगा । और वह कुआ आया । पत्नी के हृदय की धडकने पुन बढ गई । अनेक शड्का-कुशड्काए उसके मन में उमडघुमड कर घने बादलों की तरह छाने लगी। 'ओह । इस कुए को देख कर यदि वह प्रसग याद आ गया और पतिदेव कुछ पूछ बैठेंगे तो? जल्दी से यह स्थान पसार हो जाय तो ठीक" ऐसे विचारों से उसके पाँवों की गति तेज हो गई ।

पति भी पत्नी की मन स्थिति समझ सकता था । 'क्यों पानी पीना है क्या?' इतना पूछने के द्वारा या स्वय कैसे बाहर आया यह बताने के द्वारा "तुमने क्या किया?" उसकी थोडी सी याद दिला दू ऐसी कोई वृत्ती उसकी नहीं थी ।

मानो वह उस स्थल पर पहली बार आ रहा न हो इस अनजानपन का मुखौटा अपने चेहरे पर लाकर वह उस ऐतिहासिक(?) घटनास्थल को पार कर गया । फिर तो राह में चलते-चलते कई प्रेमपूर्ण बातें भी की । मगर उस घटना का इशारा तक नहीं किया ।

वो बातें कभी ना याद आए

ससुराल ज्यों-ज्यों नजदीक आने लगा त्यों-त्यो *'चोर की दाढी में तिनका'* इस उक्ति के अनुसार पुन उसका दिल धडकने लगा । उसकी बैचेनी पुन जोर करने लगी ।

अपने माँ-बाप को तो पति ने अवश्य मेरी पराक्रमगाथा-राम-कहानी सुनाई

हसा । त झील

ही होगी न । मेरे सास-श्वसुर मुझे कैसी घुडकी सुनाएँगे ? सास कैसे कैसे ताने-बाने कसेगी? उनके दिलदिमाग में मेरे प्रति कैसी भयकर घृणा खडी होगी? ससुराल में अब मैं कैसे अपना जीवन गुजारूगी ? ऐसे विचार उसको आते थे और वह थर-थर कापने लगती थी ।

परतु ज्योंहि घर में प्रवेश किया

ओह ।

यहॉ तों वातावरण ही अलग है । सब उसको अत्यत हर्ष के साथ "पधारो पधारो कुललक्ष्मी ।" कह रहे है

वह समझ गई. ज्यों और जैसे अपने दोषों को छुपाने के लिए कपोल-कल्पित बात मैने बनाई थी ठीक उसी तरह पतिदेव ने भी वैसी ही बात बनाई थी । पति ने उस घटना का जिक्र किसी को नहीं किया था यह जानते ही वह चकित हो उठी और मन ही मन पतिदेव के चरणों में श्रद्धावनत हो गई ।

उसे लगा "यह मेरे पति मात्र पति ही नही एक देवता पुरुष है ।" ऐसी सुदर छाप उसके मन-मस्तिष्क में अकित हो गई ।

जीवन के दो सूत्र

उसका पारावार प्रेम और अपने लिए प्राण देने-पसारने तक की लगनी देख कर, उस प्रौढ युवक को भी अत्यत आनद हुआ । उसने जीवन में सुखशाति के लिए दो सूत्र बनाए

1. पूछने से न पूछना भला

2. बोलने से न बोलना भला

जीवन में मानो कोई वैसी घटना ही नहीं हुई हो त्यों वह अपना लग्नजीवन करने लगा । इन दोनो के सुखी-दाम्पत्य को देखकर लोगों को भी ईर्ष्या थी ।

वर्षों के वर्षों बीत गए । लडके भी हुए । परतु कभी भी उसने उस घटना जिक्र तक नहीं किया। पत्नी का प्रेम उसके प्रति दिन-ब-दिन बढता ही गया।

इस प्रौढ-बुद्धिमान और गभीर सज्जन की सलाह लेने के लिए कई लोग-बाग आते । सभी को वह उपर्युक्त दोनों सूत्र देता । अत उसका ज्येष्ठपुत्र बहुत बार अपने पूज्य पिताजी को उन सूत्रों का रहस्य पूछता ।

तब "मैने तुझे कहा न, पूछने से न पूछना भला- बस अब मुझे कभी भी पूछना नहीं" इस तरह बात को उडा देता । परतु पुत्र की जिज्ञासा बढती गई ।

वह बारबार आग्रह करने लगा । तथापि पिता ने अपनी गभीरता छोडी नही छिछोरापन आने नहीं दिया ।

एक बार पिता-पुत्र दोनों साथ में भोजन करने बैठे हुए थे । पेट over tight हो गया था । फिर भी पत्नी प्रेम से दो कवल लेने का आग्रह कर रही थी । उस वक्त उसे वह प्रसग याद आ गया ।" ओह । कैसा विचित्र है यह ससार । एक दिन जो मुझे मारने को तैयार थी वही आज अत्यत प्रेम से मुझे आग्रह कर रही है ।" उसे थोडा सा हॅसना आ गया ।

ज्येष्ठपुत्र की पत्नी ने गभीर श्वसुर के मुख पर इस स्मित की लहर को देख ली । वह सोच में पडी । जरूर इसमें कोई रहस्य है । चूकि श्वसुर का स्मित उसे भेदपूर्ण लगा ।

उसने अपने पति को इस बात से अवगत किया ।

पति ने बात को उडा देनी चाही, मगर पत्नी ने अपनी हठ पकड रखी।

"सच कहती हूँ, आपके पिताजी इतने गभीर है और वे हस जाय?" यह कहते ही उसके स्मृतिपटल पर सुबह का वह दृश्य पुन तादृश्य हो गया ।

ज्येष्ठपुत्र ने बात ही बात में पिता से पूछ डाला । जवाब में जब पिता ने कहा ☞ 'बेटा । पूछने से न पूछना भला ।" एक तो इस सूत्र के रहस्य को पाने की उसकी जिज्ञासा थी ही और उधर स्त्रीहठ ने भी जोर मारा था.

अब तो उसने बात पकड ही ली ।

पिता ने उसे बहुत समझाया पर वह माना नहीं । बेटे ने एक सूत्र तोडा तो पिता ने दूसरा । यद्यपि वे जानते थे कि बेटा इतना गभीर नहीं है मगर

पिता ने कहा ☞ देख बेटे । आज दिन तक मैंने किसी को यह बात नही की और न ही आज भी मैं तुझे कहना चाहता हूँ

फिर भी तू हठ करता है अत इस बात को मैं तुझे कहता हूँ मगर वचन दे कि तू किसी को नहीं कहेगा"

तुरत उसने मनोमन निर्णय कर लिया और शपथपूर्वक पिता से सपूर्ण बात सुन ली । पुत्रहठ ने दूसरा नियम तुडवा दिया ।

बहू ने सोगध खाकर अपने पति से बात उगलवा ली । बेचारा । औरत के आगे लाचार था ।

सास-बहू के झगडे तो चलते ही थे । सास का वीक पोइट बहू के हाथ लग गया । मानो नशे मे धुत बदर के हाथ तलवार आ गई ।

हसा । तू झील

एक दिन

सास ने किसी बात को लेकर डाटा बहू ने परिणाम का विचार किए बिना सीधा प्रहार किया ।

हमारे में हजार अवगुण होंगे मगर अपने पति को कुए में धकेल दे वैसा तो बिलकुल नहीं ।

इस तीखे व्यग्य से सास एकदम चोंक गई ।

ओह। इसको भी यह बात की पता है? अर्र्र्र्। सत्यानाश । सास की हृदयगति रुक गई । Heart Attack and Instant Death शब्दों के वज्रप्रहार ने एक नारी को मोत के मुह धकेल दिया ।

पिता के दिल को भी करारी चोट लगी ओह । जीवनभर जिस सूत्र को पकडकर मैं चला था और अब उफ् । एकबार उसकी उपेक्षा की तो कितना भयकर परिणाम आया ॥

पहिले मैं कह चुकाँ हूँ ➛ किसी की भूल देखे नहीं । अब मुझे कहना है ➛ कि *कदाचित् किसी व्यक्ति ने ठीक आपकी आँखों के नीचे कोई भूल कर दी और आपने देख भी लिया तो अब उसे भूल जाओ ।*

भूल उसीको कहते है जो भूलने योग्य हो

उसको आप भूल जायेंगे तो शाति और समाधि आपकी हथेली में आ जायेगी मुट्ठी में बद हो जायेगी । और सामनेवाले व्यक्ति के मनोभाव आपके प्रति अपार प्रेम और सद्भाव से उद्वेलित हो उठेगे ।

और यदि हमने उन भूलों को भूल से भी याद कर ली तो याद रखिए, हैरानगतियॉ तैयार है ।

उस प्रौढयुवक ने भोजन के वक्त पत्नी की भूल याद की और उसे हसना । हसी क्या आई जिदगी की मौत आ गई।। प्रेमपूर्ण पत्नी का सदा के वियोग हो गया यदि उसे भूल याद ही नहीं आती तो। कभी भी वह बोला था। अरे। अपनी पत्नी के आगे भी कभी भूल से भी उस अपराध को उसने नहीं दी थी तो उसके जीवन में वसत की बहार नजर आती थी । *परतु*

दो मौसम

जीव के जीवन में *'बहारों फूल बरसाओं'* का आनदवसत मोहराजा को फूटी ऑख नहीं सुहाता । वह तो चाहता है जीव के जीवनबाग में पतझड की मौसम। अत उसने जीव को अनादि की चाल-चलन पकडा दी है ।

अपनी भूल को लाख कोशिश कर याद दिलाने पर भी याद नहीं करनेवाला भुलक्कड इसान, सामनेवाले की भूल को किसी भी हालत में भूला नहीं पाता है, यह देख अत्यत आश्चर्य होता है । अपनी भूल पानी की लकीर-सी व्यक्ति के अतर में खींची जाती है और दूसरों की भूल पत्थरों में कुरेदा शिलालेख । दिल की दीवार पर अकित यही शिलालेख व्यक्ति के मधुर सबन्धों को बिगाडता है और जीवन की सुखचैन हर लेता है ।

आयना

नजर के सामने प्रसग तो बहुत बनते हैं और दिल में उनके प्रतिबिब भी कई पडती है । प्रतिबिम्ब को आयना भी झेलता है और फोटोप्रिन्ट भी । मगर दोनों में जमीन-आसमान जितना अतर है । आयना तो जैसे ही घटनाबिम्ब दूर हटा कि वह पुन ज्यों का त्यों Neat and clean बन जाता है उसमें प्रसग की थोडी सी झलक भी रह नहीं पाती है । अत जब कोई दूसरा प्रसग आता है तब वह उसके प्रतिबिब को भी आसानी से अपने ऊपर उभरने देता है ।

जब कि फोटोप्रिन्ट की बात दूसरी है । वह तो प्रसग की छवि ऐसे पकडता है कि वह हमेशा के लिए Fix, दूसरा कोई चित्र उस पर नहीं उठ सकता । अवकाश ही नहीं रहता ।

नजर में आई अन्य की भूल को जिसका दिल दर्पण की तरह पकडता है, उसका दिल फौरन स्वच्छ भी हो जाता है । इस स्वच्छ दिल में, जब भी वह अपराधी व्यक्ति कोई अच्छा काम करता है, तब उसका दिल अच्छे कार्यो का भी प्रतिबिम्ब झेल सकता है ।

फोटोप्रिन्ट

परतु जिसका दिल अन्य की भूलों को फोटोप्रिन्ट की तरह झेल लेता है, वह अमिट बन जाता है । अब चाहे, दूसरी बार सामनेवाला व्यक्ति कैसा भी अच्छा काम क्यों न करे उसका दिल उसे ग्रहण नहीं कर पाएगा ।

ज्यादातर मानव का मन अन्य की भूलों को देखने पर फोटोप्रिन्ट की तरह ही आचरण करता है । अर्थात् एक बार भूल के हृदय को पकड लिया फिर चाहे हजार अच्छे हृदय क्यो न आये । बस, खेल खतम ।। फोटोप्रिन्ट की तरह वह उसे झेलता ही नहीं है । No Entry का बोर्ड लगाकर साफ-साफ इन्कार कर देता है ।

तभी तो कहते है 'First impression is last impression' प्रथम छाप

हसा । तू झील

पडी सो पड गई । अतिम तक वो ही खडी रहेगी ।

xyz व्यक्ति सामने आया । किसने कह दिया → यह चोर है।' बस, फिर तो क्या। आप उसकी हर गतिविधियों पर अपनी पैनी नजर रखेंगे । वह हजार अच्छे काम करता होगा मगर आप उसे शकित दृष्टि से ही देखेंगे । कारण? बस एक ही कि आपके दिल ने प्रथम इम्प्रेशन में उसे चोर रूप से देखा है।

दूसरे भी एक **चितक** ने कहा है →*"मनुष्य मनुष्य को तो पहली बार ही मिलता है फिर तो जब-जब उस व्यक्ति से मुलाकात होती है तब मनुष्य उसकी इमेज को ही मिलता है ।"* मतलब यह कि उस व्यक्ति की अपने दिल में जो छाप उपसी हुई हो उसे ही वह मिलता है ।

उदाहरण के तौर पर गोपीचद सेठ और अमीचद सेठ मिलते है । उनकी मुलाकात पहिली बार ही हो रही है । गोपीचद सेठ के दिल में एक कल्पना उठती है- अमीचद सेठ डुप्लीकेट है । *'मुह में राम, बगल में छुरा'* जैसा इसान है । बाहर से अत्यत मीठा बोलता है मगर अदर से कुछ और ही है । बाहर से तो मानो मेरा भला करता हो मेरा अत्यत शुभेच्छक और जिगरजान दोस्त हो वैसा व्यवहारन करता है मगर यह आस्तीनका साप बडा ही जहरीला है खतरनाक है । मेरी बात कहता है । मेरा बुरा चाहता है' बस, एक बार ऐसी इमेज FixDeposit में डाल दी फिर ब्याज चालू । फिर जब भी वह व्यक्ति मिलेगा आपको "जनाब । आपकी तारीफ?" पूछने की जरूरत नहीं तुरत वह छाप सामने आ जाएगी, देखना जरा इस व्यक्ति से बातें करने में और काम करने में थोडा सभल कर चलना कैसा भी मीठा क्यों न बोले फसना नहीं"

, फिर तो इसी गणित को सामने रखकर सामनेवाले व्यक्ति के साथ बोलेगा, ॥, उठेगा, बैठेगा । मानो वह उस व्यक्ति के साथ नहीं, परतु अपने मन मे ी हुई उस व्यक्ति की इमेज के साथ ही बातें करता न हो और फिर ता ेवाल व्यक्ति चाहे लाख कोशिश क्यो न करे या हित के दो शब्द करने । सज्जनता क्यों न बताए आदमी अपने मन की इमेज को छोडता नहीं है।

मुतसद्दी

और मोहराजा की मुतसद्दी भी तो देखिए मनुष्य का मन फोटोप्रिन्ट की तरह जिस प्रतिबिब को झेलता है वह सामनवाले की भूल का ही । उसके दिमाग में पहली इम्प्रेशन जो पडती है वह ज्यादातर सामनेवाले व्यक्ति के अपराध की ही दिल में जो इमेज खडी होती है वह सामनेवाले व्यक्ति के बुरे कार्यों की ही

सामनेवाले इसान के अच्छे कार्यों का प्रतिबिब लगभग मनुष्य मन झेलता नहीं है । दिमाग में अधिकतर उसकी इम्प्रेशन इतनी दृढ बनती नहीं है, दिल मे उसकी वैसी जोरदार इमेज भी खडी होती नहीं है ।

दूसरों के अच्छे कामों के लिए मनुष्यमन आयना जैसा ही बन जाता है। वह प्रसग गया और दूसरे ही क्षण विस्मृत हो जाता है उसकी कोई असर ही नहीं रहती ।

चटनी बेकार थी ।

व्यक्ति अपना स्वय का अनुभव यदि टटोलेगा तो भी उसे इस बात की सत्यता का पता चल ही जायेगा ।

बहुत बडा भोज था आप अपने पॉच-पच्चीस मित्रो को लेकर गए । खाना खाने बैठे । एक के बाद एक वेराइटीज आने लगी । गुलाबजामुन कलाकद रसगुल्ला चमचम आदि मिठाई के साथ इडली-ढोसा आदि भी पिरोसे गए । मसालेदार चटनी आई । आपने डिश में ली और थूऽऽ ।। भूलसे निमक डबल डाला हुआ था । खाने का मजा किरा-किरा गया । मूड ओफ हो गया । उसके बाद और भी कई चीजें खाई मगर । भोजन कर घर लौट रहे थे दोस्तों में बात एक ही चल रही थी यार । चटनी क्या खिलायी ख़ाने का मूड मार दिया ।

उस दिन तो ठीक, पॉच-पच्चीस दिन के बाद भी जब कभी उस भोज की बात निकलेगी उस समय कौन-सी आईटम याद रहेगी? दिल में से किस आईटम की फोटोप्रिन्ट बाहर निकलेगी? चटनी ।।

अरे यह भी कमाल है । एक से एक बढकर कई वेराईटीज थी फिर भी चटनी ही याद रही ? अरे । भला हो तो कभी कभार या बहुधा अन्य वेराईटीज के तो नाम भी भूल जाता है याद रहती है सिर्फ चटनी ।।

कोई व्यक्ति आपकी प्रशसा करते हुए सौ वाक्य ऐसे बोले हो जिसमें आपका गुणगान हो मगर सिर्फ दो वाक्य अपमान भरे बोल दे तो सच कहिये, कौन से वाक्य याद रहेगे? नामदार । बडे ही बुद्धिमान है, धनवान् है दयावान् है, धर्मात्मा है मगर मक्खीचूस है । नामदार को कौन से दो शब्द जिदगीभर खटकते रहेगे?

मोहराजा ने की हुई यह कैसी विडबना । न याद रखने जैसी बातों को याद रख-रखकर आखिर सक्लेश ही खडे करने है या और कुछ? दु खी होने का ही यह धधा है या कुछ अन्य? जब तक यह जीव, मोहराजा की आज्ञा उठाता रहेगा, तब तक मोहराजा जीव के पास ऐसे ही काम करवाएगा । ऐसी ही चाल

हसा । तू झील

चलायेगा और ऐसी अनादि की चाल पर चल कर जीव अपने ही हाथों से अपने विनाश को न्योता देता है ।

कैसी विपरीत चाल चलाता है यह मोहराजा

किसी के लिए किसी कल्पनावश एकबार गलत छाप खडी हो जाती है, फिर उस व्यक्ति के हजार अच्छे कामों को देखने पर भी, "उसने मेरा यह-यह अच्छा काम किया" ऐसा स्वय के अनेकविध अनुभवों से पता चलने पर भी पूर्व में जो छाप दिल की स्क्रीन पर पडी हुई है उसे मिटाने के लिए वह व्यक्ति तैयार नहीं होता यही मनुष्य के मन की सब से बडी कमजोरी है ।

जबकि....

एक व्यक्ति ने कोई अच्छा काम किया और आपके मन में उस व्यक्ति की कदाचित् कोई अच्छी छाप पड भी जाय, तो भी एकबार किसी बुरे व्यवहार-बर्ताव को देखकर (अरे। देखकर तो क्या मात्र कल्पना कर के भी) मानव का मन उसी अच्छी छाप की ऐसी-तैसी कर उसका नामोनिशान मिटा देता है ।

रानी चेलना

मगधसम्राट **श्रेणिक** और महारानी **चेलना,** विश्ववत्सल भगवान महावीर को वंदनादि कर गोधूलिका के समय लौट रहे थे । नगरी के बाहर नदी के तट जैसे स्थल में, नदी से भी शीतल और पवित्र एक महात्मा कायोत्सर्ग में खडे थे । दोनों ने भावविभोर होकर वदन किया । राजमहेल में पहुँचकर सध्याकार्य को निबटा, शयनारूढ हुए ।

रात्रि सारी दुनिया को अपने शिकजे में जकडने लगी। और इधर जाडे की मोसम थी अत कडाके की ठडी ने भी अपनी जडे जमा ली। रात को ज्यों ही में चेलनारानी का हाथ रजाई बाहर निकला त्यों ही वह जग गई। राजमहेल हुए भी ठड के मारे उसके बुरे हाल हो गये। तब उस महारानीको याद वे मुनिभगवत । और उसके मुँह से यकायक निकला "उनका क्या होता होगा?" सयोग की बात है कि श्रेणिक उस पल जग रहा था और उसके कानों ये शब्द पड गए । और वह चौका ओह । औरत की यह जात । हृदय में और वाणी में और और काया से किसी और को वरण करनेवाली ऐसी नारी को धिक्कार हो । अरर । मैं जिसे सती मान रहा था, वह भी किसी और के सोच में डूबी रहती है ?

बस, उस विचारधारा ने बरसों के अनुभव पर जो छाप खडी हुई थी-

"चेलना महारानी सती है पतिव्रता है" वह सिर्फ एक ही प्रसग की कल्पना से साफ हो गई । अपार प्रेम एव विश्वास खत्म हो गया । और विपरीत छाप खडी हो गई, यावत् अत पुर को जला कर खाक करने का फरमान भी निकल गया।

जब भगवान महावीर प्रभु के श्रीमुख से स्वय की शका का निराकरण हुआ तब अपने अविचारित फरमान पर श्रेणिक राजा को अत्यत खेद हुआ ॥

बस । मोहराजा का एक ही निश्चय है कि → "हर तरह जीवो को परेशान करना । अडबड सलाह देना, तदनुसार उलटे-सूलटे काम करवाना परिणाम स्वरूप जीव को हैरान-हैरान करना ।" उसकी हर एक सलाह विपरीत ही होती है ।

एक व्यक्ति से कोई भूल हो गई । उसकी उस भूल का चश्मदीद गवाह या और कोई व्यक्ति जान-अनजान मे भरी सभा या चार आदमियों के बीच खडा होकर यदि उस भूल का जनरल वर्णन करते हुए कहे → "आज दुनिया कैसी हो गई है? कई लोग ऐसे भी होते है जो ऐसी-ऐसी भूलें करते हैं ।"

बस उस भूल को करनेवाला व्यक्ति यही मान बैठेगा → "भरी सभा मे वक्ता ने मेरी बेइज्जती की है जानबूझकर की है । उसने मुझे सुनाने के लिए ही कहा है " इस प्रकार के विचारों की टीबी उसे लग जाती है और वह दिन-ब-दिन दु खी होता जायेगा । मन में उद्वेग को धारण करेगा ।

और उसी व्यक्तिने एक बार कोई अच्छा काम किया। उस काम को जाननेवाले व्यक्ति ने या जिसके ऊपर उपकार किया वैसा वह व्यक्ति सभा में खडा होता है और जनरल कहता है- → -

"आज भी कई ऐसे परोपकाररसिक जीव इस दुनियॅा मे है जो ऐसे-ऐसे सत्कार्य करते है"

यह सुनकर 'क्या इसने मेरी प्रशसा की है' ऐसा मानकर वह व्यक्ति प्रसन्न हो जायेगा ? क्या उसे सतोष हो जायेगा ? नहीं उस समय तो वह यही सोचेगा "ठीक है व्यक्ति ने अच्छे काम की प्रशसा जरूर की है मगर वह अच्छा काम मेरे नाम के साथ जोडकर इसने कहॅा कहा? लोगों को कैसे पता चले कि यह अच्छा काम इस व्यक्ति ने किया है और ये प्रशसा के पुष्प उसी के लिए है? अर्थात् मेरा नाम नहीं बोला है तो यह अच्छा काम मैंने किया यह कैसे पता चले?"

है न मोहराजा के द्वारा की हुई जीवों के मनोभावों की विचित्रता ।

खराब काम की या किसी xyz के भूल की कोई बिना किसी के नाम लिए जनरली बात करे तो भी अपने सिर पर टोपी पहिनकर दु खी होने को तैयार

हसा । तू झील

और ठीक उसी ढग से अर्थात् बिना किसी का नाम लिये अच्छे काम की प्रशस करते है तो खुश होने को तैयार नहीं । कमाल है न । *खराब काम से लोग नाम सहित जाने तो ही मेरी व्यक्तिगत टीका की गई ऐसा मानने को तैयार नहीं और अच्छे कामो में लोग नाम सहित जाने तो ही मेरी प्रशसा ऐसा आग्रह ।*

ऐसी विचित्रता क्या हैरान होने की एक या दूसरी रीति नहीं है? क्या यह भी जीवको दु खी करने की मोहराजा की चालबाजी नहीं है?

ऐसी ही मोहराजा की एक चालबाजी है, जिसका प्रस्तुत में विचार किया जा रहा है । मोहराजा इस जीव के पास 'मेरी भूल कोई बताये नहीं बोले नही याद कराए नही' ऐसी अपेक्षा बधाता है । और इसीलिए जब कोई स्वय के जैसा ही स्वभाववाला व्यक्ति सामने मिलता है और वह जीव की भूल को कहता है याद दिलाता है या कबूल कराने का प्रयास करता है तब जीव उसके साथ शत्रुता खडी करता है वैर वैमनस्य को मन में धर लेता है । वह व्यक्ति चाहे कैसा भी प्रिय क्यों न हो धीरे धीरे कडुआ लगने लगता है ।

स्वय की भूल को कोई याद न कराये वैसी अपेक्षा को दिल में सजोकर फिरनेवाला जीव, जब दूसरों की भूल देखता है तब उस भूल को सुनाने व याद दिलाने के लिए इतना इच्छुक देखा गया है कि कहना पडता है वाह रे । मोहराजा । तू भी भौंडी राजनीति के दाँवपेच खेलकर इस जीव की कैसी-कैसी बुरी दशा करता है ।

उसकी यह तत्परता इस पराकाष्ठा पर पहुँच जाती है कि वह सामने चलकर शत्रुता खडी करता है मधुर सबधो को तोडता जाता है अपनी प्रियता पर कुठाराघात करता जाता है और एक दिन वह स्वय अत्यत अप्रिय बन जाता है।

फोरेन का एक किस्सा

Return to Religion नामक पुस्तक में एक विदेशी सायकोलोजिस्ट ने किस्सा-सत्यघटना लिखी है-

स्वय मानसचिकित्सक था अत कई केस उसके पास आते थे। जो रोगी ट्राइसाइक्लिक व ट्रेंक्युलाइजर कपाउडों को ले-ले कर थक जाते वे इस साइकोलोजिस्ट के पास आते। उसे मानवमन का काफी अभ्यास हो चुका था । अत आये हुए दर्दी को ऐसे-ऐसे सुदर Suggestion सलाह देता कि लगभग केस अच्छा हो जाता। मनोरोग काफूर हो जाता । डीप्रेशन-सप्रेशन-मेनिक-एव अमुक स्टेज तक पहुँचा हुआ सीजोफेरनीया जैसे रोग भी काफी कंट्रोल में आ जाते

एक बार एक महिला उसके रूम पर आई । चेहरे की तग नसें उसकी मानसिक अस्वस्थता बता रही थी ।'Talk Therapy' के दौरान महिला ने अपनी समस्या बताई । समस्या उसकी फरियाद थी → 'मैं हर तरह पति की सेवा करती हूँ पति के सिवाय और किसी पुरुष को मन से भी चाहती नहीं हूँ रूपरग में भी सुदर हूँ फिर भी पति मुझे चाहता नहीं है । पति मुझे प्रेम से बुलाता नहीं है । छुट्टी के दिनों में घर में या बाहर मेरे साथ दो घडी प्रेमगोष्ठी करता नहीं और स्वय अकेला ही बाहर घूमने चला जाता है ।"

यह तो था मानसचिकित्सक इसका गणित सीधा सादा था टू प्लस टू इज इक्वोल टू फोर कहीं न कहीं गडबडी है तभी सामनेवाला इसे नहीं चाहता।

उसने उस स्त्री के मन को deep रूप से समझने के लिए सूक्ष्मतापूर्वक प्रश्न चालू कर दिए

सुबह आप प्रथम उठती है या पति? चाय-नाश्ता आप तैयार करती है या आपके पति को तैयार करना पडता है? रसोई आपकी मनपसद बनाती है या पति की मनपसद? हर बात में अपनी चोइस को आप महत्त्व देती है या पति की चोइस को? ऑफिस जाते समय पति की तैयारी में आप सहाय करती है या सुस्ता कर लेट जाती है? उनके ऑफिस कार्य में आप दखल तो नहीं करती? शाम को ऑफिससे थक कर चूर होकर जब पति घर पर आते है तब आप दिन भर की फरियादों की लिस्ट तो सुना नहीं देती ।

तीन घटों तक Depth striking Introgation रहस्यभेदी विविध प्रश्नों को कर मानसचिकित्सक ने उस स्त्री की एक ऐसी मानसिक कमजोरी ढूढ निकाली कि रोग का निदान अत्यत सरल हो गया ।

कमजोरी यह थी कि इस महिला को एक बहुत बुरी लत थी पति कोई भूल कर बैठे तो उसे सुनाये बिना वह नहीं रह सकती थी → "यह तो मै हूँ इसलिए सब कुछ सह लेती हूँ दूसरी कोई होती तो कभी की भाग गई होती।"

बस, डाक्टर ने उसे सलाह दी दो टुक की दवाई प्रीस्क्राइब की कि-"देखो बहिन, आपका रूपलावण्य या पति की सेवा के विषय में आपको कोई चिन्ता करने की जरूरत नही है । अत तदर्थ कोई नया विशेष प्रयास करने की आवश्यकता भी नही है । परतु इतना काम करना पति की भूल के वक्त यह जो आये दिन आप सुनाती रहती थी उसे बद कर, जब भी आपकी भूल हो उस वक्त पति को यह कहना ☞ "पतिदेव । यह तो आप है इसलिए मेरी ऐसी भूलों को आप

हसा । तू झील

सह लेते है और कोई होता तो मुझे धक्का मारकर कभी की बाहर निकाल होती " बस, इतना आप करो और ठीक आज से एक महीने के बाद पुन मिलना

उस महिला को तो हर हालत में पति का प्रेम हासिल करना था । उ उस अमूल्य सलाह को स्वीकार ली । फिर तो महीने की भी क्या जरूरत थ पद्रह दिन बीते होंगे और वह सन्नारी अत्यत हर्षित होकर डॉक्टरसाब Congratulations देने आई ।

"डाक्टर साब । अभिनदन । अभिनदन । आपकी सुनहरी सलाह मैंने स्वीक और मेरे जीवन में गजब का चमत्कार हो गया । अब तो मेरे पति मुझे इत चाहते है कि वे ऑफिस से सीधे घर पर ही आते है । छुट्टी के दिनों में तो घर में ही रहते है या बाहर मुझे भी घूमने साथ ले जाते है "

क्या आपको लोकप्रिय बनना है?

क्या आप सचमुच चाहते है कि 'मैं लोकप्रिय बन जाऊँ?' क्या आप सहपा सहवासी–सहप्रवासियों का प्रेम सपादन करना चाहते है? तो लीजिये अपनी डाय में इस सुवर्णसूत्र को नोट डाउन कर लीजिये

"स्वय की भूल को बेझिझक–किसी भी प्रकार के ननु–नच या बच किये बिना स्वीकार कर लीजिये और अन्य की भूल को कभी याद करो.... सुनाओ नहीं या कबुलाने की कोशिश मत करो"

यह काम अत्यत कठिन है, यह बात सच है चूकि अपनी आज दि तक की प्रवृत्ति ठीक इसे विपरीत रही है । किसी की भी भूल देखी नहीं कि अपने मस्तिष्क में उसकी नेगेटिव तैयार हुई नहीं । फिर तो जब–जब प्रसग आयेगा तब–तब पोजिटिव तैयार। कलरलेबवाला नेगेटिव अपने पास रखता है फिर ज पोजिटिव्स् आपको चाहिये उतनी उसी समय दे देता है । यह सब प्रता नेगेटिव का है ।

उसी प्रकार जब किसी व्यक्ति की भूल सुनने को मिलती है, तब मस्तिष्क रिकार्डिंग हो जाती है और टेपरेकार्डिंग डिस्क तैयार जब–जब उसे पर लगाया जाता है तब तब वह बजने लगती है । किसी के भी बुरे बरताव को भूल जाना चाहिये, उसके बदले यदि उसे बारबार याद किये जाते है उसका कथन किया जाता है तो उससे वैर की गाठ दृढ बधती जाती है

थोडा–सा भुलक्कड बनें

तभी तो किसी चितक ने कहा है

हम यदि अमनचैन से जीना चाहते है तो थोडा सा भूलना भी सीखें

☆ अन्य का बुरा बर्ताव ।

☆ अन्य के द्वारा किया गया अपमान ।।

☆ अन्य के द्वारा दिया गया कष्ट ।।

☆ इस अर्थ में भुलक्कड बनना अच्छा है ।

शरीर में खून बहता रहे तो ही स्वास्थ्य बना रहेगा । जो वह बहता नहीं रहे और एक ही जगह जमा हो जाय तो उसमें से गाठ बध जाती है Blood clothing हो जाता है जिससे सपूर्ण शरीर में खलबली मच जाती है । ब्रैन में क्लोटिग होता है तो आदमी डीप कोमा में भी चला जाता है पैरालिसिस का शिकार भी बन जाता है गाठ बधी नहीं कि स्वास्थ्य का सरेआम जनाजा निकला नहीं।

ठीक उसी तरह....

अन्य व्यक्ति भूल करता रहेगा और हमारी नजर उस पर जाती रहेगी मगर उस भूल पर हमारी नजर टिकनी नहीं चाहिये । भूल के उस प्रसग को बहते रहने दो तो ही स्वस्थता रहेगी । इससे विपरीत यदि ऐसा कोई भी प्रसग बहने के बदले टिका रहे और दिल में जमा हो जाय, तो वह बार-बार याद आयेगा। अन्य के भूल की बार-बार याद, वैर की गाठ का रूप धारण कर लेती है । और उससे तो आत्मा में कई प्रकार की अस्वस्थताएँ खडी हो जाती है ।

इन अस्वस्थताओं से बचना हो और आदरपात्र बनना हो तो इस साहजिकवृत्ति को शीघ्र तिलाजलि देनी ही पडेगी ।

यह वृत्ति जो नहीं छोडी गई, तो बना हुआ प्रेमसबन्ध रिश्ता-नाता टूटे बिना नही रहेगा और शत्रुता शीघ्र ही पैदा हो सकती है ।

और यह वृत्ति जो छुट गई तो टूटे हुए सबध भी जुड़ जाते है । प्रेम-रिश्ता हो जाता है और टिका भी रहता है ।

शादी के पहिले और बाद

शादी के पहिले ससार कलर लगता था और शादी के बाद ब्लेक एण्ड व्हाइट ।। ऐसा क्यों ?

इस रहस्य को सुलझाने के पहिले

आमतौर पर दुनिया में यह देखा जाता है कि जिन युवक-युवतियों की बहरहाल सगाई ही हुई है शादी नहीं हुई है तब उन दोनों के बीच एक दूजे के लिए प्रेम देनेवाली बात कितनी पराकाष्ठा तक पहुँच जाती है। घटों के घटों तक मिलते

हसा । तू झील

हैं, साथ-साथ बागबगीचों में घूमते-फिरते हैं, प्रेम से अरस-परस बातें करते है अगर किसी कारण वश से लबा विरहकाल पड भी जाता है तो एक दूसरे के लिए अपार तडफन भी महसूस करते है एक-दूसरे की याद सताती है विरहवेदना का अनुभव किया जाता है। कभी-कभार सच्चे दिल की ऐसी लगन भी महसूस की जाती है कि एक दूसरे के लिए अवसर आने पर प्राण का त्याग भी कर देंगे।

परतु अफसोस । यही युगल जब

सप्तपदी के फेरे फिरते है अग्निदेवता की साक्षी में हस्तमेलाप करते हैं और फिर उसके बाद

जब दापत्यजीवन शरू होता है तब जीवन के पर्दे पर प्रथम शो चालू होता है चार-छ महीने के बाद दूसरा शो चालू होता है जिसमें प्रेम का ज्वार, भाटा में परिवर्तित होने लगता है । एक दूसरे के प्रति स्नेह के सचार की कमी हो जाती है । लग्नपूर्वे के जैसी भावनायें नहीं होती है ।

आमतौर पर दम्पतियो में यही प्रोब्लेम क्यों देखी जाती होगी ?

शादी के पूर्व और पश्चात् की यह विषमता बडी ही आश्चर्यजनक है । अरे, शादी के पूर्व तो सिर्फ मिलना ही था, घूमना-फिरना-प्रेम गोष्ठी करना मात्र था, दूसरी कोई ऐसी रीति उस वक्त नहीं थी कि एक दूसरे के लिये कोई खास उपयोगी सिद्ध हो सके

जब कि शादी के बाद तो

पति कमा कर लाता है पत्नी के लिये सुदर से सुदर गहने कपडे लत्ते लाता है पत्नी का पोषण करता है चारित्रिक रक्षण करता है आर्थिक समस्या की हर उलझनों को अपने सिर पर लेकर उन्हे सुलझाने का प्रयास करता है

दूसरी ओर पत्नी सुदर-सुदर नई-नई वानगी-वेराइटिज बनाकर पतिदेव प्रसन्न करने का भरसक प्रयास करती है, घर-गृहस्थी सभालती है

पतिदेव मिनिस्टर आफ एक्स्टरनल एफेर्स-फोरेन मिनिस्टर-विदेश मत्री का सभालता है ।

पत्नीदेवी मिनिस्टर आफ इटरनल एफेर्स-होम मिनिस्टर गृहमत्री की कारकीर्दी वजाती है ।

अरे शादी के वाद एक दूसरे को दैहिक सुख भी देते है । इस तरह लग्नग्रथी से जुडने के वाद कई तरह एक दूसरे को उपयोगी भी सिद्ध होते है तो फिर प्रेम में ज्वार के वदले दिन-व-दिन भाटा ही क्यों आता है?

बारह वर्ष की एक किशोरी बुकस्टोल पर आई । उसने बुकसेलर को कहा- 'हाऊ टू प्लीज योर हजबेन्ड' किताब है क्या? उमने आश्चर्यचकित नजरों से उस लडकी को देखा और किताब उसके हाथों में थमा दी, मगर वह अपने आप को रोक नहीं सका वह पूछ बैठा → यह किताब तुम्हे क्या काम लगेगी? उसने कहा → अरे, यह किताब मुझे नहीं, मेरी मम्मीको चाहिए । मम्मी-पप्पा रोज झगडते है ।"

ज्यादातर विवाहितो की यह स्थिति है । या तो विस्फोट हो चुका होता है या विस्फोट के कगार पर की स्थिति गुजर रही होती है ।

दाम्पत्यजीवन के प्रेम के इस भाटा का रहस्य क्या है? मजीठ के बदले हल्दी की तरह यह प्रेम जल्दी उतर क्यो जाता है? आइये अब इस रहस्य का पता चलाये

ढाई अक्षर प्रेम का

इस भाटा-उतार का रहस्य है → बार बार सामनेवाले की भूल देखनी भूल देखने के बाद उसे निगलने की बात नहीं किसी भी तरह सुनाने के ताक मे पडे रहना । जब तक शादी नहीं हुई थी सिर्फ मगनी ही हुई हो तब तक इतनी समीपता नहीं थी मिलन होता तो वह भी २-३ घटों तक ही. उसमें भी एक दूसरे का कोई खास काम करने का भी होता नहीं है मात्र मस्ती से वाते करना ही रहता है । इसलिए न तो एक दूसरे की भूले दिखती न इतनी खास भूलें भी होती ।

परतु शादी के बाद दो एकदम नजदीक आ गये चौबीसो घटे साथ में रहना और एक दूसरे का काम कर देने का व्यवहार चालू हुआ

'दूर से डूगर लुभावने' पहाडों को दूर से देखो बडी ही मनलुभावनी दृश्यावलि दिखेगी तलहटी से शिखर तो सुदर ही लगेगा

परंतु....

ज्यो ही हम चढकर ऊपर पहुँचते है तो सुदरता तो दूर रही, पत्थर-ककड काँटे और कँटीले झाड-झखाड ही हाथ आते हैं

शिखर से तराई का दृष्य भी बडा ही सुहावना लगता है

परमपवित्र गिरिराज श्री शत्रुजय पर चढ कर दादा के दर्शन कर नीचे उतरते है उस वक्त तलहटी का दृश्य खेत-खलियान और दूर-सुदूर सर्पिली मोड ले रहे पथ-विपथ कितने सुदर और मोहक लगते हैं ? और सचमुच जब नीचे आ

हसा । तू झील

जाते है तो तोबा । तोबा । कुछ भी नहीं होता घास–फुस–मिट्टी–रेत ॥

शादी के पहिले दोनों एक–दूसरे से काफी दूर थे अत एक दूसरे के गुण और सुदरता ही दिखती है परतु शादी के बाद दोनों काफी निकट आ जाते है और अब तो सारा–का–सारा ऊबड–खाबडपन नजर के सामने आ जाता है।

अरे भाई । बर्तन एक से दो मिले कि खडखडाहट तो होगी ही ।

'मुडे मुडे मतिर्भिन्ना' दोनों की बुद्धि, विचार, अभिप्राय और पसद में भेद तो रहेगा ही । और उसमें एक के विचार और इच्छाओं पर घात भी लगेगा ही। जिसके विचारों को ठेस पहुँचती है वह सभ्य अन्य सभ्य को तदर्थ जवाबदेह मानकर यह उसकी भूल है ऐसा मानने लगता है

यद्यपि....

एक नहीं अनेक बार सामनेवाले ने अपनी इच्छा न होते हुए भी सिर्फ उस व्यक्ति को खुश करने के लिये कई काम किए हुए होते है, मगर वे उस समय उसकी नजरो में नहीं आते है ।

पहिले भी कह चुका हूँ कि ➤ साधारणत जीव का ऐसा एक विचित्रस्वभाव हो गया है कि वह सामनेवाले व्यक्ति की दस अच्छाइयो को देखने की बजा एक बुराई को जल्दी देखता है कोरे कागज में रही हुई सफेदाई इतनी जल्दी नहीं दिखती कि जितनी जल्दी उसमें रहा हुआ एक छोटा–सा काले रग का धब्बा।

ओह । अच्छी बात एक नहीं देख सकता और बुरी बात एक नहीं छोड सकता ।

दॉत तो मुह में बत्तीस है मगर जिस दॉत में कुछ भर गया हो या कोई गडवड हो वहीं पर जीभ बार–बार जाती है "और इस दात में कुछ गडवडी ऐसा सवेदन करती रहती है न । शेष ३१ दॉत के तो अस्तित्व से भी वह ‹। वेखवर रहती है ।

शरीर के अनेक अगों में से सिर्फ बिगडा हुआ अग ही तो बार–बार याद है न । इसी अनादि की चाल के परवश बना हुआ जीव यह सिद्धान्त अपने न में भी अपनाने लगता है ।

पत्नी सुदर से सुदर रसवतियॉ खिलाती है, घर को स्वच्छ रखती है, मेहमानो की आवभगती करती है, स्वय (पति) को जिगर से चाहती है, ऐसी कई छोटी–बडी बातों को पति ध्यान में भी नहीं लाता है और अपने वचन या विचार के विरुद्ध पत्नी ने कुछ भी कर दिया तो देख लो नेगेटिव तैयार हो ही गई उन

भी काम आता न हो ।

ग्रामोफोन स्टार्ट

और फिर तो ग्रामोफोन की रिकार्ड को पीन मिलनी चाहिये ... एक गीत चालू । उसी प्रकार मनुष्य के सामने कोई प्रसग ... एक के बाद एक भूल की रेकर्ड सुनानी चालू। वकनली का ... बार पानी चालू करो फिर पूरी खाली न हो तब तक वह ...

त्यों एक बार भूलें सुनानी चालू की तो जितनी याद ... ी लगती है ।

यह बात मात्र पति के पक्ष में ही नहीं है . पत्नी के पक्ष में ... ही बात है ।

पति की ओर से मिलनेवाली अनेक सहकार–सद्भावना को पत्नी ... की डायरी में नोट करती नहीं है और छोटे–बडे असहकार को नोट करने ... अवसर चूकती नहीं है । बारबार की जा रही वे नोट्स (नोंध) यादें और पुन पुन भूल सुनाने की वे प्रवृत्तियॉ घोंटा–घोंटा कर ऐसी घट्ट बन जाती है कि समय आने पर वह पति–पत्नी के बीच एक अभेद्य दीवार बन जाती है फिर तो एक ही कमरे में रहनेवाले पति–पत्नी नाम दो जीव दिल से काफी–काफी दूर रहने लगते है ।

भारत की एक सस्कृति

एक दूसरे की भूल बारबार घोंटा–घोंटा कर दीवाररूप बन न जाय और उस कारण पति–पत्नी का जीवन जहर न बन जाय जीना दुर्भर न हो जाय एव इस प्रकार एक सामाजिक प्रदूषण खडा न हो जाय इसलिए भारत देश की एक सामाजिक सस्कृति थी कि

सादी के बाद पत्नी प्रसूति या किसी प्रसग के बहाने मायके चली जाती

हसा । तू झील

थी अर्थात् हर वर्ष करीबन दो–तीन महीने वह अपने पीयर में रह आती। पहाड से दूर हटे नहीं कि उसकी सुदरता पुन भासित होने लगती है और उसका ऊबड–खाबडपन दिखना बद ।

पत्नी का निरतर सहवास बना रहता है तो भूलों को देखना और उन्हे नोंध करने का सिलसिला जारी ही रहेगा एक प्रकार की आदत बन जायेगी ऐसी आदत पड जाय और भूलें घोंट–पीस कर घट्ट बन असह्य हो जाय उसके पूर्व ही पत्नी दो–तीन महीनों के लिए आखों से ओझल रहती है

भूलें दिखनी बंध... गुण दिखने शुरू...

जब वस्तु या व्यक्ति का अभाव होता है तब ही उसकी उपयोगिता ख्याल आती है हवा चल रही है सो चल रही है दिनभर श्वास चल रहा है सो चल रहा है कोई ध्यान ही नहीं देता मगर ज्योंहि हवा बध 'पखा लाओ' की चीख चिल्लाहट शुरू हो जाती है श्वास लेना बध हो जाता है त्योंहि आक्सीजन के सीलेन्डर की माग बढ जाती है

पत्नी मायके जाती है और उसकी उपयोगिता की लिस्ट तैयार हो जाती है जब पत्नी घरपर थी तब कितना–कितना गृहकार्य करती थी अपनी कितनी सार सभाल लेती थी अपने लिये कितनी सुविधायें खडी करती थी इत्यादि ख्याल आता है ।

अपने नजदीक में रहनेवाला एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं होता है जिसने आपके लिए तन–मन या धन का बलिदान देकर छोटा बडा आप पर उपकार न किया हो ।

घडी का छोटे–से छोटा अवयव भी उसके चालू रखने में अपना वक्त रखता क भी योगदान गिना जाता है अतएव उसकी भी हिफाजत की जाती है। त्नीरू पर्वत से दूर हुए कि उसकी उपयोगिता की सुन्दरता पुन मोहने ी । ज्यो ज्यों ये ख्याल आते जाते हैं त्यों–त्यों उसके प्रति पुन प्रेम–आदर ावना जागृत होने लगती है । भूलों को बारबार देखने से पत्नी से ऊब गया "ओफ् । मुझे यह कितनी परेशान करती है मुझे इसकी कतई जरूरत ी है" ऐसे कई विचार सहवास के दौरान जिस व्यक्ति को आये हो वही रु "नहीं नहीं मुझे इस पत्नी की आवश्यकता जरूर है इन–इन कामों में उसके बिना मेरे कामकाज बिलकुल ठप्प है या बिगडे बिना नहीं रहते" इस बात को दिल से स्वीकारने लगता है ।

इस तरह उपकार को जानने से और आवश्यकता को दृष्टिपथ पर लाने से वह सोचने के लिये मजबूर हो जाता है कि → अरे ! मैं आज दिन तक पत्नी को बिल्कुल निकम्मी मान रहा था, वह मान्यता अत्यत गलत थी । हम हमेशा भूलों को देख-देख कर किसी आवेशान्धता से पत्नी को घर से निकाल दी होती तो ? ऊफ् ! मेरी आत्मा ही मुझे इस अक्षम्य अपराध के बदल माफ नहीं करती । अच्छा हुआ, मैंने आवेश में ऐसा-वैसा कुछ नहीं किया । ठीक है, अब वापिस जब श्रीमतीजी पधारेगी, तब कदाचित् कोई भूल दिख भी जाय तो भी मै किसी आवेश के परवश न बन जाऊँ या आवेश में कुछ अकरणीय नहीं कर बैठूँ इसका ध्यान रखना पडेगा और तदर्थ मुझे मेरे मन को थोडा-सा उदार बनाना पडेगा ।

पत्नी के प्रति पुन सद्भावयुक्त हुआ पति पत्नी की आवश्यकता को अल्पकालीन वियोग के दरम्यान विवेक-तराजू पर तोलने लगता है और उसकी विचारधारा में सहिष्णुता का सूत्रपात होता है । अत एव जब पत्नी पुन अपने मायके से लौटती है तब पति के दिल में सद्भाव और प्रेम की मूर्ति को वह करवट लेती हुई पाती है । पति अब पहिले की तरह उसकी भूलों को बार बार कोसता नहीं है टोकता नहीं है । अत वह दीवार सघन नहीं बनती ।

आदत बुरी बलाय !

यद्यपि पति अपनी आदत से लाचार होता है अत एकदम तो अपनी आदत से तलाक नहीं ले पाता अपने आप पर पूरा कट्रोल नहीं रख सकता है, अत कम ज्यादा मात्रा में पूर्व की भूलों को याद करता कराता है गडे हुए मुर्दों को उखाडे बिना नहीं रहता परतु वह असह्य बन जाय वैसी कक्षा मे पहुँचने के लिये उसे पूर्वापेक्षया काफी समय चाहिये और उतने समय तक उन भूलों का पुनरावर्तन हो उसके पहिले तो भारतीय सस्कृति की रीति के अनुसार पत्नी पीहर पहुँच चुकी होती है ।

इस बीच पति के दिल में पत्नी की ओर से जो भी छोटे-बडे आघात लगे हो उनकी मरहम-पट्टी हो जाती और घावों पर रूझ भी आ जाता । इसी तरह Vice Versa. पत्नी को भी पति से दूर रहने का ऐसा ही फायदा हो जाता । दूर रहने से पति का प्रेम सोहार्द आदि गुणों को देखने का चान्स मिल जाता जिससे उसके दिल की भी मरहमपट्टी हो जाती ।

इसी तरह घर में रहनेवाले अन्य सभ्यों की भी मानसिक स्थिति सतुलित

हसा । तू झील

रहती । सास–ससुर, ननद–देवरानी–जेठानी आदि के दिल में जो भी कटुता पैदा हो गई हो सक्लेशों का उफान आया हो वह सब ठडा पड जाता है । जिससे पत्नी चैन और स्वमान से सभर जीवन जी सकें, वैसी शक्यता खडी रहती है फलत उसके जीवन में जहर घुलने की बजा प्रेम का अमृत झरने लगता है । 'Life is worth living' की भावना उसके दिलमें अपना स्थान जमा लेती है । आत्महत्या की सभावित दुर्घटनाओं से उसका बचाव हो जाता है । वर्ना कई ट्रेन की पटरियों पर कई अग्नि की धधकती ज्वालाओं में कई जहरीली दवाओंको पीकर अपना अमूल्यजीवन मरण के शरण कर देती है उसका पाप किसके सिर पर? सच, जिन्होंने उसका जीना दुर्बर कर दिया जिन्होंने उसे अपनापन नही बताया जिन्होने बहू की भूलों को सुधारने की बजाय कसने में और Broadcasting करने में ही अपनी इतिश्री मानी ऐसे पति–सास–ननदआदि के सिर पर भी क्या नहीं है वह पाप ?

भारतीय सस्कृति और मर्यादाके इस पालन से और भी एक सुदर लाभ होता इच्छा–अनिच्छा से भी २–३ महीनों का ब्रह्मचर्य का पालन हो जाता और शरीर का स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहता ।

आज यह सस्कृति लगभग लुप्त–सी हो चुकी है । अत भूलों को देख–देख कर सुनाने का एक बार अशुभारम्भ हुआ नहीं कि निरतर कटुता बढती ही जाती है To No End । एक साथ दो–तीन महीनों का विरह हो वैसा लगभग होता नहीं है । अत उस व्यक्ति के गुणो को देखने का चान्स नहीं मिल पाता है चूकि जब तक वस्तु–व्यक्ति नजर समक्ष होता है तब तक उसके गुण–उसका कार्य–उसकी आवश्यकता आदि लगभग किसी व्यक्ति या समाज के ख्याल में नहीं । शायर ने कहा भी है–

है ; रग लाती है सुखने के बाद, दोस्ती याद आती है बिछुडने के बाद।

तो ज्यादातर आदमी मर जाता है तब उसके गुणगान किये जाते है।
विछुड जाता है तब ही उसकी महत्ता जगवालोंको खयालमें आती है।

चश्मा और ऑख

चश्मा ऑखो पर न हो तब उसकी आवश्यकता ध्यान में आती है । ऑखों जब तक फ्रेम लटक रही होती है तब तक लगभग उस चश्मे का अस्तित्व बहुधा लोगों को सवेदन का विषय बन नहीं पाता है ।

अतएव एक सामाजिक चितक ने वर्करों को–नोकरों को एक सुनहरी सी

सलाह दी है → आपको सालाना ३-१० छुट्टियाँ तो ले ही लेनी जिससे सेठजी को आपकी आवश्यकता याद आती रहे आपका अभाव उन्हे अखरता रहे ।

पति-पत्नी के बीच बनते-बिगडते रिश्तों को सुदृढ बनने में सहायक वैसी वह प्राचीन सस्कृति आज अस्तित्व विहीनसी बन गई है अत कटुता निरंतर बढती ही जाती है । और दो-चार वर्षो में उसकी मात्रा इस हद तक बढ जाती है कि साथ में रहते हुए भी एक दूसरे को जानी दुश्मन की तरह घूरने लगते है । अथवा कल्पना भी न कर सके, वैसी कोई दुर्घटना बन जाती है ।

मतलब कि प्रस्थापित सबन्धों के बीच दरार पडने वाली है ऐसा भासित होने लगे, तब सबन्धों में कटुता का जहर पैदा होकर वैरभाव खडे हो जाय उससे पूर्व ही बेहत्तर है आप कुछ समय तक उस व्यक्ति से कुछ दिनों के लिए दूर होकर दिल के घावों पर रूझ आ जाय उसकी प्रतीक्षा कीजिए ।

"उस व्यक्ति के साथ ही रहूँगा और ज्यादा प्रेम-वात्सल्य दिखाकर, समझौता कर के सबधों को सुधार लूगा" यह गणित क्वचित् ही सही पडता है । ज्यादातर तो यह जुआ महगा पड जाता है और आखिर सबन्ध टूट कर ही रहते है ।

'Being Married is easy but staying married is very hard' शादी कर लेनी सरल है मगर शादीसुदा रहना बडा ही कठिन है । चूकि सबन्ध टूट जाय, वैसी एक बार नहीं, हजारों और लाखो बार परिस्थितियाँ खडी हो ही जाती है ।

'खिडकी बद कर दे, हवा आ रही है' पति ने झल्लाकर कहा –

'खिडकी खुल्ली रखिये शुद्ध हवा मुझे चाहिये'– पत्नी ने बात बीच में ही काट दी ।

काफी तू-तू-मैं-मैं के बाद, बरामदे की खिडकी खुल्ली रखने का फैसला किया गया जिससे दोनो को कोई प्रोब्लेम न हो ।

वैसे एक नहीं, कई प्रसग आते है जीवन में, जिनमें ठडे कलेजे से तुरत हल निकल सकते है, मगर व्यक्ति उन तरीकों को अपनाने की बजा, टाटा की भट्ठी की तरह तापमान में चढे हुए दिमाग से काम लेना चाहता है । बडा ही अशक्य काम है । बडी मुसीबत है ।

ऐसे अवसरों पर .

एक काम कीजिये जो भी प्रोबलेम खडी हो जाय उसके एक नहीं, हजार सोल्युशन्स तैयार कर लीजिये । उनमें आप देखेंगे कई ऐसे सोल्युशन्स् है जिनमें सिर्फ आपको ही फायदा है । कई ऐसे है जिनमें सिर्फ सामनेवाली व्यक्ति को

हसा ।

फायदा है । और कई ऐसे है जिनमें आप दोनों को फायदा है । तीसरी राह अपनाईये आक्षेपात्मक भाषा को छोड दीजिये और आज्ञा की बजाय प्रश्नात्मक वाक्योंको प्रयोग में लाईये काम फतेह है Forget the past गडें मुर्दो को उखाडने की बालिश चेष्टा को छोड दीजिये जीवन की कटुता काफी मात्रा में नष्ट हो जायेगी । **डॉ एरन बेंक** की उपर्युक्त बातें मनोवैज्ञानिक Base पर उट्टकित है।

खैर, जो भी हो उपर्युक्त उपाय की तरह बहुधा सफल होनेवाला एक सुदर उपाय है यह कि ➛ कुछ समय का विरहकाल खडा किया जाय । जिससे सबन्धों की कटुता dissolve हो जाय ।

यदि जुदा होने की शक्यता न हो तो सामनेवाले को समझाने की कोशिश करने की बजाय अपने दिल में ही "मेरे जीवन में उस व्यक्ति का कितना बडा महत्त्वपूर्ण योगदान है?" "इस बात को बारबार याद करने से अवश्यमेव लाभ हो सकता है। जिस बात में उसकी खामी हो उसको आगे कर के उसकी भूलों को अलपने की बजाय उस व्यक्ति में रही हुई अनगिनत खुबियों को आगे कर के उसके गुणों की यदि प्रशसा करते रहे उस पर भी अपूर्व सद्भाव को कायम रख कर, काम चलाते रहना इससे बड़ी बुद्धिमत्ता और कौन-सी हो सकती है? *'कम खाना, गम खाना और नम जाना'* में भी लाख रुपये की सलाह यह भी तो है 'गम खाना ।' इस बुद्धिमत्ता पर जीनेवाला व्यक्ति कभी पछताता नहीं है ।

एक बार एक दैनिक पत्र में अब्राहम लिकन के जीवन की एक घटना पढ़ने में आई

लिकन.. द मेन ऑफ अमेरीका

अब्राहम लिकन एक गरीब वकील था । मध्यम वर्ग के लोग उसके पास आते और वह उनके लिये केस लडता । गलत केसों को वह छूता नहीं था। वकालत ही उनको रोजी-रोटी दिलाती थी फिंर भी वे अपने आपको नव गिनते थे फिर वकील । अतएव जब कोई छोटे-बडे झगडों की बात दोनों व्यक्तियों का अरस-परस समाधान करा देते । इसमें यद्यपि उनकी -रोटी टूटती थी मगर वे बेफिक्र रहते । मानवता के नाते उन्होंने जो काम लगन से किया उसके लिये वे पछताते नहीं थे । लिकन महाशय एक टट्टू रखा करते थे । उस पर वे पुस्तकें लाद देते और एक गॉव से दूसरे गॉव जाते । टट्टू सामान्य जाति का था और थोडा-सा जिद्दी भी था । कभी-कभार गधे की तरह चलने का साफ-साफ इन्कार भी कर देता । फिर भी काम चल ही जाता।

एक बार रास्ते में एक किसान मिला। लिंकन ने अभिनदन किया → हल्लो। अंकल टॉमी । आनद में तो है? अरे अब्राहम ! तुम्हारे पास ही मैं आ रहा था "क्यों अंकल। मेरी ऐसी कौन-सी जरूरत पडी? "देखो न, कोर्ट में एक केस करना है। मैं जिस खेत में खेती करता हूँ वहाँ का पडोसी अभी-अभी मुझे बहुत परेशान कर रहा है । मैं ने निश्चय किया है कि जमीन-जायदाद बेचनी भी पडे तो भी फिक्र नही एक बार उस बच्चे को लोहे के चने चबवा दूँ आसमान में तारे बता दूँ कि बेटमजी। जो हम से टकरायेगा वह मिट्टी में मिल जायेगा । "किसान ने पूरे जोश में अपने हृदय का उबाल उगल दिया। लिंकन ने कहा →डीयर अंकल। आज दिन तक आप दोनों के बीच कोई तकरार झगडा नही हुआ बात सच है?

हॉ

तो उस दृष्टि से उसे एक अच्छा पडोसी कहा जा सकता है न ?

"अच्छा तो नहीं, परतु ठीक ।"

"फिर भी आप दोनों एक दूसरे के पडोसी बन कर वर्षो से रह रहे है सच?

"हाँ करीबन पद्रह साल तो हो गये"

"उन पद्रह सालों में कई अच्छे-बूरे प्रसग बने होगे ?

"अरे भैया, यह तो ससार है चलता है"

"उन प्रसगों में आप दोनों एक दूसरे की सहायता करते थे है न ?"

देखो लिंकन । वह तो पडौसी की फर्ज है न ।

"तो देखिये अंकल । यह मेरा जो टट्टू है वह कोई बहुत ऊँची जाति का नहीं है कुछ जिद्दी भी है, कदाचित् मैं इससे भी सुदर दूसरा टट्टू खरीद कर सकता हूँ परतु मैं इसकी खूबियोसे परिचित हूँ इसकी खामियोंसे मैं भलीभाति परिचित भी हूँ और आदी भी हो चुका हूँ इससे अपना काम कैसे निकलवाना उन तरीकों से भी मै चिरपरिचित हो चुका हूँ अत मेरा काम भी कहीं रूका नहीं पडा रहता।

दूसरा टट्टू लाऊँगा तो कदाचित् वह इससे अच्छा भी मिले फिर भी उसमें यह नहीं तो वह कुछ-न-कुछ खामियॉ-कसर अवश्य रहेगी ही . चूँकि हर एक टट्टू में कुछ-न-कुछ खामी तो होगी ही । मुझे फिर से बारहखडी सिखनी पडेगी अर्थात् उस नये टट्टू की नये सिरे से खामी और खूबी से परिचित होना पडेगा उससे कैसे काम निकलवाना, इस कला से भी माहिर होना पडेगा . अत मुझे ऐसा महसूस होता है कि Old is Gold जो है सो सुदर इसी से काम चला लेना उसमें मेरा और इस टट्टू का हित है "

हसा । तू झील

लिकन का तीर निशाने पर लगा । किसान लिकन का आशय समझ गया खेत–खलिहान को लेकर पडोसी से लड–झगडने में सिर–खपाने की बजा उससे सधि करना उसकी छोटी–मोटी भूलों को निभा लेना, उसीमें मेरा भला है एव शाति और समाधि भी उसीमें है यह आशय उसके हृदय को छू गया ।

डायवोर्स–तलाक

भारत सस्कृति, धर्म एव मर्यादा प्रधान देश है, अत तलाक divorce जैसी चीज बच्चों का खेल नहीं माना जाता है, परतु विदेश में 'He for the third time and she for the fourth' यह आम बात है । छोटी–छोटी बातों को लेकर तलाक लेनेवालों की वहॉ कमी नहीं है दुकाल नहीं है चर्च में शादी कर के तुरत ही कोर्ट में डायवोर्स के लिये अर्जी भरनेवाले युगल को पूछने से पता चला कि "पत्नी ने पति से Signature बडा कर दिया, इसलिये तलाक चाहिये।"

एक विदेशी एक्ट्रेस

फोरेन की एक Actress ने न जाने कितनी बार डायवोर्स लिये और शादी की आश्चर्य की बात तो यह थी कि उसने एक ही व्यक्तिके साथ पॉच–पॉच बार शादी की ।। चूकि हर मनुष्य में कुछ–न–कुछ भूल तो अवश्यमेव दिखेगी ही तब उसे लगता कि इससे तो वो ठीक था वापिस वो ही चक्कर। पुन तलाक शादी–पुन तलाक–शादी आखिर उस एक्ट्रेस ने आत्महत्या कर ली। चूकि उसे ऐसा कोई आदमी नहीं मिला जिसमें कोई भूल ही नहीं हो और वह भूल देखने की इतनी आदी हो चुकी थी और इतनी ही असहिष्णु हो चुकी थी कि वह तुरत ही तलाक ले लेती । उसे इस रीति को अपनाने से शातिके बदले अशातिकी आग मिली सुख के बदले दु ख की असह्य ज्वालायें मिली काश। वह अपनी दृष्टि ही सुधार लेती।। मन को यदि वह मना लेती कि *If I am Ok everything and ne is Ok* यदि मैं ठीक हूँ मेरी दृष्टि ठीक है तो दुनिया सारी ठीक है ।

बडा ही आश्चर्य है

जिस व्यक्ति के साथ सबध से जुड कर काफी समय बीत चुका है और सबध के कारण हमें काफी आनद भी प्राप्त हुआ है। उसी व्यक्ति के साथ छोटी–सी बात को लेकर मन खट्टा हो गया और हम उस व्यक्ति की भूलों को देखने लगे । जो व्यक्ति पहिले गुणियल लगता था वो ही व्यक्ति अब दोष से भरा हुआ लगता है । खूबियों से भरा हुआ वो ही व्यक्ति खामियों से भरा हुआ नजर आता है । मन भी कमाल का जादू करता है जो दो सेकड के पहिले

खुशबू से मघमघायमान लग रही थी, वो ही अब बदबूदार लग रही है ।

हमें खामियाँ नजर आने लगती है और हम उस व्यक्ति से सबध विच्छेद करने के लिये तैयार हो जाते है ।

अब ठहरिये..

चित्त को थोडा स्वस्थ कीजिये *"सोच विचारे जो करे, वो फिर ना पछताय"* कदाचित् अपनी कल्पनाएँ सच भी हो और उस व्यक्ति में अमुक खामियाँ हो भी सही फिर भी इसका मतलब यह तो कतई नहीं निकल सकता कि मात्र हम फरियाद ही किया करे या पलायनवाद को लेकर उससे दूर भागते फिरे ?

जैसे उसकी अमुक खामियों को लेकर हमें किसी हद तक सहना पडा नुकसान उठाना पडा वैसे ही उसकी खूबियों से हमें कुछ-न-कुछ लाभ भी तो अवश्य हुआ है । अमुक रीति से वह हमारा नुकसानकर्ता है तो अमुक अपेक्षा से वह हमारा लाभकर्ता भी तो है । परतु एक बार मन में एक आग्रह बध गया फिर उस व्यक्ति के लिये चाहे कितने भी विचार क्यों न करे हमारे विचार खामीदर्शन के उसी पूर्वग्रह की लाईन पर दौडते है ।

टाइल्स के ऊपर एक बार पानीको बहाया जाय उसे जो रेला चलता है वह रेला सूखने के बाद भी टाइल्स के उपर एक ऐसी असर छोड जाता है जिससे बाद में जब कभी पानी उडेला जाता है तब वह पूर्व रेला की रेखाओं पर ही अपने आप को फैलाता है । पानी का बहाव उसी झुकाव में ढलता है।

उसी प्रकार एक बार बधा हुआ पूर्वग्रह मानसिक पटल पर ऐसी एक सस्काररेखा अकित कर देता है कि तदनतर जब कभी कोई व्यक्ति अन्य व्यक्ति के विषय में विचारसरणी चलाता है तब उसमें पूर्वग्रह का प्रतिबिब स्पष्ट रहता है चूकि वह उन्हीं सस्कारों की अकित रेखाओं पर दौड रहा होता है ।

जमीन के ऊपर एक बार रेल्वे ट्रेक बिछा दी जाय फिर चाहे हजारों किलोमीटर क्यों न हो जाय, ट्रेन एक इच भी ट्रेक से इधर-उधर नहीं होगी ।

उसी तरह एक बार मनोभूमि पर पूर्वग्रह की एक ट्रेक खडी हो गई फिर चाहे घटों तक आप विचार क्यों न करेगे आप पायेंगे कि आपकी विचारधारा इस पूर्वग्रह के ट्रेक से एक इच भी इधर-उधर नहीं है ।

इस एक तरफी बेरोकटोक चल रही मानसिक विचारधारा को रोक कर कुछ हम मध्यस्थ बने तो हमारी दृष्टि बदल जायेगी फिर हमें सामनेवाला व्यक्ति इतना न तो खराब ही लगेगा न इतना खामियों से भरा हुआ ही लगेगा

हसा । तू झील

उसकी खूबियाँ भी हमारे समक्ष आने लगेगी और हमें वह व्यक्ति खूबसूरत लगेगा द्वेषपात्र नहीं लगेगा बल्कि अपार प्रेम और मैत्री का अधिकारी लगेगा ।

खूबियाँ देखने लगे तो खामियाँ देखने का कार्यक्रम अपने आप बंद हो जायेगा खामियाँ दिखनी बंद होगी तो सहज है कि स्थापित प्रेम–वात्सल्य के संबंध अकबंद रहेगे, वर्ना वे भी टूट कर चूर–चूर हो जाते हैं और शत्रुता के भाव पैदा हो जाते हैं । एक के साथ भी हम मैत्री संबंध को कर नहीं पाये या प्रस्थापित संबंधों को टिका नहीं पाये तो सर्वजीवों के साथ मैत्री सबन्ध कितना दुष्कर हो जाएगा?

याद रखिये... *"मैत्री भावना को अखंडित रखने के लिये हमें एक महत्त्वपूर्ण काम करना पडेगा अन्य की भूलों को भूल जाना ।"* यह कोई छोटा काम नहीं है । सत्त्व की पराकाष्ठा को छुए बिना यह सिद्धि हासिल नहीं की जा सकती। चूंकि अन्य की भूल भूलने योग्य है फिर भी उसे भूलना यह बहुत कठिन काम है । कायर लोग नहीं इसे तो शौर्यवंत ही कर सकते हैं ।

नेपोलियन भी कायर

सेंट हेलिना के टापू पर कैद किया गया खूखार शहशाह नेपोलियन बोनापार्ट को. जब उसके दोस्तों ने कहा–

"जब तक तू नेल्सन को शत्रु मान रहा है, जब तक तू उसे माफ नहीं करता तब तक तुम्हारी प्रार्थना में दम नहीं आयेगा एकबार तू उसे माफ कर दे तू उसे भूल जा और फिर देख तेरी प्रार्थना कैसी होती है ?"

धरती को धुजानेवाले उस नेपोलियन ने अपनी कायरता को बताते हुए उस वक्त क्या कहा था पता है? "I can forgive him, but I can't forget him उसे माफ जरूर कर सकता हूँ मगर उसे भूल तो कभी नहीं सकूँगा" जिसकी में Impossible शब्द नहीं था वैसे उस नेपोलियन के लिये भी सामनेवाले भूल को भूल जाना कितना अशक्य था सचमुच, वह उसके लिये एक possible बीना थी ॥

अत पराक्रम तो जरूर चाहियेगा अरे, बहुत चाहियेगा तभी तो आनंद के अफाट दरिये में मजा मानने की मस्ती पैदा होगी । जाज्वल्यमान भव्य ईनाम पराक्रम बिना थोडे ही मिलते है?

अपकारी पर क्रोध करना है, तो क्रोध पर ही करो न।
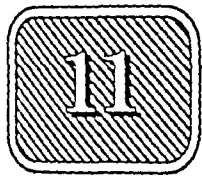
कठिनतम वाक्य-मेरी भूल हुई

मदरसे में इस्पेक्शन चल रहा था । इस्पेक्टर साहब व्याकरण के विषय में प्रश्न पूछ रहे थे । एक विद्यार्थी को उन्होने खडा किया और पूछा → 'बोल, कर्तरि प्रयोग किसे कहते है? और कर्मणि प्रयोग किसे कहते है ?"

विद्यार्थी चट था, होशियार था और वाचाल था । उसने तुरत जवाब दिया- *'सर! जिस कार्य से कुछ अपने को जश मिले अपनी वाह-वाह होगी ऐसा लगता हो वैसे कार्यो के निवेदन के लिये मनुष्य ज्यादातर जिस साहजिक वाक्यप्रयोग को अपनाता है वह* ***कर्तरि प्रयोग*** *होता है, और इससे विपरीत जब व्यक्ति से कोई अपराध हो जाता है तब उसका निवेदन वह जिस साहजिक वाक्यप्रयोग से करता है उसे* ***कर्मणि प्रयोग*** *कहते है ।"*

विद्यार्थी ने मनुष्य मन का एक सहज विश्लेषण सामान्य और सीमित शब्दों में कितने सुदर ढग से प्रस्तुत कर दिया ?

"इस वस्त्र की सिलाई मैं ने की है" यह चित्र मैं ने बनाया है" "हा, आपकी प्रशसा मैं ने की थी" इत्यादि बातों में जिस सहजता से आदमी कर्तरि प्रयोग करता है, उतनी ही सहजता "यह वस्त्र मैं ने फाडा है" "यह चित्र मैं ने बिगाडा है" "हा, आपकी निदा मैंने की थी" ऐसे भूल के निवेदन के अवसरों पर देखने में नही आती ।

स्वय ने कुछ भूल की है और अब उसका एकरार करना है उस वक्त आदमी ज्यादातर कर्मणि प्रयोग जिन्दाबाद ही करता है ।

"यह वस्त्र मेरे से फट गया" "यह चित्र मेरे से बिगड गया" हॉ, आपकी निदा शायद मुझ से हो गई" ऐसे ही वचनप्रयोग मुह से निकलते है ।

अपनी बेपरवाहीसे ही कप फोड दिया हो, मगर आदमी यह ही बोलेगा- "मैं से कप फूट गया ।" "मैंने कप फोड दिया" ऐसे वचनों को उच्चारने के लिये मानो उसकी जीभ तैयार ही नहीं होती । हॉ कुछ बेशर्मी आ गई हो अथवा [illegible] सिर पर भूत की तरह सवार हो जाय उससे उसे भूल की है ऐसा

हसा । तू झील

कुछ नहीं लगता हो, तदुपरात कोई बहुत बडा गढ जीत लिया हो ऐसा जब उन बेशर्म को लगे तब "हाँ, मैंने ही तुम्हारी निदा की है बोलो, तुम क्या बिगाड सकते हो मेरा?" इत्यादि कर्तरि प्रयोग आदमी कर लेता है मगर जहाँ मैंने कुछ भूल की है ऐसा अत करण से लगता है अथवा तदर्थ मन में कुछ अफसोस-सा लगता हो तब प्राय कर्मणि प्रयोग ही होता है ।

कर्तरि प्रयोग *मैंने भूल की है ।*

कर्मणि प्रयोग *मेरे से भूल हो गई ।*

कमाल है भूल स्वय करता है और कहता है, → "मेरे से हो गई मैंने नहीं की ।" मानो किसी ने भूल करने के लिये जबरदस्ती की हो।

इसका कारण स्पष्ट है कि 'मैंने कप फोड़ दिया' ऐसा बोलने से अपनी भूल बडी प्रतीत होती है, जबकि 'मेरे से कप फूट गया' ऐसा बोलने में अपनी भूल छोटी प्रतीत होती है और क्षन्तव्य भी । कुछ मानसिक समाधान-राहत भी अनुभवी जाती है

भूल का स्वीकार कर लेने की हिम्मत रखनेवाला आदमी की भी यह हिम्मत नहीं होती कि वह अपनी भूल बडी मानें 'मेरी भूल बडी है' ऐसा अहसास बहुधा आदमी को होता ही नहीं अपनी भूल तो हमेशा छोटी ही लगती है ।

अपनी भूल छोटी लगती है

मित्र को कैद हो गई जानकर उसका खास मित्र कैद में मुलाकात लेने गया "दोस्त । तुझे जेल कैसे हुई?"

"अरे यार । क्या कहूँ? एक छोटी-सी भूल हो गई और सरकार ने जेल की सजा ठोक दी ।।"

"छोटी-सी भूल?"

"हाँ हाँ छोटी भूल, और क्या।"

"कौन-सी छोटी भूल थी?

"देख यार, क्या कहूँ तुझे? बैंक में से ऑफिस के लाख रुपये उठाये और उन्हे ऑफिस में ले जाने के बदले पास में आये हुए मेरे घर पर लेके चला गया। और उस छोटी-सी भूल के बदले सरकार ने कैद की सजा सुना दी कैसा कलियुग आया है?"

अनादि की चाल

हाँ, यह भी अनादि की चाल ही है कि जीव को अपनी [illegible]

राई-रत्ती जितनी लगती है और अन्य की राई के दाने जैसी भूल पहाड़-सी दिखती है। अन्य की रज-सी भूल को गज मानना और स्वय की गज-सी भूल [illegible] रज मानना, इसमें जीव माहिर है।

तभी तो जब कभी दूसरों से भूल होती है तब 'तुमने कप फोड़ दिया-तोड़ दिया' ऐसा कर्तरि प्रयोग आदमी करता है, न कि 'तुम से कप फूट गया [illegible] टूट गया' ऐसा कर्मणि प्रयोग।

यही कारण है कि उसे अपनी भूल नेगलेक्ट Neglect करने जैसी लगती है और अन्य की भूल वैसी नहीं लगती है। अतएव अपनी भूल के वक्त मनुष्य बचाव की पूरी कोशिश करता है और अन्य की भूल के वक्त भूल कबुलाने की तनतोड मेहनत करता है। उस वक्त उसे यह महसूस नहीं होता कि जैसे मेरी भूल मुझे नेग्लीजिबल लगती है वैसे ही उसे भी अपनी भूल नेग्लीजिबल लगती ही होगी न। अत मैं ऐसा प्रयास क्यों करूँ? अथवा ऐसा प्रयास मुझे क्यों करना चाहिये? वरना मैं भूल कबुलाने की कोशिश करता रहूँगा और वह अपना बचाव करता रहेगा उससे आखिर हाथ क्या आयेगा? सघर्ष सक्लेश और झगड़ा के सिवाय और कुछ भी नहीं।

शत्रुता से बचने के लिये इस अनादि की चाल को छोड़नी ही पड़ेगी। उसे अपने जीवन से सर्वथा तिलाञ्जलि देनी ही पड़ेगी। अपनी भूल को छोटी नहीं बडी माननी चाहिये, नेग्लीजिबल नहीं, परतु रिमार्केबल माननी चाहिये। अत अपना बचाव करने की बजाय, तुरत भूल का स्वीकार कर लेना चाहिये और दूसरे की भूल को देख कर इससे विपरीत मान्यतावाला बनना अर्थात् सामनेवाले को भूल कबुलाने की हठ नहीं पकडनी चाहिये। शत्रुता के फैलाव को अटका कर मीठे सबन्धों को बढाने की यह एक अमोघ चाबी है। यह दुष्कर ही नहीं, अत्यत दुष्कर काम है चूकि अपनी भूलको स्वीकारने में अहकारको तोड़ना पडता है। काया को तोडना-मोडना-सूखाना सरल है परतु अहवृत्ति-मद मानको तोडना-सूखाना बडा ही कठिन काम है।

भाषाशास्त्रियों का शम्भुमेला

एक बार विविध भाषाशास्त्रियों का एक जगह पर मिलन हुआ। तज्ज्ञों का एक विशाल शम्भुमेला था, वहाँ प्रश्न निकला . 'हरेक भाषा में कठिन से कठिनतम वाक्य कोन-सा है?' तुरत ही एक सम्माननीय प्रौढ विद्वान ने खडे हो कर कहा- 'माननीय सुज्ञो। मेरी दृष्टिसे मनुष्यको हरेक भाषामें जिसे बोलने में अत्यत कठिनाई

महसूस होती है माथे पर बल पडता है वह कठिनतम वाक्य है **मेरी भूल हो गई** । हर एक भाषा में जिसका अत्यत कम प्रयोग है वह वाक्य है मेरी भूल हो गई इससे इस वाक्य की कठिनता आसानी से समझी जा सकती है ।

इस प्रकार अपनी भूल को स्वीकार कर लेना, यह बहुत बडा दुष्कर कार्य है । अतएव जो व्यक्ति अपनी भूल का स्वीकार कर लेता है, वह महान बनता है । एव इसी कारण से अन्य जीवो को उसके प्रति एक प्रकार की आकर्षण व सद्भाव की लगनी खडी होती है । बहुत बार 'मेरी भूल हो गई' इस वाक्य का चमत्कार भी देखने को मिलता है → कट्टर विरोधी भी अपनी शत्रुता को छोड देते है ।

कहीं एक किस्सा पढने में आया था किस्सा जानदार है ।

भूलका स्वीकार

किसी एक शहर के बाहर रमणीय विशाल उद्यान-पार्क था। वहाँ का वातावरण बडा ही खुश्नुमा था । शाम के वक्त लोग टहलने के लिये आते थे एव शारीरिक तदुरस्ती और मानसिक प्रफुल्लता से लाभान्वित होते। बाकि के समय वहाँ इक्के-दुक्के लोग ही नजर आते थे।

एक महाशय अपना पालतू शिकारी कुत्ता लेकर मोर्निंग वाक के लिये उस बाग में हर दिन आया करते थे ।

यद्यपि उस पार्क में चेइन-पट्टा बाधे बिना कुत्तों को घूमाने का सख्त प्रतिबंध था, फिर भी महाशय कुत्ते को बाधे बिना ही साथ लेकर घूमते थे। चूंकि लोगों की चहलपहल लगभग रहती नहीं ।

एक बार पोलिसमेन उन्हे देख गया । "क्यों मिस्टर । कुत्ते को चेइन बाधे बिना ही घूमा रहे है? आखिर अपने आप को आप समझते है क्या? क्या आप [illegible]म कायदा और कानून का उल्लघन नहीं कर रहे है?"

पोलिस ने सत्तावाही स्वरों में बोलने की अपने गले की [illegible] पूरी की।

"हॉ, मैं जानता हूँ, परतु मेरा कुत्ता किसी को काटेगा, वैसा मैं मानता नहीं" सज्जन ने अपना बचाव नामदार पोलिस महाशय के सामने पेश किया ।

"आप क्या मानते हैं और क्या नहीं मानते हैं उसके साथ कानून का कोई निस्बत नहीं है । किसी भूले-बिसरे बच्चे को काट खाय तो? ठीक है, [illegible] की बार आपको छोड देता हूँ मगर यदि दूसरी बार ऐसा हुआ तो कोर्ट में [illegible] कर दूगा ।"

थोडे दिन तो सज्जन ने पोलिस की बात को ध्यान में रखी, फिर [illegible]
ही रफतार । चूकि कुत्ते को पट्टे से सख्त नफरत थी एलर्जी थी [illegible]
करने के बावजूद भी वह कुत्तेके गलेमें पट्टा डाल नहीं पाया । [illegible]
मेहनत छोड दी कुत्ते को बिना बाधे ही घूमने ले जाता ठीक पहिले [illegible]

पुन एक दिन पोलिसमहाशय ने यह देख लिया । सज्जन की [illegible]
पल दूर खडे इस कोन्स्टेबल पर पड गई । सज्जन मे दो पैसे की [illegible]
समझदार था वह । अत भागदौड करने की बजाय वह सीधा [illegible] के [illegible]
पहुँच गया । पोलिस उसे धमकाये उसके पहिले ही उस सज्जन ने [illegible]
करते हुए कहा → मै अपराधी हूँ । थोडे दिनों के पहिले ही [illegible]
दी थी । फिर भी आज मै रेडहेन्डेड पकडा गया हूँ मुझे कोई [illegible]
है, मै गुन्हेगार हूँ ।"

पोलिस ने ज्यो ही यह सुना, उसे आश्चर्य हुआ । 'अब तो [illegible]
भागने की कोशिश करेगा तो भी उसे छट्ठी का दूध याद दिला दूँगा [illegible]
कबुलात भी करवाऊँगा" ऐसे जो उसके मनसूबे थे वे सब हवाई किले-से [illegible]
रह गये । वह शात हो गया । अपराधको कबुलानेकी तरकीबें जो उसने [illegible]
थी, कुछ काम नहीं लगी न अब उसके लिये ऐसे – वैसे बोलनेके लिये भी [illegible]
अवकाश था ।

पोलिस ने कहा → 'ठीक है, आस-पास कोई न हो, उस वक्त ऐसी लालच
हो जाती है यह मैं भी समझता हूँ ।"

सज्जन ने कहा ☞ "बात सच है, मुझे भी वैसी ही लालच हो गई परतु
उसमे भी कानून का भग तो है ही ।"

सज्जन के इस कथन से पोलिस उसके प्रति ज्यादा आकृष्ट हुआ । सहानुभूतिवश
वह बोला → 'परतु ऐसा छोटा-सा कुत्ता किसीको इज्जा थोड़े ही पहुँचायेगा ?"

"फिर भी सभव है, किसी को कभी वह काट भी ले "

सज्जन ने अपनी भूल को सपूर्ण रूप से स्वीकार कर ली, कोई ननु-नच
का भाव चेहरे पर नहीं ।

खैर, आप चिता न करो, देखिये ऐसी जगह पर आप इस पिल्ले को घूमाना
जहाँ मेरी नजर न पडे । यू कहकर वह पोलिस दूसरी जगह राउण्ड़ गश्त लगाने
के लिये चला गया ।

हसा । तू झील

जनरल सायकोलॉजी

जब कोई व्यक्ति भूल करता है उस वक्त "उस भूल का हर तरह बचाव करना इन्कार करना" यह, उस व्यक्ति के लिये पक्ष बन जाता है। "येन केन प्रकारेण उस भूल की कबूलियत करवाना" यह सामनेवाले का पक्ष बन जाता है

अपराधी व्यक्ति भूल का बचाव करता है।

सामनेवाला व्यक्ति भूल को कबुलवाता है।

यह दोनों की जनरल सायकोलॉजी है।

खास मजेदार बात तो अब शुरू होती है। दोनों अपने-अपने पक्ष को खींचते हैं। विजय के लिये प्रयास करते हैं। और इसी अरणिमन्थन में से पैदा होती है संघर्ष की भीषण आग।

दोनों पक्षों में यदि जीभ का जोर हो और विवेक कमजोर हो तो फिर क्या कहना। बात का बतगड और तिल का ताड होते देर नहीं लगेगी। एक छोटी-सी बात-भूल को लेकर दोनों की रामायण-महाभारत सीरियलें कब पूरी होगी? कुछ कह नहीं सकते।

इसके बदले भूल करनेवाला व्यक्ति यदि स्वभूल का स्वीकार कर लेता है तो उसका मतलब हुआ "वह व्यक्ति स्वयं चलकर सामनेवाले पक्ष में जा बैठा।"

'वह व्यक्ति मेरे पक्ष का हो गया'। यह प्रतीति होते ही सामनेवाले व्यक्ति को उस अपराधी के प्रति एक प्रकार की भावुकता पैदा होती है।

एवं ज्यादातर लोग अपनी भूल का स्वीकार नहीं करते हैं यह जो वास्तविकता है उससे विपरीत इस व्यक्ति को देखकर दिमाग में एक बिजली-सी कौंध उठती है कि → "यह व्यक्ति आमलोगों से विशिष्ट है" और यही बात तुरन्त ही उसके दिल में सद्भाव का रूप धारण कर लेती है। वह व्यक्ति यह भी देखता है कि पक्ष का जो कार्य था कि 'कबुलवाना' वह तो हो गया। अतः अब सामनेवाला व्यक्ति भूल करनेवाले व्यक्ति का काम सम्हाल लेता है। वैसे भी 'वह व्यक्ति पक्ष का हो गया है' यह बात ख्याल में आते ही उस अपराधी व्यक्ति के प्रति एक प्रकार का झुकाव तो हो ही गया होता है। अतः भूल करनेवाला व्यक्ति ज्यों-ज्यों अपनी भूल को स्वीकारता जाता है त्यों-त्यों सामनेवाला व्यक्ति उस भूल का बचाव कार्य अपने सिर पर ले लेता है और अपराधी व्यक्ति का बचाव करने लगता है। अतः न कोई तू-तू मैं-मैं होती है या न कोई संघर्ष। वरन प्रेम-स्नेह और आदर बढता हुआ नजर आता है जिससे भविष्य में भूल की पुनरावृत्ति

न हो उसका ध्यान बरता जाता है ।

गम खाओ गम।

इसी तरह एक की भूल पर जब दूसरा व्यक्ति गम खा लेता है, [illegible] जानते हुए भी उसे स्वीकार कराने का कोई विशेष प्रयास जारी नहीं [illegible] है इतना ही नहीं, परतु उस विषय में कोई जिज्ञासा या आतुरता नहीं [illegible] है [illegible] कोई भूल हुई ही न हो उस प्रकार का उसका वर्ताव देखकर भूल [illegible] के दिल-दिमाग में सामनेवाले के प्रति एक प्रकार का अहोभाव उत्पन्न होता है

सास के ठीक नाक के नीचे जब किसी बहू से भूल हो जाती है [illegible] बहू की धडकने तेज हो जाती है.. उसका जी घबडाने लगता है [illegible] है अब सास कुछ कहेगी तो मैं अपना बचाव कैसे कर पाऊँगी? इस चिन्ता में वह मग्न हो जाती है । उस वक्त जानते हुए भी जब सास कुछ [illegible] या घुडकी नहीं सुनाती, तब उस भयभीत बहू के दिल में अजूबा के [illegible] बहुमान के भाव प्रकट होते हैं । 'अब गरजेगी । अब कुछ कड़क कर [illegible] या धमकाएगी।' इस विचारणा और भय की कल्पना में खोई हुई बहू जब [illegible] है कि उसकी धारणा कल्पनामात्र ही रह गई है, साकार नहीं हुई, तब वह [illegible] और कुछ निर्भय-सी बनती है और "मेरी सास गभीर है उदारदिल है [illegible] छोटी छोटी बात को लेकर धमकाने लगे, वैसी मेरी सास नही है " ऐसा सद्भाव बहू के अतर में पैदा हो जाता है अत वह सामने से सास के पाँवों में गिर कर माफी मागती है गिडगिडाते हुए अपनी भूल को स्वीकार लेती है ।

इतना हमेशा याद रखिये कि अपने आसपास रहे हुए इसान सपूर्ण रूप से नालायक नहीं है या उनमें भावुकता का दिवालियापन नहीं है ।

"सामनेवाले की भूल हुई अत कबूलियत करवानी ही" इस मनुष्यमन की सहजवृत्ति को हमने दबायी तो "भूल कबूल करना ही नहीं' इस सहजवृत्ति को सामनेवाला भी दबायेगा" अत भूल को कबुलवाने का कार्य भी हो जाता है और दुर्भावना या वैर का सवाल भी दूर हो जाता है 'आम के आम और गुठली के दाम' वाली उक्ति और साप भी न मरे और लकड़ी भी न टूटे' वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है ।

तट दो प्रवाह एक

इस प्रकार स्वभूल का तुरत स्वीकार करने से जैसे परस्पर सद्भावों की वृद्धि होती है वैसे ही सामनेवाले की भूल को पचा देने से भी वैसा ही शुभ

परिणाम आता है । तट दो है मगर सुदर परिणामों का प्रवाह एक ही है

ठीक इससे विपरीत स्वभूल का स्वीकार न करने में और औरों की भूल न पचाने में सघर्ष खडे होते है आमने-सामने तर्कबाजी आक्षेपबाजी चलती है उसमें से एक दूसरे की पाघडी उछालने की और गले मढने की अर्थहीन प्रक्रिया चलती है, यावत् अत में उसका किस महाप्रलयाकार में परिणाम आयेगा कुछ कह नहीं सकते ।

इसलिए यदि सघर्षो से बचना हो क्लेश और कंकास भरी जिदगी से तलाक लेनी हो, परस्पर स्नेह और आदर से जीना हो तो यह सूत्र अपनाइये

"स्वभूल का तुरत स्वीकार करना और औरों की भूल को कुरेदने के पीछे समय बरबाद नही करना... ."

आदरपात्र बनना है?

नवसारी के एक वृद्ध पुरुष का ख्याल है । उन्हे नियम है थाली मे जैसा और जो भी परोसा हो, खा लेना । भोजन करते वख्त या करने के बाद भी, उस विषय में एक शब्द भी मुह से नहीं निकालना ।

एक दिन की बात है । वे भोजन करने के लिये बैठे । बहू ने एक रोटी परोसी और दूसरे काम में व्यस्त हो गई । तदनतर रोटी परोसने के बदले चावल परोस दिए । श्वसूर तो खा-पी कर हाथ-मुह धो कर खडे हो गए । पीछे से बहू को ख्याल आया → "ओह । आज गजब हो गया ।" वह दौडी और श्वसुर के चरणों में गिर पडी → "पिताजी । मुझे माफ कीजिये आज मैंने भयकर भूल की है ।"

"नहीं बेटा, इसमें कौन-सी बडी भूल हो गई? वह तो कुछ काम आ गया होगा, इसलिये हो जाता है "

"परतु आपको भूखे रहना पडा न ?"

"उसकी कोई चिता मत करना शाम कहाँ नहीं आनेवाली ?"

श्वसूर दिल में कैसे बस जायेंगे ?

घर में देव की तरह आपकी पूजा हो, वैसा चाहते है क्या ?

चाय फीकी आ गई, दाल में नमक डबल गिर गया कुछ मत बोलिये ।

मनुष्य को आदरपात्र बनना है, सहवर्ती स्वजनों में प्रिय बनना है, मगर उसके किसी उपाय को आजमाने को तैयार नहीं थोडा-सा भी बलिदान देने को तैयार नहीं, यह कैसी विचित्रता ?

टी वी को बिगाडने वाले पुत्र को धमका–धमका कर [illegible]
अच्छी होनेवाली नहीं है, ऐसा जानते हुए भी पिता जब अपने [illegible]
नहीं पाता हो, "नौकर से टूटी हुई घडी तब न सुनाने जैसे [illegible]
कोई कार्यान्वित बनने वाली नहीं है" ऐसा जानते हुए भी जब सेठ [illegible]
को काबू में नहीं रख सकता हो, तो वह पिता या सेठ अत्यंत [illegible]
की अपेक्षा कैसे रख सकते है ?

मनुष्य यह नहीं जानता है कि सामान्य परिस्थितियों में अन्य के [illegible]
गये मृदु व्यवहारों से जो छाप पडती है उससे भी कई गुना गहरी [illegible]
मे खामोश रहने से पडती है । उस छाप का आयुष्य भी [illegible]

ससुराल में इतना प्यार मिले ।

बम्बई की बात है । मध्यम वर्ग का सयुक्त कुटुम्ब विधवा माँ [illegible]
चार लडके और उनका पूरा परिवार कुल मिलाकर घर मे सत्रह [illegible]
छोटे–छोटे तीन रूम और कीचन यह उस ब्लोक मे व्यवस्था । [illegible]
और जगह कम । बडी मुसीबत हो गई, मगर निरुपाय थे, दूसरी जगह [illegible]
वैसी आय नहीं थी ।

चार भाइयों में से तीसरा भाई इजिनीयर था । बडी कंपनी मे नौकरी मिल
गई । समय बीतता गया, कपनी वालों ने उसकी तरक्की की । उसका ग्रेड [illegible]
गया । अत उसे कपनी की ओर से एक रूम और कीचन के सेल्फ कन्टेइन्ड
ब्लोक की व्यवस्था दी गई । उसने अपनी पत्नी से बात की → 'चलो वहाँ
रहने चलें ।' पत्नी ने साफ–साफ इन्कार कर दिया ।

'परतु इस घर मे कितनी भीड रहती है और अपार दुविधाएँ भी अपन
वहाँ रहने के लिये जायेंगे तो हमें भी सुविधा होगी और भाइयों को भी 'ग्रेज्यएट
पत्नी के निषेध से आश्चर्यचकित पति ने जब उपरोक्त बात सुनायी तब पत्नी ने
कहा ☞ "आपकी बात सच है । भीड और अपार दुविधाएँ यहाँ रहती है ।
सारे दिन मानो पूरा घर छाती पर ही दबा रहता है फिर भी मुझे अलग रहने
के लिये जाना पसद नहीं है ।"

घर में, नींद सिवाय के अल्पकालीन अवस्थान में भी स्वय कितना सत्रस्त
हो जाता है, च्यों–म्यों च्यों–म्यों घर क्या था पूरा बाजार आदि विस्तृत ब्यौरा देकर
जब पति ने अत्यत आग्रहपूर्वक निषेध का कारण पूछा, तब पत्नी ने अपने मन
की मुराद कही

हसा । तू झील

"देखिये, यदि मॉ साथ मे आती है तो मै आऊगी वर्ना नहीं नहीं नहीं ।।"

चारों बहुओं को सास के प्रति कितना आदर-बहुमान था उससे तो सभी वाकेफ थे, और सुदर सस्कारसपन्न पत्नियॉ मिली, उसका उन्हे गौरव भी था और वे अपने आप को भाग्यशाली भी मानते थे परन्तु बहुओं को माँ के प्रति इतना आकर्षण और प्रेम था यह जानकर तो इजिनीयर अत्यत आश्चर्यचकित हुआ । इस तीव्र आकर्षण का जब उसने अपनी पत्नी से कारण पूछा तब जवाब मिला

"देखिए हम चारों बहुओं को माँ के प्रति इतना आकर्षण क्यों है? इसका स्पष्ट कारण तो मुझे भी पता नहीं है फिर भी कभी-कभार मैं विचारों में लयलीन होकर मन की ऑखों से देखती हूँ तब आश्चर्य हुआ इस घर में आकर आज मुझे दस साल बीत गये मगर कभी भी मॉ ने ताना कसा हो या मेरे-हमारे मायके पर कोई कटाक्ष-व्यग्य बाण मारा हो या मेरी-हमारी छोटी-बडी भूल को लेकर चार के बीच कोसा हो, वैसा याद नहीं आता । ऊपर से जब कोई हकीकत में मुझ-से भूल हो जाती और उससे जब देवरानी और जेठानी के बीच कुछ कहा-सुनी होने लगती तब मॉ बीच में पडकर भूल को अपने माथे ले लेती और कहती कि जो भी कुछ कहना हो सो मुझे कहो, भूल मेरी है और किसी की नहीं. यह कहते हुए मुझे उस बाबत में से मुक्त कर देती । यह सिर्फ मेरे लिये ही नहीं, हरेक बहू को लेकर उनका आचरण इसी प्रकार का है । किसी भी बहू ने भूल की और रकझक की शुरूआत होते ही माँ बीच में कूद पड़ती और येन-केन प्रकारेण उस भूल को अपने सिर मढ लेती यह जो माँ की कला है, उसने हम सभी बहुओं का दिल जीत लिया है" ।

तीन पुत्रो को छोड़कर मॉ अन्यत्र जाने के लिये तैयार न हुई, तब सचमुच भयकर तकलीफों को और दुविधाओं को सहकर उस इजिनीयर की पत्नी ने -घर में रहना पसद किया, इतना ही नहीं, परतु हँसते-हँसते उसने वहीं बिताये ।

"परस्पर मेल है तो जीवन एक खेल है,
और परस्पर जो मेल नहीं, तो जीवन एक जेल है ।"

मगर किसी का दिल न तोडो ।

किसी शायर ने अपनी उचित-अनुचित जो भी हो, खिचडीनुमा भाषा में ललकारा है ।

"मन्दिर तोड़ो, मस्जिद तोड़ो, तोडो मख्खमल का धागा

मगर किसी का दिल न तोडो, यह है घर खुदा का

यद्यपि यहाँ मन्दिर–मस्जिद तोडने की बात नहीं है, [illegible] में दिल तोडना उचित नहीं है, इस बात पर शायर ने Emphasis [illegible] जोर दिया है ।

पुत्र ने टीवी बिगाड दिया, नौकर ने घडी तोड दी, [illegible] दिया ऐसे–वेसे प्रसगों में टीवी बिगड जाना आदि से नुकसान [illegible] बढकर पुत्रादि का दिल बिगड जाएगा . अपने प्रति रहा हुआ [illegible] यह नुकसान अधिक भयावह है ।

अत पुत्रादि को डाँट–डपटी सुनाते रहना यह पुत्रादि [illegible] भूल है । पिता, सेठ अथवा सास इस भूल को बारबार करते हैं [illegible] करते हुए घूमते फिरते है → "लडका मेरा मानता नही है' [illegible] बडा मैं ने किया फिर भी मेरे प्रति कृतज्ञ और वफादार नहीं है' [illegible] प्रति कोई आदर या भक्तिभाव नहीं है ।"

स्वय के पाँवों की ठोकर से घी जब ढुल जाता है तब [illegible] घी रास्ते में जहाँ–तहाँ रखा जाता है क्या? कुछ ध्यान ही नहीं [illegible] यह पाँव में आया और ढुल गया ।" यह सुनानेवाली वो ही सास [illegible] हाथों से घी को इधर–उधर रख देती है और बहू के पैरो की ठोकर [illegible] जाय, तब अगर यह सुनाती है कि

'तुम्हारे पीहरवालों ने इतना भी नहीं सिखाया की घर मे [illegible] चलना चाहिये ? रसोईघर में तो दो चीज इधर पडी होती है तो दो उधर ।'

उस सास को इतना समझ लेना चाहिये कि अपनी सत्ता का दुरुपयोग [illegible] अपना अभिमान का पोषण करने का क्षुद्र तात्कालिक लाभ मिल भी गया, मगर बहू के दिल में सदा के लिये अपना स्थान खोने का और आगे चल कर पुत्र अलग रहने के लिये जाय वैसे बीज उसने अपने ही हाथों से बो दिया है

प्रत्युत ऐसे प्रसगों में इससे विपरीत आचरण करने वाली सास को यद्यपि अभिमान का क्षणिक सुख न भी मिले, 'मेरी भूल हुई है' यह कहने से कदाचित् एक क्षण के लिये अपने अहकार को धक्का लगने का नुकसान भी भासित होने लगे, फिर भी बहू के दिल में अत्यत उन्नत आसन पर आसीन होने का सौभाग्य उसे प्राप्त होता है और पुत्र परिवार के जुदाई का दु ख सहने की नौवत भी उसे नहीं आती । यह सुख क्या कम है ?

शांति के सुवर्णसूत्रों का पुनरुच्चार

संघर्षो से बचना है? कटुता और अपमानसभर जिंदगी से परे हटना है? परस्पर प्रेम और सद्भाव से रहना है? एक दूसरे का दिल एक दूसरे के पास किसी भी प्रकार का भेद-भाव, संकोच, कपट, आशंका रहित खुल सके वैसी परिस्थिति का निर्माण करना है? मन को हल्का-फुल्का रख कर जीना है? यह और इस प्रकार की अन्य इच्छाएँ जिसके दिल और दिमाग में पनप रही हो उन्हे इतना करना आवश्यक है इन शांतिमय जीवन के सुवर्णसूत्रों को अपने हृदय की डायरी में कुरेदना जरूरी है

"सामने वाले की भूल देखनी नहीं, दीख पड़ी हो तो याद करनी नहीं, सुनानी नहीं या स्वीकार करवाने की कोशिश करनी नही अपनी भूल का तुरंत स्वीकार करना, किसी भी प्रकार का बचाव करना नहीं"

सामने वाले की भूलें देखना वगैरह प्रवृत्तियॉं संक्लेश का मूल है । अत उन प्रवृत्तियों पर Full stop लगायेंगे तो अपने आप संक्लेश और संघर्षों पर Full stop लग जायेगा । मारुती हो या मर्सीडीज जब तक आप एक्सीलेटर दबाते रहेंगे, गीयर बदलते रहेगे गाडी सडसडाट दौडती ही जायेगी और ज्यों ही आप ब्रेक लगाते है गाडी अपने आप रुक जायेगी ॥

टोपला महोत्सव

अब, इसी विचारसृष्टि में कुछ आगे बढे *"अपनी भूल हो तब दूसरो पर ढोल देना"* यह मानवसहज प्रवृत्ति है, अनादि की चाल है । इसे टोपला महोत्सव कहते है । इंदिरागॉंधी कहती → मेरा कोई कसूर नहीं है जनतापार्टी ने चाल चली मोरारजी कहते है → चरणसिंह की गद्दारी ने मेरी कुर्सी हिलायी राजीव है → वीपी ने बोफोर्स के बल पर मेरी कुर्सी हथिया ली वीपी कहते भाजप ने गडबडी की मुलायम कहते है → मैं तो मुलायम था तिब्बत लिस-मिलिट्री ने कारसेवकों की घिनौनी हत्या की मैं बिल्कुल बेकसूर हूँ डायमंड वाले कहते है → अमेरीकावाली पार्टियॉं पानी में बैठ गई चीनवालों बाजार डाउन कर दिया, गुनाह हमारा नहीं है युवक कहता है → क्या करूँ? मेर मन वश नहीं है अंदर शैतान घुसा है । तभी तो एक शायरने कहा है-

"हंसी आती है मुझे हजरते इंसानपर
बदकाम तो खुद करे और लानत पडे शैतान पर"

राजनीति, व्यापारनीति, धर्मनीति हर जगह टोपला महोत्सव की बोलबाला है।

सौतेली माँ का बलिदान

बत्तीस वर्ष के एक श्रीमत सज्जन की पत्नी [illegible]
मित्र और स्वजनों ने दूसरी पत्नी लाने के लिये सलाह दी [illegible]
परतु सौतेली माँ घर पर आए तो बिचारे पाँच वर्ष के मु[illegible]
अपने सुख के खातिर पुत्र को दु खी करने की उसकी [illegible]
उसने दूसरी बार के विवाह की बात टाल दी । वह स्वय ही [illegible]
बच्चे का विकास करने लगा । इस प्रकार दो बरस बीत गये । [illegible]
को लगा कि व्यापार के कारण मैं पुत्र के पीछे जितना चाहिये [illegible]
दे पाता और चाहे कुछ भी हो एक मातृहृदय स्त्री जिस प्रकार बच्चे [illegible]
ओर सस्कार दे सकती है, उतना मैं स्वय नहीं कर सकता । अत पु[illegible]
पालनपोषण के लिये भी मुझे शादी करनी चाहिये ।

अत पुनर्लग्न का निर्णय करके उसने अखबार मे विज्ञापन दि[illegible]
यह भी खासतौर पर लिखा कि "पूर्व पत्नी के पुत्र को स्वपुत्रवत् गिनकर [illegible]
जो दे सके वैसी स्त्री ही निम्नलिखित पत्ते पर अपना सपर्क करे ।"

एक मध्यम वर्ग की युवती ने इस विज्ञापन को ध्यान से पढा । [illegible]
उसको कबूल थी, वह उस सज्जन के पास आई । सज्जन ने मुख्य बात एक
ही कही → "मैं मेरे सुख के लिये शादी नहीं कर रहा हूँ परतु इस पुत्रके
भविष्यको ध्यान मे रखते हुए शादी कर रहा हूँ यह बात आपको पूर्णरूपेण
ख्याल मे लेनी होगी ।"

तब उस युवती ने कसम खाकर कहा कि → "आप इस बात को लेकर

हसा । तु झील

विल्कुल निश्चित रहे, मैं अपने पुत्र से भी ज्यादा प्यार और दुलार इस पुत्र को दूँगी मैं वचनवद्ध हूँ ।"

विवाह निश्चित हो गया । अडोस–पडोस के लोगों ने सात वरस के उम वच्चे को समझा दिया → 'देख वैटे । अव तुम्हारे घर में तुम्हारी सौतेली माँ आयेगी वह कदाचित् तुम्हे वाहर से अत्यत प्रेम भी वताएगी वात्सल्य भी वहाएगी मगर वह तेरी सच्ची माँ नहीं है वह तो सौतेली ही है अत उसका प्रेम सच्चा कभी नहीं हो सकता "

अनेक अडोस–पडोस के लोगों ने की हुई यह वात उस वालमन मे इस तरह वैठ गई कि न पूछो वात । उसके मन के आकाश में पूर्वग्रह नाम का ग्रह घूमने लगा ।

शादी हो गई । पत्नी और माता वनकर युवती घर में आ गई । वह अपने वचन को पालने के लिये कटिवद्ध थी । पुत्र को अपनी सच्ची माँ मिल गई, ऐसी प्रतीति उसे करानी थी चाहे कैसा भी वलिदान क्यों न देना पडे ।

अत उसने पहले दिन से ही अपार प्रेम और वात्सल्य का धोघ वहाना चालू किया । एक सच्ची मॉ की तरह, अपनी मौज–मजा, इच्छा और व्यक्तिगत स्वार्थों को गौण करके उसने वच्चे का ध्यान रखना प्रारभ किया । परतु सामने से उसे मातृप्रेम का प्रतिसाद नहीं मिला । वह लडका इस युवती को 'माँ' कहने के लिये हरगिज तैयार नहीं था ।

'इस वच्चे के पीछे मेरा वलिदान कुछ कम होगा, एक सच्ची माँ के जैसा नहीं होगा' यह सोचकर उस युवती ने उसके पीछे और ज्यादा समय और वलिदान देना चालू किया । परतु यह युवती ज्यों–ज्यों वालक का ज्यादा ख्याल रखती ` ज्यादा वहाती त्यों त्यों उसके मन में विपरीत असर खडी होती वह और ् दूर भागता रहता । Jaundice के रोगी को हर चीज पीली ही दिखती । वालक की वुद्धि को पूर्वग्रह का ऐसा Jaundice लागू हो गया था कि ख कोशिश करने पर भी उसकी वुद्धि विपरीत ही देखती । सौतेली मॉ का त्यधिक प्रेम देखकर वह यही सोचता कि पडोसियों ने जो वात कही थी वह सच है सच्ची मॉ नहीं है तो भी प्रेम कैसा अपार वताती है? परतु मै कोई ऐसे फसनेवाला नहीं हूँ उसे अपनी सच्ची मॉ मान लूँ ऐसा मूर्ख मैं नहीं हूँ।" अपनी इस विचारसरणी के कारण वह तो इस सौतेली माँ से दूर–दूर ही रहता और पुत्रत्व के भाव वताता नहीं था । इससे उस युवती को अपार दु ख होता।

उसने और ज्यादा कमर कसी । परतु अफसोस । वह सब कुछ पुर्वग्रह के पत्थर पर पानी उडेलना जैसा हो गया । शरीर का चाहे जितना लालन-पालन क्यों न किया जाय वह जैसे आत्मा का कभी होता नही त्यों वह पुत्र भी माँ का हुआ नहीं ।

कभी-कभार जब वह आनद में मशगुल होता तब वह वात्सल्यपूर्ण उस बच्चे के साथ मीठी-मीठी बातें करती और कहती 'परतु मेरे लाल तू मुझे 'माँ' कह कर तो पुकार मैं तेरी माँ ही हूँ न ।' तब तिरस्कारपूर्वक तपाक् से वह कहता 'छट् । आप मेरी माँ कहाँ से? मैं थोडे ही आपके पेट से जन्मा हूँ ?'

और कई आशा और अरमाँओं से भरी हुई उस माँ की आँखों में से बहते हुए अश्रुधोध के साथ मनोरथों का वह महेल धराशायी हो जाता । दिल को एक जबरदस्त आघात लगता । धरतीकप-सी आच उसे तनहाइयों में बहा देती । मनुष्य उपग्रहों को छोड सकता है मगर पूर्वग्रहों को नही कतई नही ॥

परतु वह नारी कर्तव्यनिष्ठ थी । यू हिम्मत हारनेवाली नही थी । उसने कभी भी उस बालक पर तिरस्कार नहीं किया था, उसकी उपेक्षा नही की । तनहाइयों में बहनेवाले उन आसुओं के धोध से भी उसने वात्सल्य के धोध को ज्यादा तेज बनाया । इस प्रकार चार साल बीत गए । परतु उस माता की हर हमेशा जो इच्छा बनी रहती थी कि यह लडका मुझे माँ कह कर पुकारे वह दरिद्र नर की इच्छा की तरह पूरी हो नहीं सकी

वाह रे बलिदान ! वाह !!

एक दिन की बात है। ड्रॉइग रूम के टेबल पर शोभा दे रहा फ्लॉवर पोट, बच्चे के हाथ से गिर गया तूफान जो कर रहा था । वह अत्यत भयभीत बन गया । चूकि वह जानता था कि अत्यत बारीक नक्काशी वाली और पूर्वजों से चली आ रही वह फूलदानी पिताजी को अत्यत प्रिय थी । पिता का क्रोध भी वह जानता था । अत शाम को जब पिताजी घर में पाँव रखेंगे उस वक्त मैं ने इस बहुमूल्य फूलदानी को तोड दी है यह जानकर कैसी मार मारेगे यह भी वह सोच सकता था । अत उसकी कल्पनामात्र से ही वह थर-थर कॉपने लगा । अत्यत भय जनित रेखाऐं उसके मुख पर दिखने लगी ।

बीच का एक घटा उसने कई प्रकार की शका-कुशकाओं से स[illegible] में विताया । बच्चे की मनोदशा माँ ने पहिचान ली । [illegible]

थी कि बच्चा पिता का गुस्सा झेलने में असमर्थ है ।

शाम हुई । पिता ने घर में पॉव रखा । बच्चा तो भय से कापता हुआ गोदरेज के पीछे जा छिपा । उसकी तो सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई ।

अभी तो छाता हाथमें से नीचे रखा नहीं कि पिताकी नजर टेबल पर गई। उधर फूलदानी न देख कर वह गरजा → "फूलदानी कहाँ गई ?"

पुत्र में उस प्रश्न का जवाब देने की ताकत नहीं थी । थोडी देर के लिये सन्नाटा छा गया । पिता ने पुन जोर से पूछा → क्यों फूलदानी टूट गई है क्या? किसने तोडी? पिता गुस्से से काप रहे थे और लडका भय से । "अभी यह सौतेली मॉ मेरा नाम बता देगी और पिताजी मुझे बाहर खींच निकालेंगे और फिर फिर क्या होगा ?" उसकी धडकने तेज हो गई

पास ही खडी वह युवती दोनो को बारी-बारी देख रही थी पिता का अपार गुस्सा और पुत्र की भयपूर्ण परिस्थिति । और उसका मातृत्वपूर्ण हृदय छलक उठा 'यह तो मैं इस फूलदानी को लेकर रजाई साफ कर रही थी और मेरे हाथ से छूट कर जमीन पर गिर पडी और फूट गई ।" पति का गुस्सा वैसे भी हद बाहर चला गया था । अर्जुन के धनुष्य में से जैसे तीर छुटता है वैसे ही उसके हाथ में से छाता छुटा और पत्नी के ललाट पर 'धडाम्' कर जा लगा । पति तो धम-धम करता हुआ वहाँ से निकल कर पासवाले कमरे में चला गया । पत्नी के ललाट में गहरा घाव हो गया खून की धारा बहने लगी । घाव पर हाथ लगा कर वह जमीन पर बैठ गई । पुत्र ने गोदरेज के पीछे से यह सब कुछ देख लिया था । वह दोडा आया अचानक उसके मुँह से शब्द निकल गये "माँ । माँ। तू ने मेरे लिये कितना सहन किया ? देख न, कितना सारा खून बहता जा रहा है तू कितनी दु खी हुई?"

"मेरे लाल । मैं दु खी नहीं हुई महासुखी हुई । बेटे । तुने मुझे आज कह कर पुकारा उस सुख के आगे यह दु ख क्या बिसात रखता है ? बेटा। तो मुझे पुत्रप्राप्ति का महान उत्सव हुआ ।"

अवर्णनीय आनद के सागर में कल्लोल करती हुई माँ ने बेटे को गले लगाया मॉ का बलिदान साधना आज पूरी हुई ।

उस युवती की चार-चार साल की तनतोड और मनमोड मेहनत ने जिन परिणामों का सर्जन नहीं किया, वह सिर्फ एक बार बालक के भूल को अपने सिर पर लेकर बच्चे को भयमुक्त करने का प्रयास से हो गया ।

वो महान है

ज्यादातर लोग जब अपनी भूल को भी स्वीकारने के तैयार नहीं ... तो अवसर पर अन्य की भूल को अपने माथे पर लेनेवाला व्यक्ति ... से सहज ही जुदा दिखने लगता है वह ग्रेटमेन कहलाता है । ... लोगों में आदरपात्र बनता है ।

दूसरों की भूल जब अपने सिर पर आ पडती है तब भूल करने वा... का नाम बताये बिना ही जो व्यक्ति डाँट-डपट, भयकर अपमान, अन्य के ... आदि को सह लेता है यावत् कभी-कभार मार भी खा लेता है वह व्यक्ति ... करने वाले व्यक्ति और उस भूल को जानने वाले व्यक्तियों के दिल में ... आदरणीय स्थान बना लेता है । अनेक सुदर कार्य करने पर भी ... ...हीं उकसाई जा सकती वैसी गहरी छाप इस कार्य से उत्पन्न की जा ...

चूकि बाह्य तपश्चर्या, मामायिक, प्रतिक्रमण अथवा दानादि ... है, परतु अन्य की भूल को जानते हुए भी न कहना· अथवा तो ... ने थोडा-बहुत सहन किया हो उसे न कहना, यह बहुत बडी कठिन ... यह लगभग हर एक व्यक्ति अपने अनुभव से जान सकता है ।

एक महात्मा की महत्ता

भवोदधितारक परमाराध्यपाद गुरुदेव आचार्य भगवत श्री विजय भुवनभानु सूरीश्वरजी महाराजा की तारक निश्रा में नवसारी के चातुर्मास की पूर्णाहुति के बाद खानदेश में विचरण करने का हुआ । पूज्यपाद गुरुदेव के पावन पदकमलों से पवित्रित होती हुई धरा में अनुक्रम से मालेगाव नगर का नबर आया । वहाँ एक दिन विशाल सख्या में साधुओं की भोजनमाडली बैठी हुई थी । उसमें गोचरी कम पडी । अत पुन एक महात्मा गोचरी के लिये गये ।

गोचरी लेकर पुन आये और पूज्य गुरुदेव को भिक्षा बतायी । रोटी-दाल-भात के साथ थोडा-सा फ्रूट भी था । अत गुरुदेव अत्यत कडक हो गये । स्वय महान् त्यागी तो थे ही, साथ ही आश्रितों में भी त्याग की भावना बनी रहे, त्याग के आदर्श जिन्दे रहे तदर्थ वे सदा जागृत भी रहते थे

अत गुस्सा बताते हुए उन्होंने कहा ☞ "जो मिला सो उठा के ले आते हो? दूसरी बार जाते है तब रोटी-दाल-भात ही लाना चाहिये जितना मिला सब उठा ले आना? ऐसा बिल्कुल नहीं चलेगा । मिल जायेगी मना करना ही नहीं ? अपन त्यागी है या

गुरुदेव ने तो बडे ही कडक शब्दों में उपालम्भ दिया । परतु उन महा
के मुह से सिर्फ इतने ही शब्द निकले "गुरुदेव । मेरी भूल हो गई, मिच्छ
दुक्कडम् ॥

मैं तो यह सुनकर ही आश्चर्य में गरकाव हो गया । चूकि मैं तो जान
था कि मेरे बाजू में बिराजे हुए जो मुनिभगवत थे, उन्हे बवासीर का रोग
डॉक्टर ने उन्हे सलाह दी थी कि वे फ्रूट का इस्तेमाल किया करे अत उन्हें
ही गोचरी जाने वाले महात्मा को कहा था कि फ्रूट मिले तो लाना इसीलि
तो उन्होंने लाया था ।

अर्थात् बहर घूम-घूम कर गोचरी लाये हो, अपना कोई कसूर न हो फि
भी गुरुदेव **40-50** साधुओं के बीच धमका दे तो मेरे जैसों को तुरत ही अप
बचाव या सफाई पेश करने का मन हो जायेगा, सच्ची बात खोल कर बताने
सहज ही मन हो आयेगा सच्ची बात नहीं बताऊँगा तो मेरे लिये गुरुदेव अ
अन्य सहवर्ती मुनियों पर कैसी भद्दी छाप पडेगी" ऐसे विचारों से भी मन ब
को उगलने के लिये कुलबुलाने लगेगा

अरे, इतना सोचने का अवकाश भी कहाँ? गुरुदेव ने ज्यों ही कहा न
कि बदा हाथ जोडकर तपाक् से कह देता → "गुरुदेव । फला-फलाने महात
ने मगाया था इसीलिये मैं लाया हूँ ।"

परतु वे तो अद्भुत महात्मा थे । मानों उन्होंने मन ही मन ऐसा सोचा, मु
खाना नहीं है में तो सिर्फ अन्य के लिये लाया हूँ, तो भी गुरुदेव इतने कड
शब्द कह रहे है तो फिर यदि मैं कहूँगा कि फलाने साधु ने मगवाया है, ऐ
जानकर तो ओर भी कैसे-कैसे कडक शब्द सुना देंगे? क्या पता। अत बहतरी
हे कि मैं गुरुदेव के आक्रोश को सह लूँ "दूसरे की भूल को बता दूँ" ऐ
भी कुलबुलाहट या खुजली को आधीन हुए बिना उन्होंने स्वस्थरूपेण स
सुन लिया । थोडी देर के बाद दूसरे महात्मा ने स्पष्टता की → "गुरुदव
साधु ने मगवाया था अत इन्होने लाया था ओर उन्होने भी डॉक्टर
थी इसीलिये मगवाया था ।"

फिर तो गुरुदेव ने भी उन महात्मा को कहा → "भला, पहिल ही य
बात कह देते, डाट तो सुनानी नहीं पडती ।"

उन महात्मा ने एक बार कुछ देर के लिये डाँट-डपट सुन ली, मगर पूज्यपा
गुरुदेव के, मगवाने वाले महात्मा के और अन्य सभी उपस्थित महात्माओं क दिल

में जो जो गहरी छाप अंकित की वह क्या कभी मिट सकती है?

बरसों बीत गए । आज भी वह अमिट छाप अंतर की पेटी में ज्यों की त्यों पडी है। अवसर-अवसर पर वह प्रसंग याद आता है और दिल उनके चरणों में अहोभाव से झुके बिना नहीं रहता मन अवनत होता है और वचन धन्य-धन्य पुकार उठता है ॥

सर्व जीवात्माएँ परमात्मपन के रोमेटेरियल है, हीरे की जाज्वल्यमानता रफ मे दिखती नही है, फिर भी हीरे का यह रोमेटेरियल है यह जाननेवाला झवेरी उसको असावधानी से हेन्डल नही करता है । उसी प्रकार किसी व्यक्ति मे आत्मगुणों की झलक अब न भी दिखे तो भी उसे द्वेष-दुर्भाव या शत्रुता से हेन्डल कैसे किया जा सकता है ?

There is no rose without thorn.
एक भी गुलाब ऐसा नहीं मिलेगा जिसमे कॉटे न हो....
A rose without thorn is Friendship.
मित्रता ही एक ऐसा गुलाब है जिसमें कॉटो की चुभन नही होती है....

अन्य के भूल की दुरस्ती

ग्रीष्म ऋतु की चमचमाती धूप में एक पथिक अपनी मजिल की ओर बढ रहा था । भीषण गर्मी और श्रम से थकी उसकी काया किसी घटादार छाया की आश लगाये चल रही थी । पूर्वजन्म में कुछ सुकृत किया होगा, जिससे तुरत ही एक विशाल वटवृक्ष मिल गया । उसकी अनेक शिफाऐं चारों ओर जमीन में दृढता के साथ धस गई थी । मन शात हुआ । दौडकर वह उसकी शीतल छाँव में जा बैठा कुछ देर के लिये विश्राम करने का मन ही मन निर्णय कर लिया।

पास ही खल-खल करता हुआ एक झरणा बह रहा था उसके तट पर बेल-बूटे बिखरे हुए थे। बेल पर भारी-भरकम तरबूज लगे हुए थे । पुन उसने अपनी नजर ऊपर दौडाई । बरगद के उस विशाल काय पेड पर छोटे-छोटे फल लटक रहे थे । और उस जनाबअली महामहिम मोशाय को ईश्वर में भी भूल दिखी ।

"यह बुद्धिनिधान ईश्वर भी कैसी-कैसी भूल कर देता है इस बेचारी कोमल बेल पर इतना वजनदार फल उगा दिया कि बेचारी ऊपर ही नहीं उठ पाती और इस विशाल, सशक्त बरगद पर ऐसे छोटे-छोटे फल उगाये कि बेचारे दिखते ही नहीं ।। मेरी सलाह मागे तो मैं बेधडक दोनों को ट्रास्फर करने को कह दूगा।"

इस प्रकार ईश्वर की भूल का विचार करता है इतने में तो ऊपर से एक टेटा गिरा, ठीक उसकी नाक पर। एक क्षण तो आखें मूद ली विचार आया "ओह । नहीं नहीं खुदा ने भूल नहीं की है । यदि मेरी के मुताबिक इस पर तरबूज होता तो आज मेरी मौत होती ।।"

भूल देखने की आदत

कितने ही लोगों की एक आदत बन जाती है कि हर जगह, भूले ही देखनी। नुक्ताचीनी करना उनके Blood में होती है कि फिर उनके सामने चाहे जैसा गुणवान, पूजनीय, उपकारी, सम्माननीय और आदरपात्र व्यक्ति क्यों न आये, उनको भी वह अपना शिकार बनाये बिना छोडेंगे नहीं । उनके हर पवित्र और

अन्य के कार्यो का पोस्टमोर्टम करने में वे इतने व्यग्न रहते है कि स्व की प्रवृत्तियों का इस्पेक्शन करने का उन्हे समय ही मिल नही पा अन्य की प्रवृत्तियों की चेकींग करने की मेरी यह प्रवृत्ति भी ठीक है या नही उसको चेक करने की भी बिचारों को फुरसद नही मिलती ।

दूसरों की भूल देखने की यह आदत स्वय की जबरदस्त अहमन्यता से हुई होती है । "मैं कभी भी भूल करता नहीं हूँ और दूसरे लोग भूल के ताय और कुछ भी करते नहीं है" यह एक निरा अभिमान ही है

जब स्वय किसी शिथिल प्रवृत्ति को कर लेता है, उस वक्त उसको ल जाती है "भाई । यह तो परिस्थिति ही ऐसी निर्माण हुई जिसमे मै ई भी होता तो भी उसका बर्ताव मेरे से अधिक सुदर नही होता जो कुछ भी किया है वह बराबर ही है उसमें कुछ गलती नही है "

उसी प्रवृत्ति को जब किसी अन्य व्यक्ति ने की हो तब मनुष्य का अहकार सके दिमाग में ऐसे विचार आन्दोलित करता है "इस प्रकार परिस्थिति को लेकर अपनी प्रवृत्तियॉं बनाते-बिगाड़ते रहेगे तो आगे बढ़ने का सवाल ही नही रहता। थोडा सहनशील बनना चाहिये । मन को कुछ मक्कम बनाये रखना चाहिये । कुछ भी हो ऐसी परिस्थितियों में उसने जो किया है वह कतई उचित नही है यह उसने बहुत गलत किया है ।" और बहुतबार तो उसका अहकार उसे परिस्थिति का विचार ही नहीं करने देता है

ऐसे मनुष्यों को 'औरों की भूलें देखनी नहीं, याद करनी नहीं, कहनी नहीं, सुनानी नही 'आदि-आदि पसद न पड़े यह स्वाभाविक है । वे लोग तो मानो सारी दुनिया को सुधारने का contract ठेका लेके बैठे हो, वैसा मानते हैं । हम यदि भूले न निकाले या न कहे तो सारी की सारी दुनिया ज्यादा से ज्यादा भूलें करने लगेगी और बिगड़ जायेगी" वैसी उनकी मान्यता होती है हम अन्य की भूलों को देखते है और बताते हैं इसीलिये दुनियाका कारोबार सही ढग से चल रहा

है और उसीसे क्षतिरहित उसकी व्यवस्था बनी रहती है ऐसा उनका दृढ विश्वास होता है ।

ऐसे बिचारे मदबुद्धि वाले बुद्धुओं को कौन समझाये कि → "भाई । यह तेरा मिथ्या अभिमान है । दूसरे-तीसरे लोग जो भूलें करते है और उससे उन्हे जो हानि उठानी पडती है, उससे कई गुना अधिक हानि तुझे इस 'अन्य के भूलों को देखने गाने की आदत से उठानी पडेगी यह भूल उन भूलों से भी बडी है इतना तू याद रख ।"

सभी जीवों पर द्वेष, तिरस्कार और शत्रुता दिल में पैदा होती है और स्वय का प्रचड अभिमान-मगरूरी यह भी क्या कोई कम नुकशानी है?

सभी में दोष है!

एक बार मनुष्य ने चद्र को कहा → 'रे चद्र। तेरी सौम्यता और शीतलता बडी ही प्यारी लगती है । परतु यह जो काला डाघ है वह तेरे में एक बहुत बडा कलक है ।' नदी को कहा → "अरी नदी । तेरी निर्मलता और पवित्रता प्रशसनीय है मगर जब तू पागल होती है तब गाम के गाम फना-ताराजा कर देती है चारों ओर प्रलय का हाहाकार मचा देती है तबाही-तबाही कर देती है। वह तेरी एक ब्लेक साईड है ।"

सागर को कहा → "भैया । तेरी गभीरता और विशालता की कोई उपमा नहीं मिल सकती । परतु तू खारा है तेरे में न जाने कितने टन नमक भरा पडा है, यह सब से बड़ा दोष है ।

गुलाब को कहा → "वाह रे गुलाब, वाह । तुझे देख कर मैं तो आफरीन पुकार उठा हूँ कायल हूँ मैं क्या तेरी अपूर्व सुदरता । क्या तेरी सुगध । हकीकत अनुपम है और मनोहर भी। मगर तेरे आस-पास ये जो काँटे है उनसे सारा किरकिरा जाता है ।

मनुष्य की इस बात को सुनकर चारों ने मिल कर एक साथ कहा → इसान । तेरी बुद्धि और शक्ति कमाल है सचमुच ही अद्वितीय है मगर यह दोषदृष्टि । यह Crowning glory of creation कहलाने वाले तुम में दुनिया की सब से खराब में खराब हकीकत है । सपर्क में आनेवाले की Blackside या खर्चबाजू देखते रहना और उसे कर्जदार रूप से जाहिर करना इससे भयकर दोष और कौन-सा हो सकता है?

कभी यह भी आवश्यक

हाँ, कभी-कभार ऐसी भी परिस्थिति खडी होती है कि नौकर की भूल को सेठ को, पुत्र की भूल को पिता को, विद्यार्थी की भूल को शिक्षक को देखनी और कहनी भी पडती है । और यदि देखे नहीं या कहे नहीं तो सेठ आदि को या खुद पुत्र वगैरह के भयकर नुकसान होने की सभावना भी आ पडे ।

पुत्र की अमुक ऐसी गभीर भूलें होती है जिन्हे यदि पिता अपने फर्ज समझकर कहे नहीं तो वे भूले बीज से बरगद बन जाती है, जिससे पुत्र आदि के विकास को फुलस्टोप लगता है इतना ही नहीं परतु विनाश भी हो जाय ।

इसलिये पुत्रादि की भूल को देखनी ही नहीं या कहनी ही नहीं, ऐसा एकात पकड सकते नहीं ।

परतु भूल देखने का अधिकारी कौन है ? कहने का कौन अधिकारी है ? कब कहनी ? किस तरह कहनी ? यह सब विचारणीय है ।

हर कोई व्यक्ति, हर कोई समय, हर कोई रीति से, भूलें देखने लगे और कहने लगे तो न कोई उससे पुत्रादि की भूलें अटकती है या विकास होकर निखर अटकता है प्रत्युत पुत्रादि के दिल में द्वेष-तिरस्कार-दुर्भाव-शत्रुता आदि अनिष्ट पनपने लगता है, जिससे नफा तो दूर, भयकर नुकसानी उठानी पडती है ।

जिस पर अपना अधिकार हो, जिसके विकास आदि की जवाबदारी अपने ऊपर हो ऐसे व्यक्ति की 'भविष्य में भूल पहाडसी न हो जाय' इस सद्भावना और सदाशय को ध्यान में लेते हुए भूलें देखी जा सकती है और कही भी जा सकती है । इससे दोषदृष्टि नहीं कहीं जा सकती ।

कब कहनी ? इस प्रश्न का जवाब हमें अपनी मनोवृत्ति के टटोलने से मिल सकता है । अपनी कोई भूल हुई हो और कोई व्यक्ति अपने को तुरत उलाहना दे तो हम सह नहीं सकते हैं । हमे सुहाता नहीं है यह हमारी मनोवृत्ति है ।

हमारे सामने ही किसी ने भूल की, उस विषय में कुछ कहना आवश्यक है ऐसा हमें लगता है, कहे बिना व्यक्ति सुधरेगा नहीं, यह भी लगता है, तो भी On the spot उस व्यक्ति की भूल कहने की गम्भीर भूल हम न कर बैठे, उसका पूरा ध्यान हमें रखना चाहिये । उस वक्त हमारी इस ढाई इच की जीभ पर पूरा काबू-Control रखना चाहिये । Words are Mightier than swords and pen is mightier than gun अर्थात् उचित समय पर ही उचित शब्दों का प्रयोग हो यही उचित है । On the spot यह

भूल कहने का उचित समय नहीं है, यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है ।

कोई व्यक्ति भूल करता है तिस पर कोर्ट भी तुरत फैसला सुनाकर सजा नहीं फटकारती है । या कर्मसत्ता भी तुरत उसका अशुभ विपाक दिखाना शुरू नहीं कर देती तो फिर-किसी ने भूल की और उसे तुरत उलाहना देने की सत्ता या अनुमति हमें भी कैसे मिल सकती है? ओन ध स्पोट भूल को कहने वाला, सामने वाले की एक भी क्षति को न ही क्षन्तव्य गिन सकता है और न ही उदारता से उस भूल को पचा सकता है । हर बार टोकते रहना यह जो आदत है वह बहुधा सामने वाले की भूल से भी बडी भूल बन जाती है ।

चेइनस्मोकर की वाइफ

चेइनस्मोकर के फेमिली डॉक्टर ने उसे गम्भीर रूप से चेतावनी दी कि यदि वह सिगारेट फूकने का बद नहीं करेगा तो उसकी लाइफ खतरे मे पड जायेगी किसी भयकर असाध्य रोग का भोग बनना पडेगा । परतु यू किसी की चेतावनी को स्वीकार ले तो सिगारशौकीन काहे का ? वैसे तो हर सिगारेट की पेकींग पर–विज्ञापनों पर Warning लिखी हुई तो होती ही है न? Cigaratte smoking is injurious to health . . सिगारेट पीना, आरोग्य के लिये हानिकारक है । अनतानत तीर्थकरों परमात्माओं ने पाचों इन्द्रियों के हर एक विषय पर लेबल मारा ही है न? कि *'विषयों का भोग करना, यह आत्मा के स्वास्थ्य को भयकर रूप से हानिकर्ता है* " मा एयं अवमन्नता, अप्पेण लुपहा वहु (सूयगडाग 1 /3/4/7) अल्प ऐसे विषयसुख के पीछे पागल बन कर साधना के द्वारा आत्मिक अपार सुख को प्राप्त करने का मार्ग क्यों छोड रहा है ? क्यों उसकी अवज्ञा कर रहा है ? चूकि सुख तो विषय का अल्प और अपाय अनत। आयकदसी न करेइ पाव (आचाराग [illegible] /2) दु खरूप अपाय को देखने वाला पाप नहीं करता है इत्यादि आगमों के पृष्ठ पर अनुस्रोत वह रहे इस जीव को प्रतिस्रोत के मार्ग पर लाने अनेकानेक रेडसिग्नल– Warnings दिये हैं मगर ससाररसिक जीव जैसे [illegible] भोग से विरक्त नहीं होते हैं, वैसे ही धुम्रपानके व्यसनी जीव सिगारेट [illegible] है ।

वर्षो से आदी इस चेइनस्मोकर ने डॉक्टर की चेतावनी को In and Out अनसुनी कर रखी थी । परतु उसकी वाइफ चेतावनी से एकदम घबडा गई । पिछले तीन सालों से पति को सिगारेट से कुछ न कुछ तबीयत में गडबडी चल रही थी । तब से पत्नी हर दिन पति को टोक–टोक करती रहती थी ।

कर लिया कि कुछ भी हो पति को सिगारेट की लत छुडाने है। [illegible]
बहुत प्रयास किये परतु पत्थर पर पानी, कुछ काम नहीं बना। [illegible]
समाचार मिले कि शहर मे एक बहुत बडी हस्ती आई है। उन [illegible]
और ओजस्विता से लोग काफी प्रभावित थे। इस औरत को भी '[illegible]
का सहारा' सत के पास जाकर उनसे पतिदेव की लत छुडवाने को [illegible]

सत के पास जाकर उसने अपने दिल की बात कही। सत ने [illegible]
बहिन। मैं तुम्हारे पतिदेव की लत छुडवा दूँ उसके पहिले तुम्हे एक [illegible]
होगा। हर वक्त सिगारेट बद करने का जो तुम कहा करती हो उसे [illegible]
दो। टोक-टोक करने का बद करने के बाद पद्रहवे दिन मे मुझे [illegible]

उस महिला ने सत की बात सिर-माथे पर चढा दी। "यदि [illegible]
सिगारेट फूकने की आदत छुट जाती हो तो मुझे इन्हे कहने की आवश्यकता [illegible]
क्या है?" इस प्रकार की उसकी विचारधारा थी। परतु तीन दिन बीते न [illegible]
वह महिला सत के चरणों मे पहुँची और उसने अपनी विवशता बताई "महाराज।
आप मुझे दूसरा कुछ भी बताइये। पहिले वाली बात मै नहीं कर सकूँगी। वे
ठीक मेरी ऑखों के सामने सिगारेट फूके और मैं चुप बैठी देखूँ यह हो नही
सकता। नहीं टोकने की लाख कोशिश करती हूँ मगर जुबान वश मे नही रहती
है टोकने का मुझसे हो ही जाता है। आप कहो तो मैं मिठाई छोड दूँ
कहो तो मैं फ्रूट की प्रतिज्ञा ले लूँ कहो तो चाय को तिलाजलि दे दूँ, परतु
टोकने का मेरे से बद नहीं होगा मैं विवश हूँ।"

सत ने सस्मितवदन कहा → "बहिन। मात्र तीन साल से जो टोक-टोक
करने की लत आप छोड नहीं पाती हो, तो बरसों से जो सिगारेट पीने की लत
पडी हुई है उसे आपका पति तुरत ही छोड दे वैसी अपेक्षा आप कैसे रख सकती
हो?"

कौन ज्यादा भयकर?

बेपरवाही से बार बार वस्तु बिगाड देने की या अन्य कोई नौकर आदि
की बुरी लत की अपेक्षा, उसे बार बार टोकने की जो आदत है, वह ज्यादा

हसा। तू झील

भयकर हो सकती है । उसमें यह भी विचारधारा एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि टोकने की आदतवाले को "यह जो टोक-टोक करने की मेरी आदत है वह एक भयकर भूल है । यह आदत बुरी है इससे स्व-पर को भयकर नुकशान होगा" ऐसा तो प्राय ख्याल में आता ही नहीं है बल्कि उसे यह लगता है कि "करुणाबुद्धि से सामने वाला का अपार हित करने की मेरी यह प्रवृत्ति है अत इसमें बुराई का नामोनिशान नहीं है।" यह उसका मिथ्या अभिमान है और वह उसी में मशगुल रहता है ।

बारबार टोकना वह टकटक रूप बन जाता है टकोर रूप नहीं । अत सामनेवाले को सुधारने में उसका आमूलचूल परिवर्तन कायाकल्प में समर्थ नहीं बन पाता । टक-टक किया करना और टकोर करना इन दोनों के बीच मेरु-सर्षप जितना फर्क है । टक-टक तिरस्कारभाव से होती है और टकोर करुणाबुद्धि से टक-टक लबीलचक होती है, जब कि टकोर Short and Sweet होती है एकदम सक्षिप्त और सारभूत । टक-टक अधाधुध-बेहिसाब होती है, टकोर अवसर देख कर की जाती है । टकटक से सामने वाला व्यक्ति तकरार करता है जबकि टकोर से सामनेवाला व्यक्ति भूलका इकरार करता है ।

ज्यों घडी सारी रात टिक-टिक किया करती है, कोई उस पर अपना लक्ष्य केन्द्रित ही नहीं करता जब कि टकोरे जो सारी रात में सिर्फ सीमित समय के लिये ही पडते है उन को सुनने के लिये ही कान लालायित रहते हैं ।

उसी तरह टक-टक पद-पद पर होती है मगर टकोर किसी, उचित मौके को देख कर ही । एव बारबार होती है अत घडी की की उस टक-टक की तरह कोई उसकी नोंध भी नहीं लेता (कसेरा का कबूतर चाहे कितनी भी टिक-टिक की जाय, उडेगा नहीं, वो आदी हो जाता है।) जब कि कभी कभार पड़ने की तरह की गई टकोर को हर एक सम्बधित व्यक्ति ध्यान में लेता है, इसीलिये टकटक मनुष्य को बेहया बनाती है और टकोर मनुष्य को टकटक में वाणी का अतिरेक होता है जबकि टकोर में वाणी का विवेक। सूत्र में भी कहा है प्रभु ने *नाइवेलं वएज्जा* (1/4/25 मर्यादा को छोडकर ज्यादा समय तक बोलना उचित नहीं है) टक-टक में कठोरता होती है टकोर कोमलता *नो वयण फरूस वएज्जा* कठोर वाणी का उच्चारण प्रीति का नाश करता है कोमल वाणी का उच्चारण प्रीति को बढाता है । टक-टक होंठों से होती है और टकोर हृदय से ।

किसी ने भूल की और तुरत ही हमारा मुख रूपी गेडिये ... तो समझ लेना चाहिये कि हम जो बोल रहे है वह टकोर नही ... है उसमें करुणाबुद्धि नहीं है, परतु तिरस्कारबुद्धि है । उससे सामनेवाले को भी ... तिरस्कार ही होगा जो बीज आगे चलकर वैर के वटवृक्ष का विकराल ... धारण कर सकता है ।

अत सामने वाले ने भूल की कि तुरत भूल का प्रदर्शन करने की ... आदत से हर एक स्व-पर हितेच्छु को बच कर चलना चाहिये । किसी ने ... भूल की, उस विषय में सलाह-सूचना टकोरने की आवश्यकता लगे फिर भी तुरत कुछ भी मत बोलो दो-चार घटों को जाने दो दो-चार दिनों को बीतने दो दो-चार महीनों को काल के खप्पर में अस्तित्वहीन बनने दो जैसी भूल ... जैसा अवसर ।

यदि तुरत बोल देने की अपनी भूल को हम सुधार नही सकते है तो सामनेवाला व्यक्ति भी अपनी भूल किस तरह सुधारेगा ? कालविक्षेप करके फिर भूल को बताना यह प्रवृत्ति ज्यादातर भूलरूप बनती नही है, और तुरत ही भूल बताना यह प्रवृत्ति ज्यादातर भूल रूप बने बिना रहती नहीं । इसका कारण यह है कि उन दोनों में परिस्थितियाँ बदल जाती है । अत उस वक्त बोले गए शब्द, उनको असर आदि में खूब अँतर difference रहता है ।

सामने वाले को भी समझो

रविवार का दिन है । अखबार और मेगेझिनों का फैलाव फैला कर आप चैन से अपना टाइम-पास कर रहे है । नौकर सफाई कर रहा है । उसमें उससे थोडी सी गफलत हो जाती है । और आपका प्रिय काच का नक्काशीदार झाड-फानूस जमीन पर गिर कर टूट जाता है चूर-चूर हो जाता है । दिवानखड में चारो ओर काच के टूकटे उछलते है और साथ ही आपके हृदय में क्रोध ।

नौकर भी एक आदमी है । वह बिल्कुल बेहया तो हो नहीं सकता । उसके पास भी एक नाजुक दिल होता है कोई पत्थर तो है नहीं । उसके दिल में भी हाय । मेरी भूल हो गई, फानूस टूट गया वैसा अफसोस और आघात तो लगता ही है । उसके दिल में भी एक प्रकार की घबडाहट पैदा हो ही गई होती है। उस वक्त 'न आव देखा न ताव' आप पूछने के मूड में उस बेचारे पर टूट पडो तो उसे कैसा लगे ? जले पर नमक छिडकने-सा आपके इस कार्य को नौकर का दिल कभी माफ नहीं करेगा । चूकि एक तो घाव असह्य था ही तिस पर

हसा । तू झील

आपने उसे और असह्य बना दिया–गहरा दिया ।

सामनेवाले की ऐसी कोई भूल हुई हो, उस वक्त हमारी और उसकी मन स्थिति कैसी होगी, इस बात पर यदि ध्यान से विचार किया जाय तो जरूर ऐसा लगे बिना नहीं रहेगा कि उस वक्त अर्थात् ओन ध स्पोट तो कुछ कहना ही नहीं चाहिये । सामनेवाले की किसी भूल के परिणामरूप हमें कुछ नुकसान हुआ है इस प्रतीति के कारण हमें आघात–सदमा कुछ गहरा पहुँचा हुआ होता है इससे हम कुछ आवेश में भी होते हैं । अत क्या कहना ? कैसे कहना? किन शब्दों का इस्तेमाल करना? कैसी भूमिका बना कर कहना? आदि विवेक हम बिसर जाते हैं चूँकि आवेश के वक्त विचार करने का कोई अवसर या अवकाश ही नहीं रहता ।

अत तड् और फड्! जो मुह में आया सो बक जाते है ।

इस तरह बोले हुए शब्द, बहुधा सामने वाले व्यक्ति के दिल के टूकडे कर देते है मर्मस्थलोंमें घात करते है । वे वैसे होते है चूँकि आवेशका प्रभाव ही वैसा होता है ।

सामने वाले व्यक्ति की भी मन स्थिति उस वक्त और होती है एक तो अपने से भूल हो जाने का–वस्तु बिगड जाने का आघात तो होता ही है और ऊपर से आपकी जली–कटी बात सुननी पडती है इसलिये वह भी चिढता है । भूल के विषय में होनी की अनहोनी अशक्य होने से उसके आघात से बचाव का तो कोई सभव नहीं। सभव दृष्टिगोचर होता है आपके क्रोधपूर्ण मर्मघाती शब्दों के आघात से बचाव का । इस बचाव को कल्पना में रखकर वह प्रेरित होता है । इसमें मेरी भूल कतई नहीं थी, यह सिद्ध होने पर ही इस आक्रोश में से जा सकता है ऐसी प्रतीति होने से भूल का हर हालत में बचाव करना एसा , आतरमन निर्णय कर लेता है ।

उसके सामने हम ठीक दूसरा छोर पकडकर पेश आते हैं "तुम्हारी भूल । इतना ही नहीं, हम येन केन प्रकारेण "उसीकी भूल है" इस बात को सिद्ध ने में जमीन–आसमान एक कर देते है इस अर्थहीन प्रयास में जुट जाते । इससे तकरार खडी होती है । और उसमें पीछे से अपने अह का मसला आ जाने से मामला और भी बिगड जाता है । उसमें कदाचित् ऐसा लग भी जाय कि मेरा प्रयास बिल्कुल गलत है फिर भी पीछेहठ हो नहीं सकती ।

ठीक, इससे विपरीत, यदि भूल हुई उस वक्त "चलो होना है [illegible] में जितनी भी चीजें मिलती है सभी विनश्वर है एक न एक दिन [illegible] वाली ही थी । अत चिंता मत करो" ऐसे शब्द अपनी जबान से निकले [illegible] ऐसे सुदर शब्द निकालने जितनी हिमत उस वक्त आप बटोर न [illegible] या उतनी स्वस्थता न हो .भीतर ही भीतर लावा उबल रहा हो [illegible] अपनी जबान पर कर्फ्यु लगा दिया जाय एक भी शब्द बाहर न निकले [illegible] व्यवस्था-पहरा सेट कर दिया जाय तो बहुत बडी उपलब्धि है [illegible] वाले को अवश्य सभवित क्रोधपूर्ण डॉंट-फटकार के कडुवे शब्दों के [illegible] बचने का जो अनहद आनद होगा उससे आपके प्रति सद्भाव उसके [illegible] अगडाई लेता हुआ नजर आयेगा । "मेरी भूल देखकर भी मुझे डॉंटा नहीं [illegible] मेरी भूल को मौनपूर्वक सह ली" ऐसी होने वाली प्रतीति "सचमुच [illegible] है उदारदिलवाले है मेरे प्रति स्नेहवाले है इसलिये मुझे कुछ भी नहीं [illegible] ऐसे आदरभाव को खडा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है ।

आपके प्रति यह जो आदरभाव उसके दिल मे अपनी गहरी नींव [illegible] है । वह आदरभाव 4-6 घटों के बाद उस भूल के विषय मे आप जो भी [illegible] कहेगे उसका सहर्ष स्वीकार हो सकें, वैसी भूमिका भी बना देता है । "साँप भी न मरे और लकडी भी न टूटे' इसी तौरतरीके का नाम है ।

और, किसी भी नुकसान का घाव ताजा होता है तब जरूर गहरा होता है फिर तो ज्यों ज्यों घटे बीतते जाते है उस की गहराई कम होती जाती है और उतने मे तो हम आवेश-तनाव से मुक्त होकर पूर्णतया स्वस्थ भी हो गए होते है । अपरच, कुछ देरी करने से, उस मध्यावधि समय में हमें सोचने के लिए काफी अवकाश मिल जाता है 'कैसे शब्दों में किस प्रकार कहने से सामनेवाले व्यक्ति के दिल को चोट कम लगेगी ' इत्यादि कहने योग्य मेटर की-शब्दो की पूर्णतया सेटिंग तैयार हो जाती है होमवर्क तैयार है प्रीपेरेशन अप टु डेट है फिर फेल होने का सवाल ही नहीं उठता है तीर ठीक निशान पर जा लगता है चूंकि हमने निशाने को पहिले ताका था ।

आम के आम

सामने वाले के पक्ष में "मेरी भूलों को देख कर भी मुझे [illegible] फटकारा नहीं" इस अनुभव से हमारी ओर से जो भय

बादल उसके मन पर मँडरा रहे थे वे दूर हो गये होते है । कालविलब हो जाने से, अपने हाथों जो भूल हो गई थी उससे जो आघात उसके दिल को लगा था वह भी हल्का हो जाता है, अत उसका भी चित्त ही आपके प्रति उसके दिल में विश्वास आदर-सम्मान सूचक भाव तो पैदा हो ही गए है । भूल के बचाव का निर्णय भी मर्मघाती शब्दों के आघात से बचने की आशा से ही उसने किया था, जो आशा बिना बचाव ही सफल बन गई होती है ।

ये सभी परिबल स्वभूल का स्वीकार करने की नैतिक हिमत उसमें जन्मा देते हैं । एव उस भूल को सुधारने के लिये योग्य सूचनों को जानने की जिज्ञासा और उसे अमल करने की आतुरता भी उसमें उत्पन्न हो जाती है । अत किसी भी प्रकार की तकरार, द्वेष या सक्लेश की बात होती नहीं है परस्पर प्रेम भाव बढ़ने के साथ सब कुछ आल राईट हो जाता है । *'आम के आम गुठली के दाम वाली'* बात हो जाती है ।

सामनेवाले की भूल को अमुक रूप से यदि कही जाय तो उसका स्वीकार और सुधार दोनों शक्य है । भूल अर्थात् मन, वचन या काया की प्रवृत्तियों का एक प्रकार का बिगडना। सीधे चलने की बजाय टेढी राह चलना उसमें भी मुख्यतया मन का बिगाड। उस बिगाड़ को दूर करने की ताकत अधाधुध उपायों को आजमाने में नहीं है । किस तरह और किन उपायों से उसे दूर किया जा सकता है, यह समझने के लिये हम अपनी मन की मारुती को दौडा कर ऑपरेशन थियेटर में पहुँचा दे और वहाँ देखना है ये लीले लिबास वाले डॉक्टर किस प्रकार शरीर के बिगाड को काट-निकाल कर दूर फेंकते है आइये वेलकम दीस इज ऑपरेशन थियेटर ॥

ऑपरेशन थियेटर दूर

वैसे मारुतियों को रखने के लिये हॉस्पीटल के कंपाउड मे पार्किंग है । आप अपनी मन की मारुती में बैठ कर ऑपरेशन थियेटर के अदर घुस कते है ग्रीन सिग्नल है ।

शरीर के बिगाड को दूर करना है मगर ये डॉक्टर लोग इन्फेक्शन के डर से जहॉ-तहॉ ऑपरेशन नहीं करते हैं। पेशेन्ट को ऑपरेशन थियेटर में दाखिल करते है । ठीक उसी प्रकार किसी की भूल रूप बिगाड-खराबी को दूर करना हो, उसे यथायोग्य सलाह देनी हो, आवश्यकतानुसार चार कड़क शब्द भी कहने पडे या दो तमाचे भी मारने पडे, यह सब एक प्रकार का ऑपरेशन है, इसे जाहिर

मे नहीं करना चाहिये, हर जगह भी नहीं, एकात मे ही ... ही इसके लिये ऑपरेशन थीयेटर है ।

सामने वाले की भूल किसी एकात मे ही हो, ... भूल करे, यह आवश्यक नहीं है । अत तुरत सुनाने को ... अवसर पर अपने सयम को खो बैठता है इससे उसके लिये ... यह शर्त का पालन होता नहीं । अत 'चार के बीच मेरी पट्टी ... लगना आदि नये घातक जर्म्स–नयी खराबियों को न्योता दे देता है

एव ऑपरेशन करने वाला सर्जन जितनी अत्यन्त ... ही चीरफाड करता है, Operate करता है । एक तसु जितना ... नही है । इस प्रकार भूल सुधारने के लिये कटु शब्द कहने ... वगैरह रूप जो भी चीरफाड करनी हो उसमे इतनी सावधानी ... की जरूरत से ज्यादा नहीं । भूल को तुरत उलाहने वाला ... अत उसे अपने ऊपर कट्रोल नहीं होता है । *Never say a word ... a letter when you are angry* आवेश के वक्त कुछ भी ... हितावह नहीं होता है । चूकि उस आवेश मे व्यक्ति यह नही ... चीरफाड कितनी आवश्यक है, कितनी अनावश्यक। उसे उतना सोचने ... ही जो नहीं रहता है । अत इस बावत मे वह ज्यादा चीरफाड ... वाले' दर्दी को ज्यादा नुकसान पहुँचाता है ।

सर्जन एवं खूनी में फर्क

ऑपरेशनके लिये चीरा लगानेका अधिकार उसी व्यक्तिको है जो ... को दूर कर वापिस टाँका लगा सके और वो ही सर्जन डॉक्टर कहलाता है शरीर पर छेद लगाकर जो उसे सीता नहीं, खून को बहते हुए ही छोड़ देता है, वह डॉक्टर नहीं, खूनी कहलाता है । उसी प्रकार तीखे–कडुवे शब्दो का कथन स्वरूप चीरा लगा कर दोषों को दूर कर प्रेम के मधुर शब्दो से जो टॉका लगा सकता है, वही व्यक्ति सही मायने मे भूलों के बिगाड को दूर करने वाला सर्जन डॉक्टर है । खाली वेधक शब्दों से मर्म को वेध कर व्यक्ति को उसी दशा मे छोडने वाला व्यक्ति तो खूनी है

ऑन ध स्पोट भूलको टोकनेके लिये जीतोड प्रयास करनेवाला, स्वय आवेश मे होता है और सामनेवाला अपनी भूलके बचाव मे लगा हुआ रहता है अत लगभग ऐसी विचारधारा मे रमण कर रहा होता है कि "ऐसे को तो बराबर धमकाना

हसा । त शील

ही चाहिये, तो ही सीधे होते है वर्ना सिर पर सवार हो जाय ये तो लातों के भूत है, प्रेमभरी बातों से थोडे ही मानेंगे?" इसलिए उसे तो, पीछे से मधुर शब्दों के द्वारा टॉका लगाना चाहिये ऐसी कोई आवश्यकता ही महसूस नहीं होती।

और भी एक बात है ऑपरेशन के पूर्व डॉक्टर, मरीज को क्लोरोफोर्म सूघाता है बेहोश कर देता है जिससे मरीज डॉक्टर के ऊपर पूर्ण विश्वास रख कर अपना पूरा शरीर सपूर्णरूपेण डॉक्टर को सौप देता है। इस प्रकार होने से, फिर डॉक्टर चाहे जैसी और चाहे जितनी चीरफाड करे तो भी मरीज किसी भी प्रकार का प्रतिकार करता नहीं है, शरीर को हिलाता-डुलाता नहीं है या अपने अगों को खींच नहीं लेता है जिससे डॉक्टर को जो भी कुछ शस्त्रक्रिया करनी होती है वह आसानी से और शाति से हो जाती है।

बिमार आदमी को क्लोरोफार्म सूघा कर बेहोश किए बिना ही यदि ऑपरेशन किया जाय, तो कदाचित् दर्दी की इच्छा न भी हो तो भी प्रतिकार हो जाता है हाथ-पैर हिल जाते है और उन अवरोधों के कारण लाभ के बदले भयकर नुकसान भी हो जाय।

इसी तरह जब किसीके मन का ऑपरेशन करना हो तब सर्वप्रथम सपूर्ण विश्वास रख कर वह अपने मन को आपके चरणों में सौप दे वैसा क्लोरोफार्म उसे सूँघाना चाहिये और उसे सपूर्ण बेहोश बनाना चाहिये। जिससे कैसे भी कठोर शब्द क्यों न कहे जाय, या कैसी भी खींच कर थप्पड क्यों न रसीद की जाय तो भी उसका मन तुरत ही स्वीकार ही कर ले, Opposition एव उसके मन में खराब भावना-वैर वृत्ति आदि रूप कोई भी प्रतिकार ही खडा न हो।

मिस्टर माइकल

विश्वविख्यात शिल्पी माइकल एनजेलो हर दिन मित्रता के नाते एक पान के पास जाता था। पानवाले की जो दुकान थी, ठीक उसके पास ही एक बडा पत्थर था। पान के शौकीनों ने उसे पीकदान बना रखा था। बेचारा रगीन हो गया। अनगिनत मक्खियाँ उस पर भिनभिनाती थी। पानवाला परेशान। एक दिन उसने माइकेल से कहा → अरे यार। तू इस बला को उठा ले जा। न? कुछ काम लगेगा, शिल्पी जो है। माइकल ने मित्र की ऑफर स्वीकार ली, उसे अपने घर उठा ले गया। कुछ ही दिनों में उसने उसकी एक प्रतिमा बना दी। रात दिन की मेहनत से उसने अपने प्राण उस प्रतिमा में उँडेल दिए थे। प्रतिमा जीवत बनी थी देखने वाला आफरीन पुकार उठता और दाँतों तले

उगली दबाता. । हजारों लोग कतारबद्ध आने लगे और एक दिन [illegible]
भी आया । मूर्ती ने उसका मन हर लिया । उसने पेटभर [illegible]

तब माइकल ने कानाफूसी की → "यारा यह तो वो ही [illegible] है [illegible] तू बला कहता था ।"

"हे ? क्या बात करते हो ? सच कहते हो न?

"बिलकुल सच।"

और पानवाला अपने मित्र माइकल की कलाको देख [illegible]
"दोस्त । तु ने कमाल कर दिया । कल तक जिस पत्थर पर [illegible]
उसी पत्थर को तू ने आज विश्वपूज्य बना दिया   लोग प्रतिमा [illegible]
प्रशसा करते हुए नहीं अघाते है   धन्य है तुझे और धन्य है तेरी [illegible]
पत्थर को परमात्मा का जीवतरूप देनेवाले तुझे लाख लाख अभिनंदन [illegible]
के शिल्प को बिरदाये बिना वह पानवाला नही रह सका ।

माइकल ने तो अपनी लघुता बताते हुए कहा → "दोस्त । [illegible]
कोई कला नहीं है । मैं ने तो सिर्फ इस पत्थर के व्यर्थ भागो को निकाल [illegible]
परमात्मा अपने आप अदर से प्रगट हो गये"

परमात्मतत्त्व कहॉ है?

हर पत्थर में परमात्मा छुपे हुए है। जरूरत है माइकल जैसे कुशल शिल्पी की   जो उसके व्यर्थ भागों को दूर कर सके   व्यर्थ भाग दूर होते ही पत्थर अपने आप ही परमात्मा बन जाता है

इसी तरह हर मानवमें सज्जनता, सत स्वरूप और यावत् परमात्मस्वरूप छुपा हुआ पडा है   इस अर्थ में हर एक इसान छुपा रुस्तम है । देरी सिर्फ व्यर्थ भागरूप बुरी आदतें, दोष–कुसस्कारआदि के दूर होने की है

पत्थर किसी भी प्रकार का प्रतिकार किये बिना शिल्पी के हाथों मे रहे हुए ओजारो के प्रहारों को सहता है । इसीलिये उसके व्यर्थ भाग दूर होते है और परमात्मत्व प्रकट होता है ।

मानव बहुधा इन प्रहारों का प्रतिकार किये बिना रहता नहीं है, अत परमात्म स्वभाव तो दूर, सत स्वभाव भी नहीं और यावत् सज्जन–सा स्वभाव भी प्रकट नही होता है   चूंकि प्रतिकार यही सबसे बडा अवरोध है जो व्यर्थ भागों को दूर होने से अटकाता है ।

इसीलिए भूल आदि को दूर कर मनुष्य को सुधारने के लिए जब कभी

हसा । तू झील

ऑपरेशन करना पडे तो उसकी पूर्वभूमिका के रूप वह किसी भी प्रकार का प्रतिका न करे, वैसी एक हवा खडी कर देनी चाहिये सामने वाले का दिल इस प्रका जीत लेना चाहिये कि वह चाह कर भी प्रतिकार न कर सके।

क्लोरोफार्म

सामनेवाले के छोटे–बडे सत्कार्यों की अत करण से प्रशसा, हृदय से उसके गुणों की स्तवना, उसकी आवश्यकता का हार्दिक स्वीकार, Sweeter than honey and clearer than crystal मीठे और निश्कपट शब्द यह सब क्लोरोफोर्म है । इससे उसका मन इतना आवर्जित हो जायेगा कि फिर वह कैसी भी कडुवी घूट बिना किसी प्रतिकार के खूब आसानी से पी जायेगा ।

मन की ऐसी आवर्जितता वो ही उसकी बेहोशी है । अत उसके ऑपरेशन के पूर्व यह सब करना अत्यत आवश्यक है ।

अरे विचार तो यह आते है कि जिस का कडुआपन जीभ पर सिर्फ दो–तीन लम्हों तक ही रहता है और फिर as if nothing शून्य मे परिवर्तित हो जाता है अर्थात् उसकी कटुता चली जा सकती है वैसी कडुवी टेबलेट को भी जब केमिस्ट लोग सुगरकोटेड बनाने की माथापच्ची सिर उठाते है झझट मोल लेते है तो फिर जिनकी कडुआहट दो–तीन क्षण नहीं, घटे नहीं, दिन नहीं, महीने नहीं, यावत् दो–तीन बरस भी रह सकती है ऐसे शब्दों को क्यों नहीं सुगरकोटेड़ बनाया जाय? सुगरकोटिग विना की क्वीनाइन जैसी टेबलेटों को शायद जीभ बेहिचकिचाहट स्वीकार भी सकती है मगर बिना सुगरकोटिग के शब्दों को स्वीकारने की तैयारी लगभग मानव मन की होती नहीं है भूल को उसी वक्त सुधार देने के मिथ्याभिमान मे लयलीन आदमी तो उसी वक्त सीधी ही भूल की शस्त्रक्रिया शरू कर बैठना वात्सल्यपूर्ण दिल से प्रेमरस सिचित शब्दों को कहने का क्लोरोफोर्म सुघाने स्ववचनों को स्वीट बनाने का अवसर ही कहाँ रहता है उसक पास? वेहोश न हुआ मन, उसकी बातों के सामने विद्रोह करे और उससे भयकर पैदा हो जाय तो उसमें क्या आश्चर्य?

चुगलवाज जिदाबाद

कितने ही लोग निदा करने में कुशल होते है । कोई वात चल रही हो और उसमें इस सफाई से किसी व्यक्ति की पोथी पढनी शरू कर देंगे कि सामने वाले को पता भी न चले कि वह उस प्रवाह में वहने लगा है । चुगलवाज अपनी कला मे इतना पारगत होता है कि वह किसी की निदा सीधे रूप से शरू नहीं

कर देता क्योंकि वह जानता है कि आम आदमी तुरत ही किसी की निंदा
बात सुनना पसद नहीं करता है । अत पहिले जिस व्यक्ति की निंदा करनी चाहता
है उस व्यक्ति की किसी बात को लेकर अड-बड प्रशसा करेगा - "आप फलाने
व्यक्ति को जानते है ? उसने अभी-अभी धर्मशाला के लिये रुपये पच्चीस हजार
का दान दिया है । दो महीनों के पहिले उसने फलानी गौशाला को रुपये दस
हजार दान में दिए है । कहना पडेगा, बडा ही उदार दिल आदमी है।" ऐसी
दो चार अच्छी बातों को कहेगा, जिससे श्रोता उसकी बात को अच्छा मानकर
और बिना किसी प्रतिकार किये सुनने लगेगा (ऐसे लोगों के बीच ही आपने
आप को आप पाएँगे थोडी-सी नजर इधर-उधर घुमाकर चाहे तो आप अपनी
बुद्धि को कस कर इसका निर्णय ले सकते हैं ।।)

वर्ना यदि वह सीधा ही बाज पक्षी की तरह अपने शिकार की ओर झपटने
लगे या मुद्दे की बात अर्थात् किसी अडोस-पड़ोस की हत्कि सुनाने लगे कि "आप
फलाने भाई को पहिचानते है? बिलकुल चार सौ बीस है मुह में राम बगल
में छुरी है कहने को भगत है मगर एक नबर का ठगत है पैसे बटोरने के
लिये ऐसे-ऐसे धधे करता है ।" तो श्रोता उसकी बातों को सुनने के लिये तो क्या
खडा रहे, ऊपर से चार सुना के चलती पकड़ेगा .. कि 'मिस्टर। कुछ कामधाम
है या नहीं? निकम्मे आदमी की तरह ऐसी-वैसी बातें किया करते हो ।' अत
निंदक अपनी चालाकी को काम लगाते हुए पहिले अच्छी-अच्छी बाते करता है
फिर उसे जब प्रतीति हो जाय कि सुननेवाला मेरी बातों का लट्टू हो गया है अब
इसे टट्टू बनाकर मैं यदि इस पर सवार हो जाऊँ तो कोई जोखिम नही है तब
'मगर या परतु' शब्द बोलकर गुलाट खाता है. "हॉ,। दान तो देता है मगर आपको
पता है? वह माल में कैसी भेल-सेल-गडबडी करता है? ग्राहकों के साथ कैसी
बेइमानी करता है? नौकरो का कैसा खून चूसता है?" यह मगरमच्छ-सा "मगर"
Diversion ही नहीं अपितु U-turn है । गाडी सीधी विपरीत दिशा मे ही दौड़ने
लगती है । प्रशसा से शरू हुआ भाषण निदा की गदी गटर सी बदबूदार बातें
परोसने लगता है और श्रोता उसे भी सुनने लगता है चूकि उसे इस बात की
गध काफी देर से आती है और आ भी जाय तो वह कीचड़ में फसे आदमी
की तरह लाख छटपटाने के बावजूद भी और चाह कर भी अपने आपको निकाल
नही पाता है यह दल-दल ही भयकर है.

निदा की ऊषा सगीत

निदको की इस कला की व्यग्य लेखकों ने इस तरह कदर दी है "निदा का प्रारभ सगीत से होता है"

यह निदा यानी क्या?

एक त्राहित व्यक्ति की वास्तविक अथवा अवास्तविक भूलों को उसके विद्यमान अथवा अविद्यमान दोषो को थर्डपर्सनके आगे अलपना ।

अब देखना यह है कि जब थर्ड पर्सन को कहने के लिये अगर सगीत से उसे सुगरकोटेड बनानी आवश्यक है, तो जब उसी बात को सेकंड पर्सन अर्थात् जिसकी भूल हो उसको कहने के लिये सगीत की सुगरकोटिग आवश्यक ही नहीं, अत्यन्त आवश्यक है यह क्या समझाने की बात है?

सामने वाले की भूलों को अथवा दोषों को सुधारने जिसकी तमन्ना-उत्कण्ठा हो, उसको तो सामने वाले के दिल को जीतना चाहिये उसके दिल में अपना स्थान जमाना चाहिये । सामने वाले के दिल दिवानखड में प्रवेश करने के लिये गुणनिरीक्षण खिडकी-झरोखें है जब कि दोषनिरीक्षण तो सघन दीवार । गुणों के द्वारा अदर प्रवेश कर पायेंगें और दोषों के द्वारा यदि प्रवेश करने की मूर्खता की तो दीवार से सिर टकराये बिना नहीं रहेगा ।

अत अन्य की भूलों को सुधारने के आप जैसे इच्छुक व्यक्तियो को चाहिये कि वे सर्वप्रथम सामनेवाले के गुणों की जीजान से प्रशसा करे (बाहरी दिखावा नहीं या मक्खन लगाने वाली बात भी नहीं होनी चाहिये, चूकि उससे गलत असर हुए बिना रहती नहीं) इससे आप सामनेवाले व्यक्ति के प्रिय बनते है । सामनेवाले आदमी के दिमाग में-हृदय में आपके प्रति एक चाहना खडी होती है जिससे उसके स आप चाहो सो काम निकलवा सकते है ।

चार्ल्स श्वेब की खूबी

अमेरीका के चोटी के धनकुबेरों में एक मशहूर नाम था 'एन्ड्रुज कार्नेगी' वह मिलान र था । उस जमाने में यह अबजोपति अपने यहाँ काम कर रहे नौकर को दस लाख डालर सालाना तनख्वाह दिया करता था । अजीब लगता न? ढूढने वालों को कारण मिला । उस राज को हथिया कर जब उन्होंने लोगों को बताया तब लोगों ने यहीं कहा-"आदमी इस तनख्वाह के वाकई योग्य है ।"

दस लाख डॉलर पानेवाले उस शख्स का नाम चार्ल्स श्वेब था । उसकी खासियत और खूबी यह थी कि वह अपने हाथ नीचे काम कर रहे आदमियो

से काम कैसे लेना और उनका हौसला कैसे बढाना यह बडी [illegible]

अपनी शक्ति और कुशलता के बारे मे चार्ल्स श्वेब [illegible] अपने बॉस की बारबार की टीका-टिप्पणि से आदमी का हौसला-[illegible] नष्ट और पस्त होता है उतना और किसी से नही होता । प्रोत्साहक [illegible] का काम करते हैं जब कि टीकात्मक कटु-कठोर वचन एटम [illegible]

वे अपनी लोकप्रियता का जिक्र करते हुए कहते थे कि '[illegible] तक मै किसी की भूल को बताता नहीं और एक छोटी-सी खूबी [illegible] जाए, तो उसकी भरपेट प्रशसा किये बिना रहता नही ।"

हम और हमारा मन

हमारी प्रवृत्तियाँ ठीक इससे विपरीत है । 'खूबी की प्रशंसा नहीं [illegible] डिक्षनरी-शब्दकोशों का छप्पनिया दुकाल पडा हो और खामी-[illegible] भूलकी भरपेट टीका-टिप्पण । मानो उस वक्त आलमारी भर कर डिक्शनरियाँ [illegible] गई हो '

यह औंधी प्रवृत्ति हम जन्मे तभी से करते आये है । कहते है [illegible] एक नादान अवस्था है जवानी में दिमाग आसमान पर चढा रहता है । अत [illegible] विवेकहीनता से मढ दी जाती है जवानी में इस औंधी प्रवृत्ति को, [illegible] नहीं लाखों अशात परिस्थितियों को पैदा करने वाली है, सीधी करने की एक [illegible] भर भी कोशिश की?

अपनी इस औंधी प्रवृत्ति का एक छोटा-सा प्रेक्टीकल नमुना देखिये

सुबह होती है साफसूफी करने वाली आया आती है पूरा घर बुहार जाती है बरस के तीन-सौ-चौसठ दिन तक घर में थोडा सा कचरा भी न रह जाय, उसका पूरा ध्यान रखने वाली उसी आया के हाथो तीन सौ पैंसठवे दिन भूल से कहीं कोने में कूडा-करकट-कचरा रह गया हो तो ?

अब आप ही सोच लीजिये । आप क्या करेगे ?

तीन सौ चौसठ दिन घर को साफसूफ रखने वाली उस आया की एक दिन भी प्रशसा नहीं

और तीन सौ पैंसठवे दिन थोडा-सा कचरा भूल से साफ नहीं करने के बदले क्रोध से आगबबूला होकर उस पर बरसे बिना रहेगे नहीं ।

सामने वाले की अच्छाई की प्रशसा बिल्कुल नहीं और छोटी-सी भूल को देख कर टीका टिप्पण किये बिना रहना नहीं ।

हसा । तू झील

जब तक हम सामने वाले व्यक्ति के प्रिय नहीं बनते हैं, उसके मन को आवर्जित कर उसके अन्तर्मन का विश्वास सपादन नहीं करते हैं तब तक वह हमारी बात को सानद स्वीकार ले और तदनुसार सुधरने के लिये प्रयास करे, इस बात में कुछ दम नहीं है । ऐसी आशा रखनी ही व्यर्थ है, मृगजल में नीर की भ्रान्ति सम है ।

लोकप्रिय बनने का कीमिया

हाउ टु विन फ्रेन्ड्ज एन्ड इन्फ्लुयन्स पीपुल में डेल कार्नेगी ने लोकप्रिय बनने के कई तौर तरीके लिखे हैं मगर सबसे अधिक कारगर कीमिया मेरी दृष्टि से निम्न हो सकता है

"अन्य को प्रिय बनने के लिये सामने वाले इन्सान की खूबी-विशेषताओं की प्रशसा करनी जरूरी है और तदर्थ भूल हुई कि ऑन द स्पोट सुनाने की बुरी आदत छोडनी जरूरी है ।"

और बहुधा ऐसा भी देखा-जाता है कि जिस को हम भूल मान बैठे हुए वह हमारी कोरी कल्पना की ही उपज थी ।

सामनेवाले व्यक्ति के अमुक आचरण को हम भूल मान लेते हैं मगर यदि सच्चाई से देखा जाय और ईमान से सोचा जाय तो मुझे लगता है, सामने वाले की जैसी परिस्थिति थी वैसी ही परिस्थितियों से हमें जो गुजरने का मौका मिल जाय तो Most probably अधिकतर शक्यता यह होगी कि हम भी वैसा ही आचरण करेगे और उसको भूल मानने की बजाय योग्य आचरण का लेबल भी लगायेंगे ।

अन्य व्यक्ति जब ऐसा आचरण करता है उस वक्त हमारी आँखें सिर्फ उसका आचरण ही देखती है उसकी अच्छी-बुरी परिस्थितियाँ, उसकी मानसिक--सामाजिक विवशताएँ आदि तो हमारी दृष्टि की पहुँच से परे ही होती ... मजबूरी हम से ओझल ही रहती है । अत उस आचरण पर बेझिझक की मोहर प्राय थोप देते हैं।

इसका एक कारण यह भी होता है कि हम ज्यादातर सामनेवाले की प्रवृति दे... नजरों से छूने के ही आदी हैं । सामने वाला व्यक्ति उचित आचरण ... सकता है ऐसा हमने स्वप्न में भी स्वीकारा नहीं है । औरों की छोटी-... प्रवृ... को हम अविश्वास से देखते है और उसी ढग से विचारों की तराजू पर तोलने लगते हैं, चूकि हमारा अपना अहभाव ज्यादातर सामने वाले व्यक्ति का

भूलें ही दिखाता है

इस अहकारसे हमारी भूल हो तो भी हमें नहीं दिखेगी और औरोंकी की भूल ही दिखनी शरू हो जायेगी इतरों के महाभारत में एक दृष्टांत है

महाभारत की द्रौपती

द्रौपदी ने एकदा श्रीकृष्ण को फरियाद के लिहाजे में कहा ... तो भक्तजनवत्सल है । अनतशक्तिसपन्न है । विश्वव्यापी है। और ... है तो फिर उस वक्त जब भरसभा में दुष्ट दुर्योधन की दुराज्ञा से दु... मेरे चीर खींचे, तब शरु में आकर आपने मेरी लाज क्यों नहीं बचाई ? और ... समय आप मेरी सहाय के लिये आये? क्या यह आपकी गभीर भूल नहीं है ?

तब मधुर स्मित बिखेरते हुए मधुसूदन मीठे शब्दों में बोले और ... उसमें भूल मेरी थी या तेरी? वह तू ही सोच । जब ऐसी विषम परिस्थिति खड़ी हुई तब तुने प्रथम पाडवों को याद किया और स्वलज्जा-शील की रक्षा के लिये उनका शरण लिया उन्हे प्रार्थना की. फिर क्रमश भीष्मपितामह आदि को याद किया । जब कोई सहाय करने नहीं आया, तव तु ने मुझे एकदम अंतिम घडी पे याद किया । ज्योंहि तुने मुझे याद किया कि मै तेरी रक्षा के लिये प्रयत्नशील बना । मैं अतिमसमय पर आया उसमें भूल मेरी या तेरी ?

हमें भूल दिखती है जरूर, मगर

हाँ, हमें भूल दिखती जरूर है मगर अपनी नही औरों की । यह हमारी सायकोलॉजी बनी हुई है । अत सामने वाले की परिस्थिति देखी-समझी न हो तो हम उसके अमुक आचरण को खूब आसानी से भूल का लेवल लगा बैठते है यह हमारी सायकोलॉजी की पैदाश है मल्टी प्रोडेक्ट है ।

'भूल देख कर धमकाना' इस गधे की पूछ-से सिद्धात को पकड़ बैठा हुआ व्यक्ति ऐसे अवसर पर कटु शब्द सुनाये बिना नहीं रह सकता है । उस वक्त सामने वाला व्यक्ति यदि अपनी परिस्थिति-मजबूरी आदि समझाने की कोशिश करे, तो आवेश आदि के कारण वह उसे समझने के लिये ही तेयार नहीं होता है इतना ही नहीं, उसके तर्कों को सुनने की बजाय तोड़ने का ही प्रयास करने लगता है अत एव "बस, 'तुम्हे तो बचाव करने का ही सूझता है, एक तो भूल करनी और ऊपर से स्वीकार नहीं करना वाह रे, चोरी के ऊपर सिरजोरी ।' इत्यादि और भी कठोर सरस्वती निकलती है एव सामने वाले के दिल पर दुर्भाव ज्यदा घट्ट होता है । इस तरह सामनेवाले के दिल में भी द्वेष और दुर्भाव की

हसा । तू झील

मात्रा बढ़े बिना नहीं रहती

"कहता हूँ वह तो सुनना नहीं, समझना नहीं और मन में आये सो बक-बक करते रहते हो अपनी ही गाडी दौडाते जा रहे हो " तकरार और टटा फसाद बढ़ जाता है ।

दिल घायल हो जाता है चूकि एक दूसरे के दिल पर कुठारा-घात लग चुके होते है । और फिर जब दो-तीन घटों के बाद स्वय या अन्य के कहने से सही बात और परिस्थिति का पता चलता है तब अपार पश्चाताप होता है

ओह "मैंने जल्दबाजी में धमका दिया ? नहीं बोलता तो क्या बिगड़ने वाला था ? नाहक उसका दिल तोड दिया "

फिर टूटे हुए दिल को जोडने के लिये, पराङ्मुख हुए उस दिलको सन्मुख करने के लिये अनथक प्रयास चालु होते है । परतु अब तक काफ देरी हो चुकी होती है "*अब पछताये क्या होता है जब चीडिया चुग गई खेत ।*" कदाचित् टूटा हुआ दिल वापिस जुड भी जाय मगर सन्धिस्थान या निशानी थोडे ही मिट जाती है ? **कलापी** की वह कविता रे *पखी नी ऊपर पथरों फेंकता फेंकी दीधो* "

पछी के ऊपर पत्थर को फेंक दिया उससे आज दिन तक उसके दिल में हमारे प्रति जो प्रेम-स्नेह और विश्वास था उसमें दरार तो पड ही गया फिर उस प्रेम आदि की पुनःस्थापना के लिये कितने भी प्रयत्न क्यों न किया जाय, पूर्व जैसा विश्वास खडा हो नहीं पाता है । एक पछी के दिल में भी पत्थर के घाव का अमुक दर्द तो रह ही जाता है । वह अब, कभी भी निर्भीक हो कर मुक्तमन से पास आता नहीं है ।

तो फिर मनुष्य के दिल में कटुवचन के घाव का पूछना ही क्या, ... चोट से भी वचन की चोट ज्यादा गहरी होती है ।

शेर का घाव

जगल के बोर्डर पर एक भील रहता था । वह हर दिन जगल में जाता । एक शेर भी वहाँ आता । योग की बात है कि दोनों के बीच मित्रता हो । फिर तो हर दिन अपने पशुमित्र के साथ वह चित्र विचित्र बातें करता रहता था । रात को वह भील अपनी औरत को सारी बातें कह देता था । अत उसकी पत्नी का भी मन हुआ और उसने अपने पति से अनुरोध किया कि वह ... विलक्षण मित्र को एक बार घर लेके आये पत्नी के कुतुहल से प्रेरित ह... भील भी शेर के आगे अपनी पत्नी की इच्छा बारबार दोहराता रहता था । परन्तु

शेर इन्कार करता रहता था । किन्तु उसके पुन पुन के [illegible]
एक बार वह उस भील की कुटिया पर आया । सजोगवशात् [illegible]
हुआ मुर्दा खाया हुआ था, अत उसका मुह भयकर बदबू [illegible]

भील की पत्नी उस भयकर दुर्गंध से उकता गई [illegible]
और तुरत बोल उठी ☞ 'छट् । ऐसा आपका मित्र ? इसके मुह [illegible]
भयकर बदबू आ रही है ।' शेर ने यह सुना और वह [illegible]
चुपचाप चला गया । परतु फिर उस दिन के वाद उसने [illegible]
दिया, मैत्री को तोड दी ।

एक दिन, खोजते-खोजते भीलने शेर को ढूढ निकाला → [illegible]
अब क्यो दिखते नहीं हो ? तबियत-बबियत तो ठीक है ?

भील के प्रश्न का उत्तर शेर ने दे दिया → ' तबियत [illegible]
है मगर अब अपन दोस्त नहीं है चूकि तेरी पत्नी ने जो [illegible]
हृदय को भयकर आघात पहुँचा है ।"

"अरे यार । उन शब्दों पर इतना क्या महत्त्व देता है ? [illegible]
घाव लगाना ?

"दोस्त । तुझे चाहे कुछ भी लगे . मुझे कैसी दिल पे [illegible]
है, उसकी अदाजा तुम नहीं लगा पाओगे । ऐसा कर, तेरे हाथ मे [illegible]
उसको मेरे पॉव पर लगा "

"अरे, मै मेरे मित्र को मारूँगा क्या? भील ने वात उडानी चाही [illegible]
उसे आश्चर्य भी हुआ ।

परतु, शेर ने काफी आजीजी-अनुनय किया तब उसने अत्यत व्यथित दिल से तीर मारा और फिर निकाल लिया । तीन दिन के बाद शेर उसे पुन मिलने आया और अपना घाव बताते हुए बोला → दोस्त । इस घाव पर तो रूझान आ गई, मगर तुम्हारी पत्नी के शब्दों का घाव अभी भी ताजा है उस पर रूझान नही आई है "

शब्दो के घाव ज्यादा गहरे और घने होते हैं । इसीलिये तो शब्दयुद्ध मे से शस्त्रयुद्धो का निर्माण होता है, परतु शस्त्रयुद्ध में से शब्दयुद्धका सर्जन लगभग नही होता है । "अधे के बच्चे अधे होते है" उसी एक छोटे-से वाक्य ने महाभारत के भीषण सग्राम मे नींव का पत्थर रखा था न? किसी कल्पित भूल या दोषको लेकर जब हम किसी व्यक्ति को डॉट देते हैं तो उसके दिल को ऐसी ठेस पहुँचत

है कि फिर उसके बाद उसको लाख समझाने पर भी या उसके साथ सुदर से सुदर बर्ताव करने पर भी उस घाव की निशानी सपूर्णतया मिट नहीं सकती उसका सपूर्ण रूझान आ नहीं पाता ।

आपसे एलर्जी ?

"भूल नजरों में आई और तुरत *हम बोल उठे*" ऐसी वृत्ति से हम सामने वाले के दिल को तोडते रहते है फिर कदाचित् समझौता कर भी लेते हैं तो भी बारबार के सधिस्थान तो रह ही जाते हैं । ये ही अनगिनत सधिस्थान इकट्ठे होकर ग्रन्थि रूप में परिवर्तित हो जाते है । जिस ग्रन्थि के कारण वह आपसे हमेशा दूर-दूर भागता फिरेगा । उसे आपका सहवास प्रीतिकर नहीं, उकतानेवाला लगेगा। उसे आपके चेहरे से नफरत और एलर्जी हो जायेगी जिसको कोई Antihistamine टेब्लेट दूर नहीं कर पायेगी ।

इससे विपरीत जिस बुद्धिमान पुरुष ने एक अपनी आदत ही बना ली कि *"भूल लाख दिखे, उस वक्त On the spot तो कुछ बोलना ही नहीं"* उसे फिर पछताने जैसी परिस्थिति से जूझना नहीं पडता । वह जिन ५-६ घटे को बीतने देता है वे उसके लिये काफी सहायक सिद्ध होते हैं चूकि उस बीच उसका आवेश आदि दूर हो जाता है जिससे प्रत्येक पहलु पर सोचने का उसे अवकाश मिल जाता है । अत स्वय या अन्य के द्वारा सच्ची बात और परिस्थिति का आकलन हो जाने से कुछ कहने का भी नहीं रहता है ।

अनुभवसिद्ध बात

यह बात अनुभवसिद्ध है कि 'तुरत कुछ भी न कहना' इस अच्छी आदत के कारण या अन्य किसी कारण भूल के अवसर पर भूल कहने में विलब [illegible] कि *"ठीक है, अवसर पर कह देगे"* तो बहुधा ऐसा देखा गया है कि कुछ [illegible] उन भूलों पर Reflect करने से पता चलता है कि इसमें कुछ कहने था भी क्या? ऐसी परिस्थितियों में तो वह क्या मैं भी यही करता ॥

और कदाचित् ऐसी प्रतीति न भी हो तो भी ४-३ घटों के बाद एकात [illegible] उस व्यक्ति को भूल के विषय में कुछ कहते हैं और सामने से जब अपनी परिस्थिति, आशय आदि को स्पष्ट करता है तब हमें भी उसका [illegible] बर्ताव इतना गभीर नहीं लगेगा जितना हम पहिले माने चुके थे। और उस [illegible] स्पष्टता भी हम आसानी से स्वीकार लेंगे क्योंकि उसमें बाधकरूप जो हमारा [illegible] था, वह शात और ठडा पड गया होता है ।

अर्थात् उसके अमुक बर्ताव के विषय में "न कहना" [illegible]
था, वह हमें उचित लगने लगता है । जितने अनावश्यक [illegible]
जाय, उतना पेशेन्ट के लिये फायदा ही सिद्ध होता है । कदाचित् [illegible]
की अमुक प्रवृत्ति हमें भूलरूप लगे भी सही, और ऑपरेशन करना भी पड़े [illegible]
भी इतना तो जरूर होगा कि हम ऑपरेशन के नियमों को- [illegible]
जरूर ध्यान में रखेंगे, जिससे अन्य गभीर नुकसान न हो पाये ।

भूल के विषय में ओन ध स्पोट अधाधुध भाषण करने वाले [illegible]
को रात के समय शय्या पर पड़े-पडे शात और स्वस्थ चित्त से दिनभर का [illegible]
चिट्ठा बनाना चाहिये । सपूर्ण दिन में नौकर-चाकर, मुनीम, पुत्र-पत्नी आदि [illegible]
व्यक्तियों को कितनी बार किस किस भूल को लेकर उलाहना दिया या [illegible]
कहे, उस सब का विवरण जो तैयार किया जाय, तो क्या सचमुच ही वह [illegible]
लाहने योग्य था ? या उसमें कई भूलें नेग्लीजीबल भी थी ? इस प्रकार के [illegible]
को स्वस्थरूप से मानसपटल के ऊपर अकित किये जाय तो मुझे लगता है कि
नहीं नहीं तो उन दस प्रसगों में पाच तो ऐसे लगेंगे जिनमे ओह । इसमें क्या उलाहना
देना था ? ऐसी छोटी-छोटी भूले तो मेरे से भी हो जाती है ।।

जर्मन सैन्य का कानून

उपरोक्त सिद्धान्त के अनुरूप ही था जर्मन सैन्य का कानून। सैन्य में किसी एक Soldier सिपाही को दूसरे Soldier की भूल लगे और फरियाद करने जैसा लगे तो तुरत कुछ भी नहीं कहना । भोजन आदि हो जाय एक रात बीत जाय और मन कुछ स्वस्थ और शात-सा बन जाय तब फरियाद कर सकते है । इतनी प्रक्रिया किये बिना ही जो सैनिक तुरत फरियाद करने जाता है उसको सजा होती है, कानून का भग जो किया ।

ओन ध स्पोट भूलों को कहने वाला तो नगण्य भूलों में भी सामने वाले को उलाहना और डाँट डपट सुना देता है और सामने वाले के दिल के उससे टुकडे भी होते रहते है "इन्हे तो बक-बक और टोक-टोक करने की आदत पड़ गई है ऐसा विचार कर सामने वाला व्यक्ति भी इतना बेहया बन जाता है कि फिर तो वह किसी बडी भूल को लेकर किये गये महत्त्वपूर्ण सूचन को भी इसी तरह In and Out कर देता है । "बाघ आया बाघ आया-बचाओ बचाओ" वाला खेल हो जाता है ।

बड़ा अपराध हो तो

सामने वालो ने कोई बहुत बडा गुनाह कर दिया । ऐसा बडा कि बदले की आग तुरत दिल में सहस्रमुखी ज्वालाओं के साथ प्रकट हो जाय प्रतिशोध लिये बिना हृदय शात ही न हो ऐसे अवसर पर भी अपना मानसिक सतुलन बनाये रखना चाहिये । और जबरन् भी कालविक्षेप कर ही लेना चाहिये । (वकचूल को नियम था "खून करने के पहिले सात डग पीछे हटने का" और इस कालक्षेप के नियम ने उसे अपनी बहिन का खूनी होते होते बचा दिया ।।)

कालविक्षेप यदि न किया जाय, और सीधा ही यदि action ले लिया जाय तो पहिली बात तो यही है कि आवेश के कारण हम सामने वाले के अपराध को बौद्धिक–विवेक की तराजू पक्ष तोलते ही नहीं । "क्या वह अपराध सचमुच ही भयकर है जितना मुझे लग रहा है? इसका जितना प्रतिशोध लेना चाहता हूँ इतना क्या अत्यत ही आवश्यक है? यदि इसका इतना तीव्र प्रतिशोध मैं इस तरह जल्दबाजी में लेने को 'दे दौट समुदर में' वाली बात करूँगा, और यदि सामने वाला रूष्ट होकर मेरी ऐसी तैसी कर देगा तो? अर्थात् "उसकी कितनी ताकत है और मेरी कितनी?" ऐसे विचारों को नहीं करते हुए जो जल्दबाजी में कदम उठाता है उसको अपने किये का पछतावा सारी जिदगी काँटे सी चुभन पैदा किये बिना नहीं रहेगा ।

जबकि कालविलब में इस एगल से ढ़ेर सारा लाभ नजर आयेगा सबसे पहिला यह कि ज्यों–ज्यों समय बीतता जाता है त्यों–त्यों वह अपराध हमें मामुली लगने लगता है । बदले की आग जो हमारा सीना तोड कर बाहर आने की कोशिश कर रही थी वह धीरे–धीरे शात होने लगती है । जिससे कोई सभवित भयकर न होते–होते रह जाती है ।

अब्राहम लिंकन की कला

लिकन बैरिस्टर था । उसके पास एक क्लायन्ट आया । दुकान के पुराने के साथ उसको वैर–विरोध हो गया था । दुकान में हिस्सेदारी तो छोड थी मगर द्वेष की ज्वालाएँ दोनों के दिल में अब भी ठडी नहीं पडी थी स असील ने दो पत्र लिकन के सामने पेश किये

"देखिये न वकील साव । यह उसका २० पन्ने का गालीगलौज से भरा हुआ पत्र। गडे मुर्दे उखाडना–सा काम कर रहा है वह । पुरानी–पुरानी बाते याद दिला–दिला कर उन्हे विकृत कर मुझ पर भयकर आरोप लगा रहा है ।

आखिर वह बेवकूफ समझ क्या रहा है अपने मन में। क्या सिर्फ उसे ही [illegible] आता है, मुझे आता ही नहीं? क्या मैं उसकी इस प्रकार की बेवकूफी [illegible] सह लूँगा। वह कैसे भी सताये मैं चुपचाप हाथों में चूड़ियाँ पहिन बैठा [illegible] वकील साब। सच कहता हूँ उसकी यदि अब ऐसी भ्रान्तियाँ हैं तो मैं [illegible] शीघ्र दूर करना चाहता हूँ उसने २० पन्ने स्याही से पोते है। मैंने ४० पन्ने पोत दिये है। गालीगलौज की Instant Ready made dictionary मेरे [illegible] भी है यह लीजिये वह पत्र" यू कहते हुए उस व्यक्ति ने अपनी जेब से दोनों पत्र निकालकर लिकन के हाथों में थमा दिये। लिकन आश्चर्य मुग्ध होकर इस अजीब क्लायन्ट की अजीब बातें सुन रहा था.

"और कायदा-कानून की दृष्टि से मैं इसमें कहीं फंस तो नहीं [illegible] यह जरा आप सरसरी नजरों से देख लीजिये " सख्त प्रतिशोध की भावना के साथ अपने भूतपूर्व साझी का पत्र लिकन को पकड़ाया।

उसका आवेश देखकर लिकन ने कालविक्षेप सिद्धात के बल चलने को मुनासिब माना। अत उसने चतुराई से कहा ☞ "देखिये भाईजान। आपकी [illegible] बिल्कुल सच है इस प्रकार का तमतमाता यदि उसने लिखा हो तो कौन [illegible] करेगा ? पर देखिये अब जरा मैं बिझी हूँ आप ऐसा कीजिये कि ये दोनों पत्र यहीं भले पडे रहे अवसर मिलेगा तब मै इन दोनों पत्रो का अध्ययन कर लूगा और विचार भी लूँगा। आप मुझे आज से ठीक एक सप्ताह के बाद मिलियेगा।"

सप्ताह पूरा हुआ और वह ऑफीसके द्वारा खट-खटाता हुआ आ गया। उसका चेहरा काफी कुछ बता देता था। रोष और प्रतिशोध की भावना मे काफी कमी आई थी, यह लिकन ने प्रतीत किया। तीर ठीक निशाने पे लगा, इसका लिकन को हर्ष था। लिकनने एक्टींग चालु की "ओह। मैं तो एकदम भूल ही गया। कैसा भूलक्कड हूँ मैं ? आपको देखा और आपका पत्र याद आया। खैर कोई बात नहीं एक सप्ताह के बाद आप वापिस आना स्योर देख के रखूँगा " पैर पटकता हुआ वह नाराज क्लायन्ट 'वापिस मिलूँगा' कहता हुआ चला गया।

लेनदार व्यक्ति जैसे देनदार के पास मुद्दत पूरी होते ही आ धमकता है त्यों वह क्लायन्ट सप्ताह पूरा होते ही लिकन के सामने जा पहुँचा। दूर से उसे आते देख लिकन ने उसके पत्र को हाथ में लेकर पढने की एकटींग की। "ओह। आप आ गए क्या? अच्छा हुआ देखिये न, आपका ही पत्र मैंने हाथ पर

लिया था ।"

"हाँ ठीक है पत्र कैसा लगा, वकील साब ?"

"आपने लिखा तो बहुत सावधानी से है हाँ। कहीं आप को कोई फंसा दे वैसा आपने लिखा ही नहीं " लिंकन ने पत्र की थोडी प्रशंसा की ।

"तो लाइये यह पत्र, आज ही उस पर भिजवा देता हूँ बेटमजी को पता भी तो चले कि दुनिया में सिर्फ शेर ही नहीं हुआ करते हैं, उनके माथे सवाशेर भी होते है" असील ने अपनी अधीराई प्रकट की ।

"हॉ, आपकी बात सच्ची है । यदि वह इस पूरे पत्र को ध्यान से पढेगा तो उसके रोम-रोम में अगनज्वालायें व्याप्त हो जायेगी । परंतु मुझे एक विचार आता है कि वह इस लंबे पत्र को ध्यान से पढेगा क्या ? आप तो जानते ही है अपने साझी को, वह कितना व्यस्त रहता है अपने कार्यो में । यदि इतने पत्रोंको देखकर वह इन्हे सीधे ही वेस्टबोक्स में डाल दे, तो सारा मजा किरकिरा जायेगा। आपकी धारणा निष्फल जाय, ऐसा अपन को कुछ करना नहीं है अत क्या आपको यह उचित नहीं लगता कि इस पत्र को कुछ छोटा कर देना-चाहिये ?" लिंकन ने चतुराईसे इस बात को धीरे-धीरे असील के गले उतार दी।

"अच्छा तो वकील साब, मैं इसको छोटा बना के लाता हूँ " दो-चार दिन बीते और वह वापिस आया । पत्र की लेन्थ में 50% की कमी देख, लिंकन को आनंद हुआ ।

"सुंदर । बहुत सुंदर ।। आपने खूब सुंदर कार्य किया देखिये न, पहिले वाले ४0 पन्नों से ये २0 पन्ने कितने सुंदर लगते हैं ? पत्र भले छोटा बन गया मगर इसमें शब्द कैसे असरकारक और चोट पहुँचाये वैसे सेट हुए है । मुझे । है कि और भी यदि इन शब्दों को घटाया जाय तो यह पत्र और भी ज्यादा .न जायेगा लंबे पत्र से भी छोटे टेलिग्राम की कैसी वेधक असर होती , ने नई चाल चली । दिन प्रति-दिन असील का गुस्सा तो घटता ही था । उसने लिंकन की बात स्वीकार ली । चार-पाँच दिन तक मेहनत उ ने पत्र को आधा कर दिया । दस पन्ने का पत्र लेकर वह लिंकन के पहुँचा ।

"नाईस । वेरी नाईस ।।" लिंकन तो मानो खुर्सी मे उछल था । उसने असील की बुद्धिमत्ताकी अपार प्रसंशा की । फूलनसी भाई तो फूल कर ढोल हो गये ।

"तो अब इसे भेज दूँ? उसको करारी मजेदार चोट पहुँचेगी इस मे मत

कहता हूँ न, वकील साब?"

लिकन तो पूरे खेलाडी थे। शतरज का प्यादा किस वक्त किधर ... इस में पूरे होशियार। उन्होंने अब नये सिरे से बात की

"आप पर उसने जो पत्र लिखा था न, उस पर जरा तारीख-तिथि तो देख लीजिये" लिकन ने अपना-सा मुह बनाते हुए कहा।

असील ने तारीख देख कर बताया। तब खेल को अन्तिम ... अपने प्यादे को घुमाया → देखिये महाशय। उसने पत्र लिखा ... आज महीना ऊपर हो गया। पत्र लिख कर उसने शरू-शरू के 5-7 दिन तक तो प्रत्युत्तर की राह देखी होगी फिर तो उसने भी इस बात को भूल दी ... अब इस पत्र की उस पर क्या असर होगी आप ही बताइये?"

"तो क्या इस पत्र की उस पर कुछ भी असर नही होगी?"

असील का सारा उत्साह गहरे पानी पेठ-सा हो गया।

"हॉ, मुझे तो ऐसा ही लगता है। आप जैसी असर चाहते है वैसी ... तो होने से रही अत इस पत्र को भेजने से भी क्या लाभ?"

"तो फिर, अब इस पत्र का मैं क्या करूँ?"

"मेरी तो राय है कि आप इसे फाड कर फेंक दो, पत्र वाली बात ही दिमाग से निकाल दो। न उसने पत्र लिखा न आपने उसको पढा या ... दिया अथवा उसने पत्र लिखा आप को मिला ही नहीं मानो पोस्ट में गुम हो गया"

(मनोविज्ञान की यही एक बडी खासियत है कि आप क्या और किस दृष्टि से उस बात को लेते है उसका काफी बडा अर्थ होता है। दो आदमी आपसे कुछ दूर खडे आपस में बातें कर रहे हैं आप यह सोचकर उन पर धिक्कार बरसा सकते हैं कि "वे मेरी निदा कर रहे है" और यह सोच कर उन्हे प्यार कर सकते है कि "वे मेरी पेटभर के प्रशसा कर रहे है" सोचने-सोचने मे फर्क है। कोई गालीगलौज भरा पत्र लिखता है सोच लीजिये, आपको मिला ही नहीं, खेल खत्म। उदाहरण के तौर पर इस हिन्दी भावानुवादक की ही बात लीजिये न बदे पर गत दिनों में दो एक ऐसे पोस्टकार्ड-पत्र आये जिनमें गाली गलौज के सिवाय और हीन कोटि की भाषा के अलावा कुछ भी लिखा हुआ नहीं था बदे ने सोच लिया पोस्टकार्ड मिले ही नहीं मुझे अच्छे-अच्छे पत्रों को भारतीय पोस्ट हजम कर जाती है तो ये दो पोस्टकार्ड किस खेत की मूली होते हैं?

हसा। तू झील

बदा तो निश्चित रहा मगर उधर वालों के हाल देखने जैसे होगे। वे सोचते होंगे पोस्ट की गडबडी चलती है PC मिला होगा या नहीं ? बस इसी चिंता में बेचारों की निद हराम हो गई होगी पर क्या किया जाय ?)

महाशय। आप मन में से यह बात ही निकाल दो कि भूतपूर्व साजी का यह गालीगलौज भरा पत्र मुझे मिला वर्ना आप अब उस पत्र का जवाब लिखेंगे, वह उत्तर देगा आप वापिस लिखेंग वह वापिस जवाब देगा यह चक्र गोलीनार चलता ही रहेगा आप बिल्कुल निकम्मे बैठे हो तो बात और है चूकि यह निकम्मों का धधा है। अन्यथा आप का काम-धधा अटकेगा, सारी शक्ति इसमे फिजूल की खर्च होगी Simply waste of time and energy मन सारे दिन इन्हीं पत्रों में डूबा रहेगा परिणाम स्वरूप क्या हाथ आयेगा? मन की अशाति, हृदय की जलन और काया में व्यर्थ का तनाव ॥ लाइये, यदि आप का जी नहीं चलता हो तो अशाति के मूल इन दोनों पत्रोको मैं ही फाड डालता हूँ "

वैसे भी एक महीना बीत गया था। जिससे असील का रोप भी उतर गया था और आवेश का आवेग भी बिल्कुल मद पड गया था। और उसमें ऐसी सलाह मिली तब थोडी सी हिचकिचाहट के साथ उसने दोनों पत्र लिकन के हाथों में थमा दिये

मानो वैर की परपरा को फाडता हो वैसे उसने उन दोनों पत्रों को फाड डाला रूट ऑफ द एनिमिटी को दूर कर लिकन ने एक सिद्धात सुनाया।

"किसी व्यक्ति पर बहुत गुस्सा आया हो तो उस पर पत्र लिखो आपका सारा गुस्सा उस पर अकित कर दो उसे शब्ददेह दे दो मगर उस पर कभी एड्रेस मत करो "

सायकोलॉजी के 'टॉक थेरापी' का भी यही सिद्धात है ☞ अपने भावों और उबालको या तो किसी मित्र के सामने या एकान्त में दीवार के सामने कागजों पर उडेल दो 60% क्योर तो उसी से हो जायेगा।

किसीके भी अपराध से जो हमें हानि पहुँचती है गहरा आघात लगता है कालविलब से उसकी असर घटने लगती है यह बात गुजराती लोकोक्ति पर से भी व्यक्त होती है → दु ख नु *ओसड दहाडा* अर्थात् दु ख की औषधि है दिन=कुछकाल व्यतीत होने पर हमारी स्वस्थता आसानी से पैदा होती है, पर [illegible] हार्द है। और स्वस्थता पैदा होने के वाद हम अपनी बात को निगले [illegible] भी समझा पाते हैं सामनेवाले को।

हम क्या करते है?

"कोई व्यक्ति भूल करता है और उसे स्वीकार करवाना" यह ... की चाल है, वैसे ही "हम भूल करे तब उसका स्वीकार नही करना" ... एक अनादि की चाल है ।

अत कोई भी व्यक्ति आपकी भूल निकालता आये तो हम उसका ... बचाव न करे, परतु तुरत ही स्वीकार कर ले, यही हितावह है ... से उसका भी गुस्सा शात हो जाता है और हमें भी सक्लेशो का दोग ...

वरना भूल का स्वीकार करवाने के लिये वह नानाप्रकार ... रहेगा और हम अपने बचाव में मुहतोड जवाब देते ही रहेगे ... के पिछले सबधित-असबधित इतिहास को जोडते ही रहेगे, भूली-बिसरी ... पुन याद दिलाकर एक दूसरे के घांवों को पुन ताजा करते रहेगे ... तकरार खडी होती है वैरभाव वृद्धिगत बनता है और फिर एक दूसरे के दिल में वैर और प्रतिशोध की आग धधकने लगती है इस भयकर आग का निमित्त बहुधा छोटी-सी भूल और उसका अस्वीकार ही होता है ।

जिस आग के कारण एक लाख लोग बेघर हुए उस शिकागो की आग के मूल मे भी इस डेढ अब्ज सेल युक्त मस्तिष्क वाले और साढे पॉच फुटके आदमी की एक छोटी सी भूल ही थी न? प्रगटायी हुई लालटेन इधर-उधर रख कर आदमी चला गया । गाय ने उसे धक्का मारा और आग पूरे शहर मे फैल गई शहर नींद मे मस्तीसे सो रहा था और आग ने अपना काम कर दिया।

अत वैर की भयकर ज्वालाओं से बचने की इच्छावालो को यह बात जैसे ध्यान में लेने जैसी है कि ओन ध स्पोट कभी भूल नहीं कहना" वैसे ही यह एक और नियम नोट कर लेना चाहिये कि *"ओन ध स्पोट कभी अपनी* भूल का बचाव नहीं करना ।"

ता । तू झील

स्वीकार कर लेना, उसी में अपना हित है। आप पूछे तो → 'स्वीकार की भी कोई हद ?' जवाब है → To No Limit आपकी बिल्कुल भूल न भी हो, स्पष्ट रूप से आपकी निर्दोषता आपको भासित भी हो रही हो, और सामने वाला व्यक्ति किसी भयकर गलतफहमी के कारण ही दोषारोपण कर रहा हो तो भी स्वीकार कर लेना। "मेरी भूल हो गई मिच्छामि दुक्कडम्" कोई बचाव नहीं फिर चार-पॉच घटों को बीतने दीजिये। तदनतर अवसर देखकर एकात में उसके पास स्पष्टीकरण पेश कीजिये। यदि On the spot आप स्पष्टीकरण पेश करने जायेंगे तो कलह होने की पूरी सभावना रहेगी। चूकि उस वक्त वह आवेशान्ध होता है। एव "मैंने तुम्हारी भूल निकाली और तू मुझे गलत ठहराना चाहता है?" ऐसे विचार उसके मन को जकड लेते हैं। अत उस वक्त उसके मन मे आवेश के साथ-साथ अभिमान भी जुड जाता है इन दोनों की syndicate हो गई कि खलास। उस वक्त तो आपकी एक भी चलने वाली नहीं

खतरनाक syndicate

कारण यह है कि आवेश हो उस वक्त वह आपकी सत्य बात को भी समझ नहीं पायेगा और कदाचित् समझ भी ले तो मिस्टर अभिमान आकर अपनी टॉग अडा देगा वीच में। अत "अच्छा, तो तुम्हारी भूल नहीं थी।" ऐसे शब्द वह चाहकर भी मुह से निकाल नहीं पायेगा। आपकी लाख युक्तियाँ सच्ची होगी मगर वह जाहिर में उसे स्वीकार नहीं करेगा, बल्कि "मै ने जो दोषारोपण किया हे वह सत्य ही है" इसकी सिद्धि के प्रयास में जमीन-आसमान एक कर देगा।

इस प्रक्रिया में दोनो व्यक्तियों की शक्ति वेस्ट होती हे। न तो कोई समाधान ही मिल पाता है और न कोई फैसला ही होता है। प्रत्युत एक ही काम आगे चलता है उस वक्त क्लेश-कषायों का बढावा ॥

और उसी समय यदि हम किसी तर्क-वितर्क में न उतर कर 'हाँ भैया, भूल हुई' ऐसा स्वीकार कर लेते है तो सामनेवाले व्यक्ति पर भी उसकी असर होती है। चूकि उसे 'यह भूल तुम्हारी ही है' इस बात का करने के लिये विल्कुल मानसिक कष्ट उठाना नही पडा होता है। और वह व्यक्ति भी तो विचारशील हे। वह भी सोचेगा 'कैसा महान् व्यक्ति है यह अपनी भूल का तुरत स्वीकार कर लिया ?" और विचार करते-करते उसे उस सत्य का पता चल जायेगा कि इसमें इस व्यक्ति की ऐसी कोई गभीर भूल थी ही नहीं या परिस्थितियों के कारण ही विवश वन कर इसने ऐसा किया है, मगर

अब हमें यह सोचना है कि →

"हमारी भूल हो तो उस वक्त तुरत स्वीकार कर लेना चाहिये"

2 पहिले हम अपने विषय में यह सोचते थे कि →

"स्वभूल का बचाव करना चाहिये"

तो अब हमें दूसरो के विषय में यह सोचना चाहिये कि →

"सामनेवाले की भूल का बचाव करें," यह हो सकता है, परतु हमें अपनी भूल का कतई बचाव नहीं करना, चूकि भूलका बचाव करना यह हमारी दृष्टि से सामने वाले को काम में आने वाला नियम है अपने लिये नहीं ।

बस इतनी फेरबदली की नहीं कि सारे जीवन में अशाति का स्थान शाति, असमाधि का समाधि और अपमान का स्थान सन्मान ले लेगा

इतना ही नहीं आज दिन तक आप जिनके लिये अप्रिय बने हुए थे उनके लिये प्रिय बन जायेंगे जहाँ जुतिया पडती थी वहाँ अब आप पर फुल की बोछार होने लगेगी । दौर्भाग्य के स्थान पर सौभाग्य आसीन होगा और शत्रुता का स्थान मित्रता ले लेगा यह कोई कम चमत्कार है क्या ? के लाल के जादूई चमत्कार तो काल्पनिक है मगर ये चमत्कार तो जीवत ॥

कुछ भी करना पडे

चाहे कुछ भी करना क्यों न पडे परतु मित्रता खडी होनी ही चाहिए शत्रुता का भाव नष्ट होना चाहिये । वैर की गाठ यदि दिल में रह गई, मिच्छामि दुक्कडम् देकर उसका ऑपरेशन–सफाया नहीं करवाया ते शास्त्रकार भगवत फरमाते है कि धर्म की क्रियाएँ हो जायेगी, परतु धर्म नहीं होगा आराधना नहीं होगी **"जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा, जो न उवसमइ तस्स नत्थि आराहणा"** जो । है, जिसने वैर–वैमनस्यकी गाठ को तोड दी है, उसीकी आराधना है अर्थात् त्मा, आत्माके स्वास्थ्य को प्राप्त करती है ।

जो उपशात नहीं होता है वैर वैमनस्य से मुक्त नहीं होता है उसकी न. नहीं होती है उसकी आत्मा, आत्म–स्वास्थ्य को प्राप्त नहीं कर पाती वञ्चित रहती हे ।

सवच्छरी प्रतिक्रमण का रहस्य

मात्र वीते हुए वरस में वढे हुए कर्म रोग ही नहीं, वीत रही इस वर्तमान की एक जिदगी में वढे हुए कर्म रोग ही नहीं परतु सपूर्ण अतीत काल में जितना यह रोग वढा है उस रोग को मूलसहित उखाड फेकने की ओर सपूर्ण भाव आत्म

देने की ताकत सवच्छरी प्रतिक्रमण रूप दवाई में है ।

हर साल सवच्छरी आती है और जेसे आई वैसी ही चली जाती है।
उस दिन हम प्रतिक्रमण भी करते है- खडे-खडे भी करते है मगर हमारा रोग नेस्तनाबूद हुआ? आरोग्य प्राप्ति में क्या हम ने प्रगति की ?

चमच की कहानी

एक गामठी आदमी का मित्र बम्बई जेसे शहर में रहता था। उस के घर कोई प्रसग आया और उसने स्नेही-स्वजन-मित्रों को आमत्रित किया। भोज का आयोजन किया। उसमें उस गामठी को भी आमत्रित किया। तरह-तरह की वानगी-आइटम्स बनायी। टेबल-कुर्सी पर बैठने की व्यवस्था की गई। केटरर्स के बॉयस् वानगी लाते थे, परोसते थे। मेहमानों ने सब वानगी को बराबर न्याय भी दिया। डटकर खाया। गामठी ने भी डटकर खाया।

भोजनान्ते इस गामठी ने चमच को धो-धूला कर [illegible] से अपनी जेब में डाल दी। पास में बैठे हुए सज्जन को बड़ा आश्चर्य [illegible] चूकि गामठी के चेहरे पर 'चोर की दाढी मे तिनका' वाला [illegible] भी नहीं था। अत सज्जन आदमी ने इधर-उधर घुसपुस करने [illegible] की बजाय सीधा उस गामठी को ही पूछ लिया

"अरे भाई! आपने यह क्या किया?"

"क्यों? क्या किया मतलब?" गामठी ने प्रतिपश्न किया

"जेब मे कुछ भूल से डाला तो नहीं ?"

"भूल से ? नहीं-नहीं मैने तो जानबुझ कर एक चमची ली है [illegible] क्या?" गामठी के पेट में पाप नहीं था। उसने तो जो था वो कह सुनाया।

"मगर आप ने यह ठीक नहीं किया।" सज्जन ने सलाह दी

"नही मेहरबान, मै ने जो किया है वह ठीक ही किया है"

"वो कैसे ?"

"दर असल बात ऐसी है कि कल मेरे पेटमें भयकर दर्द हो रहा था गली के नुक्कड पर जो अस्पताल है उस में गया। डॉक्टर साब ने पेट को इधर उधर दबाया और एक कागज पर इग्रेजी में कुछ लिख कर दिया। मुझ को तो भैया इग्रेजी पढनी आती नहीं काला अक्षर भेंस बराबर। मगर नीचे हिन्दी में लिखा हुआ था भोजन करने के बाद रोज एक चम्मच लेनी" इसलिए मैंने एक चमच ली है"

वेचारा गामठी वह इतना भी नहीं समझ सका कि चम्मच यानी स्टील की नहीं परतु अग्रेजी मे जो प्रीस्क्रीप्शन लिखा हुआ था उस दवाई को केमिस्ट की दुकान से लाकर उस दवाई की एक चमची लेनी थी । अर्थात् दवाई तो केमिस्ट के वहॉ ही रह गई और इधर भाईजानने चम्मच ले ली । इस प्रकार चम्मच लेने वाले का रोगनाश कब ओर कैसे होगा? आप ही सोच लीजिये।।

हम भी गामठी!।

मुझे लगता है कि इस अर्थ में हम भी इस गामठी से मिलते-झुलते है। हम सावत्सरिक प्रतिक्रमण करते है मगर हम उसे दवाई लेने रूप करते है या चम्मच लेने रूप ? वेर-वैमनस्य मिटा देना दिल की डायरी में किसी का नाम Blackलिस्ट में नहीं रखना, पापों की आलोचना शुद्धि कर लेनी- यह सब दवाई लेना रूप है और वैसे किये बिना ही सिर्फ उपाश्रय जाकर तीन घटे कटासनपर (बेठकापर) वैठ जाना 40 लोगस्स का काउसग्ग कर लेना, मुहपत्ति-वादणा की क्रिया कर लेना इस तरह प्रतिक्रमण में यदि हाथ-पॉव हिलाने रूप चम्मच ही लेते रहेगे और विषय कषायों को नहीं हिलायेंगे वैरवैमनस्यों का समूलच्छेद नहीं करेगे या तदर्थ तो कदम भी आगे नहीं वढायेंगे तो कर्मरोग कैसे नष्ट होगा?

अत सावत्सरिक प्रतिक्रमण का रहस्यार्थ जो है कि "शत्रुता के भावो को दफना कर, मैत्री भावना को विकसित करे" इस हार्द को अपने जीवन मे अपना कर शीघ्रातिशीघ्र हम सभी भाव आरोग्य को प्राप्त करे । यही शुभ कामना

परमपवित्र श्री जिनाज्ञाविरुद्ध कुछ भी लिखा हो तो

त्रिविध-त्रिविध मिच्छामि दुक्कडम्

शुभ भवतु श्री श्रमणसघस्य